॥ ओ३म् ॥

आर्यसमाज अजमेर की स्वर्णजयन्ती का द्वितीय रत्न

वेद में स्त्रियाँ

लेखक—

विद्यावाचस्पति गणेशदत्त शर्मा गौड़,

आगर (मालवा)

प्रकाशक—

आर्य-साहित्य मण्डल लिमिटेड, अजमेर.

प्रथमवार १००० | सं० १९८९ वि० | मूल्य ॥)

ॐ ओ३म् ॐ

आर्य्यसमाज अजमेर की स्वर्णजयन्ती का द्वितीय रत्न

वेद में स्त्रियाँ

लेखक—

विद्यावाचस्पति गणेशदत्त शर्मा गौड़,

आगर (मालवा)

प्रकाशक—

आर्य-साहित्य मण्डल लिमिटेड, अजमेर

प्रथमवार १००० | सं० १९८९ वि० | मूल्य ॥)

श्री बाबू मथुराप्रसाद शिवहरे के प्रबन्धसे
दी फाइन आर्ट प्रिंटिंग कॉटेज,
अजमेर में मुद्रित.

विद्यावाचस्पति गणेशदत्त शर्मा गौड़

स्वर्गता अनुजा श्री हेमलता देवी

दुर्गाबाई

की

पुण्य-स्मृति में

समर्पित

शान्तिकुटी,
वसन्त पञ्चमी
वि० संवत् १९८९

गणेशदत्त शर्मा,

विषय-सूची

शुद्धाशुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	१२	मनोरञ्ज	मनोरञ्जन
९	१९	वेद	वेद
११	१८	गरीयसीं	गरीयसी
१४	७	इसकी	इसके
१९	७	स्त्री	स्त्री
,,	१६	हो	हों
२५	३	वेह	वेद
३३	२१	मंसा	मंशा
३३	२४	सुनावे	सुनावे
४३	६	पशुअ	पशुओं
४६	३	कोग्य	योग्य
४६	८	के छिए	के लिये
,,	१२	कथन को	फलन के
,,	१२	अधिकारी	अधिकारों
५१	५	या	यहां
५४	१४	वरसा का	वर्षा का
६८	०	अठि ले हैं	अठिले हैं
८३	३	कवि अपनी	कवि भी अपनी
८८	६	"ब्रह्म" को अर्थ	"ब्रह्म" के अर्थ
११०	८	जो लोग	लोगों को
१४५	७	ध्यान न रखो	ध्यान रखो
१५९	१७	विधवाएं	विधवाओं द्वारा

॥ ओ३म् तत्सत् ॥

उपोद्घात

अति प्राचीन वैदिक काल में मन्त्रद्रष्टा ऋषि केवल पुरुष ही नहीं प्रत्युत स्त्रियें भी होती थीं। वेदमन्त्रों के साथ उल्लिखित ऋषियों के नामों में ऋषि स्त्रियों के नाम भी मिलते हैं। अतिप्राचीन यज्ञ काल में यजमान पत्नियों के सहयोग के बिना कोई भी यज्ञ सफल नहीं हो सकता था अथवा नहीं माना जाता था। उपनिषद् काल में भी गार्गी जैसी ब्रह्मवादिनी देवियों का उल्लेख मिलता ही है। विदेह जनक के समय में अन्य भी उग्र ब्रह्मवादिनियों का उल्लेख महाभारत में मिलता है। रामायण के समय में 'अपाला' नामक एक ब्रह्मवादिनी का उल्लेख आता है। इन बातों से स्पष्ट है कि उस उस समय में देवियों को अपनी बुद्धि के विकास के लिये पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त थी। वर्त्तमान स्मृतियों में भी सद्यो वधू और ब्रह्मवादिनी नामक दो प्रकार की स्त्रियों का उल्लेख आता ही है। वेदान्त में 'मंदालसा' के नाम को कौन भुला सकता है। वीरता में महाभारत की 'विदुला' प्रसिद्ध है ही। मण्डन मिश्र की विदुषी अर्धाङ्गिनी को भी कोई कैसे भुला सकता है। इसी प्रकार वेद, स्मृति, उपनिषद् धर्म शास्त्र, की दृष्टि से उस समय में स्त्रियों की दशा प्रत्येक विभाग में पूर्ण समुन्नत थी। मनुस्मृति में—

'न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति'

ऐसा एक वाक्य मिलता है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि स्त्रियों को शिक्षा-दीक्षा न दी जावे। इसका अर्थ यही है कि ऐसी स्त्रियें जिनकी बुद्धि विकासित नहीं हुई, जिन्होंने परिपक्व विज्ञान नहीं प्राप्त,

वान् सन्तान (१७) सदाशयता और मन की पवित्रता (१८) ईश्वरोपासना (१९) सन्तानोत्पादन (२०) आनन्दित रहो (२१) स्त्रियों के विचार (२२) स्त्रियों के विचार (२३) स्त्रियों की चालढाल (२४) घी दूध का प्रबन्ध (२५) बाल विवाह निषेध (२६) गृहस्थाश्रम की नौका (२७) तन मन धन पति की सेवा में (२८) चरखा सूत और वस्त्र (२९) पुरुषों से श्रेष्ठ (३०) यज्ञ करने की आज्ञा (३१) विधवाओं का कर्त्तव्य। भिन्न भिन्न प्रकरणों के इन उपर्युक्त शीर्षकों से ही स्पष्ट है कि इस ग्रन्थ में किन किन विषयों का समुल्लेख है। हम यदि प्रत्येक बात की समालोचना करने लगेंगे तो हमारी विवेचना से ही ग्रन्थ का आकार द्विगुण हो जायगा। लेखक ने थोड़े में बहुत लाने का सफल प्रयत्न किया है और निःसंकोच वे बधाई के पात्र हैं।

परम कारुणिक भगवान् ने सृष्टि कार्य पर दृष्टि रखकर जहाँ पुरुषों में कठोरतादि गुण रक्खें हैं वहाँ स्त्रियों में कोमलतादि गुणों का विशेष-प्रवेश रक्खा है। असली सम्पूर्णता पुरुष और स्त्रियों के गुणों को मिलाकर ही हो सकती है। इसीलिये विवाहिता स्त्री के लिये 'अर्द्धाङ्गिनी' पद अत्यन्त समुचित है। किन्हीं गुणों का प्राधान्य पुरुषों में, तो किन्हीं गुणों का प्राधान्य स्त्रियों में देखने को मिलता है। भगवान् की सृष्टि की विचित्र दशा को अनुभव करते हुये कहना पड़ेगा कि उसने एक भी सर्वाङ्गसुन्दर सर्वाङ्ग परिपूर्ण वस्तु नहीं बनायी, जैसे विभिन्न प्रकार के पुष्पों में, किसी में गंध है तो रूप नहीं, रूप है तो गन्ध नहीं, किसी में दोनों हैं तो चिरकालक्षमता नहीं, किसी में वर्ण की स्थायिता नहीं, इसी प्रकार सब वस्तुओं की दशा है। वैदिक प्रणाली में शिक्षा विषय में 'माता' को ही सबसे श्रेष्ठ संमानास्पद-पद दिया गया है। क्योंकि असली तो बच्चा जो कुछ बनता वह माता के गर्भ में और गोद में ही बनता है। फिर पिता और गुरु शिक्षा दीक्षा के संपुट भले ही दिया करें। सबसे पहले बच्चा

वेद में स्त्रियाँ

(१) गृह-कार्य

ॐ इमा अगुर्योषितः शुंभमाना उत्तिष्ठ नारि तवसं रभस्व ।
सुपत्नी पत्याप्रजया प्रजावत्या त्वागन् यज्ञः प्रति कुम्भं गृभाय॥
अथर्व० ११ । १ । १४

(इमाः) ये सब (शुंभमानाः) शुभ गुणों से युक्त (योषितः) स्त्रियां (आअगुः) आ पहुंची हैं। हे (नारि) स्त्री, तू (उत्तिष्ठ) खड़ी हो (तवसं) बल (रभस्व) प्राप्त कर। (पत्या) पति के साथ (सुपत्नी) उत्तम पत्नी बनकर और (प्रजया) शुभ सन्तान से (प्रजावती) उत्तम सन्तान वाली होकर रह। यह (यज्ञः) गृह यज्ञ-गृहस्थ व्यवहार का शुभ कर्म (त्वा) तेरे पास (अगन्) आ गया है, अतएव (कुम्भं) घड़ा (प्रति गृभाय) उठाले और गृह कार्य कर।

(१) "जब कि बड़ी बूढ़ी, गुणवती, विदुषी एवं सुशीला स्त्रियां अथवा स्त्री अपने घर पर आवें, तब स्त्रियों को चाहिए, कि उन आई हुई स्त्रियों के स्वागत सत्कार के लिए खड़ी हो जायँ।" मूर्खा तथा असभ्या की तरह बैठी न रहें अथवा उस ओर से मुँह न फेर लें। उन स्त्रियों को यथायोग्य प्रणाम करें, जिससे बल की वृद्धि हो। मनुने भी कहा है कि:—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्॥

लक्ष्मी हाथ बाँधे खड़ी रहती है, और मृत्यु भी ऐसे व्यक्ति से घबराती है। कहा भी है—

उद्योगिनं पुरुषसिंह मुपैति लक्ष्मीः।

वर्त्तमान युग में आम शिकायत है कि स्त्रियाँ दिन प्रतिदिन आलसी बन रही हैं। इसका एकमात्र कारण आरामतलबी है। आराम कौन नहीं चाहता ? सभी की इच्छा होती है कि आराम करें। पड़े रहें, खाते रहें और मौज मारें। किन्तु जब से आराम में ज्यादती आगई, तभी से यह दुर्दशा भी आई ! आराम करना चाहिए कार्य की थकावट उतारने के लिए। श्रम तो किया ही नहीं, फिर आराम कैसा ? भूख तो है ही नहीं, भोजन कैसा ? इस आरामतलबी को सुस्ती कहना चाहिए। यदि मनुष्य परिश्रम से मुँह छुपायेगा, तो एक दिन महा आलसी होकर निकम्मा हो जायगा। शरीर पीला, निर्बल और रोगी बन जायगा। भोजन न पचेगा। डॉक्टर, वैद्यों और हकीमों के आने जाने का ताँता बँधा रहेगा। रात दिन दवाओं से जीवन व्यतीत करना पड़ेगा। इस प्रकार यह आनन्दमय जीवन क्लेशमय बनकर भाररूप हो जायगा। ऐसे जीवन से मरना अच्छा है। इसी लिए वेद कहता है कि **"स्त्रियो ! गृह-कार्य करो, उससे मुँह न मोड़ो।"**

गृह कार्य को वेद ने 'यज्ञ' कहा है। इसकी पवित्रता, उत्तमता इस "यज्ञ" शब्द से समझी जासकती है। स्त्रियों को चाहिए कि अपना गृह-कार्य, बिना आलस्य के, यज्ञ समझ कर, बड़े आनन्द एवं उत्साह से करें। घर के काम को भार मानकर बेगार के रूप में करने से उसे "यज्ञ" नहीं कहा जा सकता। उसे शुभ तथा कर्त्तव्य कर्म समझ कर ही करना चाहिए। गृह-कार्य स्त्रियों के लिए व्यायाम है। व्यायाम से शरीर नीरोग और बलवान् होता है। घर की चहारदीवारी में बन्द रहने वाली स्त्रियों को घर का काम धन्धा ही स्वस्थ रखता है। आजकल

बहुधा देखा गया है कि गृह-देवियाँ अपने हाथों से रोटी बनाना, तथा अपने बच्चों को खिलाना भी अच्छा नहीं समझतीं! यह बहुत ही बुरा है। ऐसी आरामतलबी का भयङ्कर परिणाम स्त्रियों को प्रसूत काल के बाद भोगना पड़ता है। यहाँ तक कि जीवन से भी हाथ धो बैठने की नौबत आ जाती है। पानी लाना, घर के सब कामों में अच्छा मिहनत का काम है, इस लिए वेद कहता है कि "घड़ा उठा कर घर का पानी भरो।"

प्रत्येक गृह के साथ ही साथ एक छोटी सी पुष्प-वाटिका भी होनी चाहिए, जिसे सँवारने का काम गृहिणी के हाथ में हो। पहले ज़माने में ऐसा ही होता था। स्त्रियाँ वाटिका को सींच कर उन्हें हरी-भरी रखा करती थीं। जिन्होंने शकुन्तला का आख्यान पढ़ा है, उन्हें इस बात का अच्छी तरह पता है कि, शकुन्तला अपने हाथों से ही पुष्प वाटिका के वृक्षों को पानी सिंचाया करती थी। वृक्षों को पानी सिंचाने में मनोरञ्जन का मनोरञ्जन और साथ ही काफ़ी परिश्रम भी हो जाता है। स्त्रियों को चाहिए कि गृह-कार्य में कदापि सुस्त न रहा करें।

---

(२) भोजन बनाना।

" ॐ शुद्धाः पूता योषितो यज्ञिया इमा आपश्चरुमव-सर्पन्तु शुभ्राः। अदुः प्रजां बहुलान् पशून् नः पक्तौदनस्य सुकृतामेतु लोकम्।" अथर्व० ११।१।१७॥

(शुद्धाः) शुद्ध (पूताः) पवित्र (शुभ्राः) और शुभ्र वर्ण वाली (यज्ञियाः) पूजनीय (इमाः योषितः) ये स्त्रियाँ (आपः चरुं) जल और अन्न के कार्य में (अवसर्पन्तु) प्राप्त हों। ये स्त्रियाँ (नः) हमें (प्रजां) सन्तान (अदुः) देती हैं तथा (बहुलान् पशून्) बहुत पशुओं को सँभालती हैं। (ओदनस्य पक्ता) भात आदि अन्न का

पकाने वाला (सुकृतां) उत्तम कर्म करने वालों के (लोकं) स्थान को (एतु) प्राप्त हो।

(१) वेद कहता है कि **"स्त्रियों को चाहिए कि वे शुद्ध, पवित्र निर्मल और पूजनीय बन कर अपने गृहकार्य में संलग्न हों। घर में पानी और अन्न का उत्तम प्रबन्ध रक्खें।"** स्त्रियों को शुद्ध पवित्र और निर्मल रहने की आज्ञा है। वर्त्तमान काल में देखा जाता है कि, स्त्रियों को जितना ज़ेवर और अच्छे वस्त्रों से प्रेम है, उतना शुद्धता अथवा पवित्रता से नहीं। ज़ेवर और वस्त्रों के लिए रात दिन गृह-कलह चला करता है, किन्तु शुद्धि की ओर जो कि मनुष्य का पहला भूषण है, हमारी बहनों का बहुत कम ध्यान जाता है। ज़ेवर और बहुमूल्य गोटे किनारी के रेशमी वस्त्र, गन्देपन के मुख्य कारण हैं। अधिक ज़ेवर लादने वाली स्त्रियाँ प्रायः गन्दी रहा करती हैं। आपने देखा होगा कि जिन अङ्गों पर ज़ेवर रहता है, वे भलीभाँति धो-पोंछ कर शुद्ध नहीं किए जा सकते। नाक में लौंग, काँटा या नथ पहन लेने से नाक की शुद्धि अच्छी तरह नहीं हो सकती। छोटी उम्र की बालिकाओं को देखिए, जिनकी नाक छेद दी गई, वे अपनी नाक अच्छी तरह साफ़ नहीं रख सकतीं। हाथों पर चूड़ियाँ पहने रहने के कारण पहुंचा साफ़ नहीं हो सकता। पैरों में चाँदी के कड़े वग़ैरह होने से तथा पैरों की अंगुलियों में चुटकी बिछुए रहने से ये स्थान शुद्ध नहीं रहते, बल्कि काले और मैले हो जाते हैं। गले के स्वर्णाभूषण, ठुस्सी, बजट्टी, गलसरी, जो सूत या रेशम के साथ पिरोए जाते हैं, बुरी तरह मैले हो जाने पर भी धारण किए जाते हैं। इससे शरीर में चर्म-रोगों की सृष्टि तो होती ही है, किन्तु साथ ही पसीने वग़ैरह की बदबू पास बैठने वाले लोगों को भी दिक करती है। इसी तरह गोटे किनारी के वस्त्र तथा रेशमी वस्त्र धोए नहीं जाते। क्योंकि धोने से उनकी चमक-दमक और सुन्दरता पर

पानी गिर जाता है, इसलिए वे अच्छा मैले हो जाने पर ही धोए जाते हैं। इन बातों से स्पष्ट है कि ज़ेवर और बहुमूल्य कपड़े मैले बने रहने में बड़े ही सहायक होते हैं।

स्त्रियों को चाहिए कि वे शुद्ध और पवित्र रहा करें। शरीर के प्रत्येक अवयव को जल से धोकर शुद्ध कर लिया करें। मुँह से बदबू न आवे, इस लिए दाँत खूब अच्छी तरह साफ़ करने चाहिएं। जो स्त्रियाँ अपना मुख गन्दा रखती हैं, उनकी सन्तान अल्पायु एवं रोगी होती है। इस लिए मुंह को हमेशा शुद्ध रखने का ध्यान रहे। शय्या से उठते ही और सोने के पहले, अपने दाँतों को अच्छी तरह माँज कर जिह्वा, तालु और कण्ठ का मैल साफ़ कर देना चाहिए। स्नान अधिक पानी में खूब अच्छी तरह रगड़-पोंछ कर करना चाहिए। दो लोटे पानी डाल लेने का नाम स्नान नहीं है। स्नान नाममात्र के लिए करना मूर्खता है, स्नान तो शुद्धि के लिए अच्छी तरह करना चाहिए। वस्त्रों से बदबू न आवे, इस लिए वस्त्रों को अच्छी तरह साफ़-सुथरे रखना चाहिए। स्त्रियों के सिर पर बड़े बड़े बाल रहते हैं, अतएव उनकी शुद्धि बहुत ज़रूरी है। बालों को कई दिनों के लिए बाँध रखने से गन्दगी पैदा होती है। बाल यदि नित्य धोए न जाएँ, तो कंघी से तो अवश्य ही प्रतिदिन साफ़ करने चाहिएं। कई जातियों में, बालों में घी डालने का रिवाज़ है। तैल डालना अशुभ माना जाता है। यह एक मूर्खता भरा ख़याल है। घी डाल कर बालों को बाँध रखने से उनमें बड़ी दुर्गन्ध आने लगती है। चौथे पाँचवें दिन बालों को धो डालना चाहिए और उनमें कोई सुगन्धित तैल डाल कर सँवार रखना चाहिए। सिर में जूएँ और लीखों का होना गन्दगी का प्रमाण है।

जिस तरह बाह्य शुद्धि की ज़रूरत है, उसी तरह आन्तरिक शुद्धि की भी ज़रूरत है। जो बाहर से तो शुद्ध हो किन्तु अन्दर अपवित्र मन वाला हो

ऐसे मनुष्य को "विषकुम्भं पयोमुखम्" की उपमा दी जा सकती है। जिसके पवित्र शरीर में पवित्र आत्मा का निवास है, वही सच्चा शुद्ध और पवित्र व्यक्ति कहाता है। स्त्रियों को चाहिए कि वे छल, कपट, द्रोह, दम्भ, ईर्ष्या, शठ, चोरी, दगा, फ़रेब वगैरह को अपने हृदय से निकाल दें। गर्मी की मौसिम में पसीना आदि दूषित पदार्थ शरीर से निकलने के कारण शरीर शीघ्र ही बदबूदार हो जाता है। पास से निकलने में भी बदबू आती है। हवा के साथ उड़कर वह बदबू दूर तक लोगों के दिमाग़ को कष्ट पहुंचाती है। स्त्रियों को चाहिये कि वे सदा शुद्ध और पवित्र रहें तथा सुगन्धित पदार्थों को शरीर में लगावें।

जो स्त्रियां शुद्ध और निर्मल हैं, वे अच्छी समझी जाती हैं। स्त्रियों के लिए सुन्दरता और शुद्धता आवश्यक हैं। शुद्ध और पवित्र स्त्री अधिक मान्य होती है। स्त्रियों के लिए गौर वर्ण लोगों ने अच्छा माना है। परन्तु कभी कभी देखा जाता है कि गोरे रङ्ग के चेहरे की बनावट ठीक न होने से वह मोहक नहीं रहता और काले वर्ण का चेहरा बनावट में ठीक होने के कारण आकर्षक हो जाता है। हमारे देश में नहीं, किन्तु पश्चिमीय देशों में स्त्रियां अपने मुँह पर खूबसूरती लाने के लिए पाउडर लगाती हैं। वहाँ लाखों करोड़ों रुपयों का पाउडर प्रतिवर्ष रूप रङ्ग बनाने के लिए खर्च होता है। हमारे भारत की वेश्याएं भी मुँह पर पाउडर लगाती हैं। वेद इस प्रकार की बनावटी खूबसूरती का विरोधी है। वह सच्चा रूप लावण्य रखने की आज्ञा देता है। पाउडर के प्रभाव से स्त्रियों के मुँह की प्राकृतिक-मनोहरता नष्ट हो जाती है। उन्हें ऐसी कृत्रिम सुन्दरता से बचना चाहिए।

जो स्त्रियां सर्वगुण सम्पन्न हैं, वे पूजनीय हैं। पूजनीय का अर्थ है— आदरणीय, माननीय, इत्यादि। मनुजी ने भी कहा है कि:—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥

जिस घर में स्त्रियों का आदर होता है उस घर में देवता वास करते हैं, और जहाँ इनका अनादर होता है, वहां सब काम निष्फल होते हैं। तात्पर्य यह है कि, अपनी गृहस्थी के कल्याण की इच्छा से उन्हें शुद्धाचरण तथा पवित्राचरण द्वारा घर में इज़्ज़त बढ़ानी चाहिए। जिन घरों में आदरणीय गृह-देवियों का उचित आदर होता है, वे शान्ति-निकेतन बनकर स्वर्गीय सुखों के भण्डार बन जाते हैं। इसके विपरीत जहाँ गन्दी, मैली, भ्रष्टाचार वाली, कलहवती, कर्कशा पत्नी होती है वहां धीरे-धीरे नाश होने लगता है।

जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना ।
जहाँ कुमति तहँ विपति निधाना ॥

आगे वेद कहता है कि केवल शुद्ध, पवित्र, रूपवान् और पूज्य बन कर ही न बैठ जाओ, बल्कि इतना होने पर भी अपने गृह का काम जैसे पानी लाना और रोटी वगैरह बनाना नहीं छोड़ना चाहिए। स्त्रियों में अब पश्चिमीय बू आती जा रही है। वे अब रोटी बनाना, पानी लाना, चौका बर्तन करना अपना अपमान समझती हैं। किन्तु ऐसा मान लेना भयङ्कर भूल है। भारतीय स्त्री-धर्म में और विदेशीय स्त्री-धर्म में ज़मीन आसमान का अन्तर है। हमारे देश का नारी-धर्म अत्यन्त पवित्र और स्वाभाविक है इसे विदेशों की नकल न करनी चाहिए। स्त्रियों के लिए रोटी वगैरह पदार्थ बनाकर खिलाने की जो उत्तम प्रथा हमारे देश में है वह बड़ी ही अच्छी है। स्त्रियाँ अपने पुत्र, पुत्री, पति, सासु, श्वशुर, देवर आदि के लिए जो पदार्थ बनायेंगी, वे अत्यन्त सुन्दर और पवित्र होंगे। इस प्रकार तैयार किया हुआ भोजन अत्यन्त लाभदायक होता है। इस लिए पानी लाना, चौका बर्तन करना आदि, घरेलू काम धन्धों की आदत

हाथों स्वयं करने चाहिएं। भोजन बनाने के लिए, चक्की द्वारा अन्न पीसना पड़ेगा, मसाले वगैरह भी कूटने पीसने पड़ेंगे ही। दाल तैयार करने के लिए दलना, कूटना, फटकना वगैरह काम भी करने पड़ेंगे। चावल और जौ आदि का छिलका कूटकर निकालना होगा। बाजरा वगैरह अन्न भी कूटकर शुद्ध करना पड़ेगा मिहनत होने से स्त्रियों का स्वास्थ्य ठीक रहेगा। चीज़ें सब अच्छी, स्वच्छ, सुन्दर और सस्ती तैयार हो जायँगी। पुरुष वर्ग का एक काम हलका हो जायगा और वे कमाने में लगे रहेंगे। इनकी तैयारी में जो मज़दूरी देनी पड़ती, वह बच जायगी। काम में लगे रहने से समय सहज ही में कट जायगा। इन सब बातों पर ध्यान देकर स्त्रियों को चाहिये कि वे अपना समस्त-गृह कार्य आलस त्याग कर सर्वदा किया करें।

(२) "ये स्त्रियां हमें सन्तान देती हैं"। वेद कहता है कि ऐसी शुद्ध, उत्तम रूप वाली, कर्त्तव्यपरायणा मिहनती स्त्रियाँ जो सन्तान उत्पन्न करती हैं, वे सुसन्तान होती हैं। सुस्त और आलसी स्त्रियों की औलाद भी वैसी ही निकम्मी होती हैं। स्त्रियां सन्तान उत्पन्न करती हैं, अतएव इनका आदर विशेषरूप से होता है। तभी कहा जाता है कि—

जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी

अच्छी जननी ही इस मान के क़ाबिल हैं। जननी बनने के लिए योग्यता की आवश्यकता है। जो स्त्रियाँ योग्यता पाकर ही माता बनती हैं, वे सच्ची माताएं कहलाती हैं। संसार में उनका आदर होता है। स्त्रियों को चाहिये कि सुसन्तान उत्पन्न करें।

(३) "गौ आदि पशुओं की देख भाल रक्खें"। वैसे तो "पशुपालन" वैश्य जाति का कर्म माना गया है, किन्तु यह घरेलू धन्धा भी है शक्ति को बढ़ाने के लिए अथवा शरीर को दृढ़ और पुष्ट रखने के

लिए घर में दुधारू पशुओं का पालन एक ज़रूरी बात है। उपनयन संस्कार के अधिकारी, द्विज लोगों को तो गौ पालना एक अनिवार्य बात है। क्योंकि बिना गोघृत के पञ्चयज्ञों में से कोई यज्ञ नहीं हो सकता। यह पशुपालन का धन्धा स्त्रियों का ही है। क्योंकि यदि पुरुषवर्ग ढोरों की देख रेख में प्रातः सायं अपना समय गुज़ार दिया करें, तो फिर उन्हें खाने कमाने तथा आराम करने का समय ही न मिलेगा। इसलिए घर के ढोरों की देख भाल स्त्रियों के हाथ में ही होनी चाहिए। घर आए पशु को बाँध देना, प्रेम से उस पर हाथ फेरना, खाने को अच्छा चारा, दाना और जल देना तथा वक्त पर दूध दुहलेना, यह सब काम स्त्रियाँ कर सकती हैं। उनके गोबर के कण्डे थाप देना या नौकर वगैरह से थपवा देना चाहिए। पशु-सेवा नौकरों के भरोसे कभी न छोड़ देनी चाहिए। गृह-स्वामिनी को स्वयं अपने हाथों गोसेवा करनी चाहिए। गो-सेवा करने वाली स्त्रियां सदा सुखी और आनन्द में रहती हैं। गोसेवा का महात्म्य वर्णन किया जाय, तो एक अलग पुस्तक तैयार हो सकती है। वह इस निबन्ध का विषय न होने से इस पर अधिक लिखने का हमें कोई अधिकार नहीं। तात्पर्य यह है कि स्त्रियां को अपना परम-सौभाग्य समझना चाहिए कि गोसेवा का अत्यन्त पवित्र कार्य उनके सुपुर्द किया गया है। प्रत्येक स्त्री का कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह अपने घर में गौ रक्खे और तन-मन-धन से उसकी खूब सेवा करे। गोदुग्ध अमृत के समान होता है। छोटे-छोटे बच्चों की यह सर्वोत्तम खुराक है। अपने बच्चों को पालने के लिए, अपने पति के शरीर को सुदृढ़ एवं दीर्घ- जीवी बनाने के लिए स्त्रियों को चाहिए गो-पालन का काम अपने घर में अवश्य रक्खें। पहले समय में हरेक घर में गौएं रहती थीं। जिस घर में गो-पालन नहीं होता वह घर अभागा गिना जाता था। महाभारत में कथा है कि बालक अश्वत्थामा ने जब अपने पिता द्रोणाचार्य से पीने के लिए दूध माँगा, तब अपने घर में गौ न होने से उन्हें असह्य दुःख हुआ। वे गौ लेने के लिए पाञ्चालराज द्रुपद के दर-

चार में गए। नन्द जी के यहाँ ९ लाख गौएँ थीं, जिन्हें चराने तथा खिलाने के लिए अनेक गोप नियुक्त थे; फिर भी अपने घर ख़र्च के लिए दूध स्वयं यशोदा देवी निकाला करती थीं। इन सब बातों से यह सिद्ध होता है कि प्रत्येक घर में गौ का होना आवश्यक है और उसकी देख रेख गृह-स्वामिनी द्वारा होनी चाहिए। यही आज्ञा वेद की है।

(४) "चावल आदि अन्न पकाकर तैयार करने वाला, उत्तम कर्म करने वालों के स्थान को प्राप्त हो"। इस वाक्य में यह ध्वनि निकलती है कि भोजन बना कर खिलाना स्त्रियों के लिए निन्द्य कार्य नहीं है। अर्थात् यह इतना उत्तम कार्य है, कि जो व्यक्ति यह कार्य उत्तमता से करता है, वह श्रेष्ठ समझा जाता है। उत्तम पाक बनाने की विद्या प्रत्येक स्त्री को अवश्य आनी चाहिए। बुरा-भला भोजन बना कर घर के लोगों को खिला देने से ही काम न चलेगा, बल्कि श्रेष्ठता इसी में है कि भोजन उत्तम, बलवर्द्धक, गुणकारक, और सुस्वादु हो। जो स्त्रियां पाक-विद्या में प्रवीण हैं, वे उत्तम गिनी जानी चाहिएं। ऐसी स्त्रियां धन्यवाद तथा प्रशंसा के योग्य हैं। आजकल के फैशन को पसन्द करने वाली स्त्रियाँ इस पाक-क्रिया को, घृणित तथा मज़दूरों का काम समझती हैं। यह भूल है, इससे स्त्री जाति की अवनति होगी। वेद को यह अभीष्ट नहीं कि गृहस्वामिनी तो आराम करें और नौकर अथवा नौरियाँ रोटी पका कर उन्हें खिला दिया करें। वेदों की स्पष्ट आज्ञा है कि रोटी बना कर खिलाना, तथा चौका बर्तन करना स्त्रियों का ही काम है।

---

(३) पशुपालन।

"ॐ अभ्यावर्तस्व पशुभिः सहैनां प्रत्यङेनां देवताभिः सहैधि। मात्वा प्रापच्छपथो माभिचारः स्वेक्षेत्रे अनमीवा विराज।" अथर्व ११।१।२२॥

(पशुभिः सह) पशुओं के साथ (एनां) इसको (अभ्यावर्तस्व) चारों ओर घूमो और (देवताभिः सह) देवताओं के साथ (एनां) इसके प्रति (प्रत्यङ्) उन्नति करता हुआ (एधि) प्राप्त हो। (शपथः) गाली, शाप तथा (अभिचारः) व्यभिचार (त्वा) तुझे (मा) न (प्रापत्) प्राप्त हों। (स्वेक्षेत्रे) अपने क्षेत्र में (अनमीवा) नीरोग होकर (विराज) शोभित हो।

(१) " पशुओं के साथ इसकी चारों ओर घूमो और देवताओं के साथ उन्नति करके आगे बढ़ो। " वेद का यह वाक्य स्त्रियों के लिए उपदेश करता है कि पशु-सेवा से घृणा मत करो, बल्कि उनके पालन में आनन्द मानो। पशुओं से इतना प्रेम हो कि वे तुम्हारे साथ-साथ लगे फिरें; अर्थात् पशु आज्ञानुवर्ती हों। वे अपनी मालकिन को एक क्षण के लिए भी न छोड़ें। यदि गृह-स्वामिनी यज्ञशाला में जाय, तो वे भी यज्ञशाला की चारों ओर रहें। इस प्रकार देवताओं, अर्थात् धार्मिक पुरुषों, सज्जनों, तथा परोपकारी महापुरुषों के साथ रह कर अपनी उन्नति में आगे बढ़ो। यज्ञशाला में वेदज्ञाता पुरुषों के उपदेशों को श्रवण कर स्त्री जाति को उन्नति करनी चाहिए। पशु-पालन कर उनसे घृत प्राप्त करो, जिससे यज्ञ कार्य का सम्पादन हो सके। यज्ञ में विद्वान् लोग आवेंगे, उनके उपदेशामृत का पान कर अपनी आत्मा को उन्नत तथा पवित्र बनाओ। वेद इस लिए बारम्बार गौ आदि पशुओं के पालने की आज्ञा देता है और इस कार्य को स्त्रियों का धन्धा बताता है। स्त्रियों को चाहिए कि अपने कल्याण के लिए अपने घर में गौ आदि पशुओं को अवश्य रक्खें और उनसे लाभ उठावें।

(२) " गाली, शाप और व्यभिचार तुझे प्राप्त न हों। " स्त्रियों को चाहिए कि अपने मुख से किसी के लिए गाली, अपशब्द आदि कदापि न निकालें। किसी के लिए अपने दिल में बुरे विचार रख

कर उसका अशुभ चिन्तन नहीं करना चाहिए। इसमें अहिंसा तत्व का उपदेश है। मन, वचन और कार्य से किसी को कष्ट पहुंचाना हिंसा मानी गई है। वेद कहता है कि किसी को गाली मत दो। शाप मत दो। गाली आदि कटु वचन प्रायः क्रोध में निकलने लगते हैं। इसका विचार रक्खो कि क्रोध के झोंके में कहीं तुम्हारे मुख से किसी के प्रति बुरे शब्द न निकल जायँ। क्रोध बहुत बुरी वस्तु है। उस वक्त मनुष्य की बुद्धि, विचार, ज्ञान, विवेक, विद्वत्ता, धार्मिकता आदि सभी नष्ट हो जाते हैं। भले बुरे का विचार जाता रहता है। इसी लिए शरीरस्थ छः शत्रुओं में इसे भी रक्खा गया है। इसे साधारण न समझना चाहिए। क्रोध से मनुष्य के स्वास्थ्य को भी भारी धक्का पहुंचता है। क्रोध के वक्त रक्त का रङ्ग बदल जाता है। इससे धर्म की भी हानि होती है—

"धर्मक्षयकरः क्रोधस्तस्मात्क्रोधं परित्यजेत्।"

तात्पर्य यह है कि क्रोध के वशीभूत होकर, अपने मुँह से कभी भूल कर भी गाली गलौज़ अथवा बुरे वचन न निकालो। किसी को, राँड, निपूती आदि कड़े वचन मत कहो। यदि कोई तुमसे ऐसे कड़े शब्द बोले, तो चुपचाप सुन लेने की आदत डालो। उसे कड़े शब्द बोल कर अपनी वाणी को अपवित्र मत करो। इसी में तुम्हारी भलाई है। जबान की योग्यता और अयोग्यता से ही मनुष्य के स्वभाव का अनुमान होता है। जो प्रेम पूर्वक बोलते चालते हैं, वे ही सज्जन भले माने जाते हैं, और जो भाषण में निठुरता रखते हैं, वे निन्द्य एवं दुर्जन गिने जाते हैं।

"तुलसी" मीठे वचन से सुख उपजत चहुँ ओर।
वशीकरण इक मन्त्र है परिहर वचन कठोर॥"

गोस्वामी तुलसीदासजी का यह वचन प्रत्येक स्त्री को याद रखना चाहिए। यदि किसी को अपने वश में रखना हो तो मीठा बोलना सीखो।

यह सर्वोत्तम "वशीकरण-मन्त्र" है। यदि आप की इच्छा हो कि पति हमारे वश में रहें, तो सर्वदा मीठी वाणी बोला करो। परन्तु रहे कि बोलने में बनावटी मिठास न हो। "मुँह में राम बगल में छु होना अत्यन्त ही बुरा है। अपने हृदय को ही अत्यन्त कोमल और बना लो, ताकि, मुँह से कभी कटु वचन निकलें ही नहीं। कुछ बहने खयाल है, कड़े वाक्य बोलकर, ताने भरी बातें कह कर, अथवा कि हृदय को वाग्बाणों से मर्माहत कर उस पर अपना प्रभुत्व स्थापित जा सकता है। परन्तु ऐसा समझ बैठना भूल है। इस प्रकार मनोमालिन्य के अथवा लड़ाई झगड़े के और कुछ नहीं हो सक पतित विचारों को हृदय से निकाल देना चाहिए।

"ऐसी बानी बोलिए मनका आपा खोय।
औरन को शीतल करे आपौ शीतल होय"॥

स्त्रियों को चाहिए कि अपने पति के लिए अपने मुँह से
कड़े वचन बोलने का विचार न करें। यदि पति से कभी को हो जाय, तो नम्र वचनों द्वारा उस भूल को प्रदर्शित करना चा बात पर कुत्तों की तरह गुर्राना और काटने दौड़ना अधम स्त्रि है। बहुतेरी स्त्रियाँ अपने पति का सामना करने लगती हैं, नरकगामिनी हैं। उनका मुँह देखने से पाप लगता है। स कि जिस किसी से बातें करनी हों, अत्यन्त नम्रता और शि करनी चाहिए। सामने से क्रुद्ध हुए व्यक्ति के वचनों का उ शब्दों में मत दो, बल्कि मीठी वाणी रूपी जल से उसकी क्रोध-ज्वाला को शान्त कर दो।

व्यभिचार से स्त्रियों को अत्यन्त घृणा होनी चाहिए। पतित, कलङ्कित, मारपीट, और अपमानित करने वाल है तो यह व्यभिचार है। व्यभिचार से स्त्री के तो सब पु

रोगियों की औलाद पैदा होकर क्या करेंगी ? स्त्रियों का क्षेत्र "गर्भाशय" अत्यन्त नीरोग होना चाहिए। गर्भाशय सम्बन्धी कोई विकार रहना अच्छा नहीं है। इसी में स्त्री जीवन की महत्ता है। श्रमशील स्त्रियाँ कभी भी रोगी नहीं होतीं। सुस्त और आलसी स्त्रियों को प्रायः गर्भाशय सम्बन्धी बीमारियाँ हो जाया करती हैं। इसलिए हम अपनी गृहलक्ष्मियों से बार-बार प्रार्थना करते हैं कि वे मिहनत से जी न चुराया करें। गृह-कार्य को अपने हाथों करते रहने पर काफ़ी मिहनत हो जाती है; जिससे शरीर सबल और स्वस्थ रहता है।

स्त्रियों को अपना कार्य-क्षेत्र सङ्कुचित नहीं रखना चाहिए, बल्कि विस्तृत रखना आवश्यक है स्त्री जाति पर पुरुषों द्वारा जो अन्याय अथवा अत्याचार हो रहे हैं, उन्हें हटाने का सतत उद्योग करना चाहिए। अपने अधिकारों के लिए पुरुष-समाज को विवश करना चाहिए। यहाँ हमारी यह इच्छा नहीं है कि पश्चिमीय देशों में जिस प्रकार स्त्रियाँ स्वतन्त्र होकर रहना चाहती हैं, वैसे ही यहां भी हों ! हमारा तात्पर्य यह है कि शास्त्रानुमोदित एवं धर्मविहित अधिकारों को प्राप्त करने के लिए तैयार होना चाहिए। घर को ही अपना कार्य-क्षेत्र समझ कर कूपमण्डूक की तरह न रहना चाहिए, बल्कि सामाजिक, धार्मिक और राष्ट्रीय आन्दोलनों में भी अपना हाथ अवश्य रखना चाहिए। धार्मिक सभा-सोसाइटियों में अपने पति के साथ-साथ भाग लेना चाहिए। सामाजिक तथा नैतिक उन्नति में अपने पति का साथ देना चाहिए। राष्ट्रीय आन्दोलन में गृहदेवियों के आगे आने की ज़रूरत है। क्योंकि "देश-सेवा" प्रत्येक देश वासी का प्रथम कर्त्तव्य है, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री। जिन स्त्रियों का कार्य-क्षेत्र इस प्रकार उन्नत और विस्तृत रहता है, उनके गर्भ से जो बालक उत्पन्न होता है, वह सर्व गुणसम्पन्न और नररत्न बनता है। इसलिए अपने क्षेत्र में नीरोग होकर इस प्रकार अपनी उन्नति करनी चाहिए। यह वेद की आज्ञा है।

(४) रसोई-घर

ओ३म् ऋतेन तष्टा मनसा हितैषा ब्रह्मौदनस्य विहिता वेदिरग्रे ।
अंसद्रीं शुद्धामुपधेहि नारि तत्रौदनं सादय दैवानाम् ॥
अथर्व ११ । १ । २३

(अग्रे) पहले (एषा) यह (ब्रह्मौदनस्य) ब्रह्म के ओदन की (वेदिः) वेदी-यज्ञभूमि (ऋतेन) नियम द्वारा (तष्टा) बनाई गई और (मनसाहिता) मन से रखी गई है । (नारि) हे स्त्री ! (शुद्धां अंसद्रीं) पवित्र कड़ाई अथवा बर्तन को इस पर (उपधेहि) चढ़ादे और (तत्र) उसमें (दैवानां ओदनं) देवताओं को देने के लिए अन्न (सादय) बनाओ ।

(१) "पहले यह अन्न पकाने का स्थान नियम से बनाया गया और मन से रखा गया" । वेद कहता है कि स्त्रियो ! भोजन बनाने का स्थान रसोई घर नियम पूर्वक बनाओ । क्योंकि अच्छा भोजन बनाने के लिए अच्छे स्थान की आवश्यकता है । यदि पाकशाला असु-विधाजनक हुई तो कितना ही चतुर पाकशास्त्री हो या कैसे ही उत्तम पदार्थ क्यों न हो; अच्छे नहीं बनेंगे । असुविधाजनक स्थान में भोजन बनाते वक्त बनाने वाले को झुंझलाहट और क्रोध होने लगता है । भोजन का बनाने वाला व्यक्ति यदि किसी कारण असन्तुष्ट अथवा क्रुद्ध हो, तो भोजन कदापि उत्तम तथा सुस्वादु नहीं बनेगा । लोगों का तो यहाँ तक कहना है कि, "क्रोधी आदमी के हाथ का बना भोजन विष हो जाता है" इस कथन में सम्भवतः अतिशयोक्ति हो; किन्तु यह सर्वथा झूठ भी नहीं माना जा सकता । भोजन बनाते वक्त क्रोध न आने पावे, इस बात का ध्यान अवश्य होना चाहिए । इसके लिए सब से पहले इस बात की आवश्यकता है कि, भोजन बनाने का स्थान सुविधाजनक हो । यह नियम

पूर्वक बना हो और इच्छानुकूल हो। उसमें धुआँ निकलने के लिए द्वार बने हों, शुद्ध वायु आने के लिए मार्ग रक्खे गए हों। प्रकाश के आने का प्रबन्ध हो। मक्खी, मच्छर, तितली आदि क्षुद्र जीव रसोई घर में न घुसने पावें; इसके लिए द्वार पर चिक और पर्दे वगैरह हों। पाकशाला लिपी-पुती स्वच्छ हो। उसमें चौका क्यारी वगैरह सुन्दर बने हों। जो वस्तु जिस जगह होनी चाहिए वह वहीं पर रक्खी गई हो। भोजन बनाने के पात्र शुद्ध तथा जल से धुले हुए हों। चूल्हा सीधा और दृढ़ता के रूप पर बना हो, जिसमें आग अच्छी तरह जल सके। ऊँचा-नीचा तथा बुरी तरह का चूल्हा होने से उस पर भोजन बनाते वक्त बड़ी ही असुविधा होती है। इसलिए चूल्हा इस रीति से बनाया जाय, जिसमें आग अच्छी तरह जल सके और उस पर पकने वाले पदार्थ को भलीभांति चारों ओर से आग की गर्मी पहुंचे। चूल्हे का मुँह किस ओर रक्खा जाय, इस बात की भी ध्यान रखना चाहिए। दक्षिण और पूर्व दिशा की ओर प्रायः चूल्हे का मुँह नहीं रक्खा जाता। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार चूल्हा स्थापित करने का मुहूर्त होता है। चूल्हा अन्न पकाने की पवित्र वेदी है। इस स्थान पर "बलिवैश्वदेव" नामक एक दैनिक यज्ञ किया जाता है। अतएव इस भोजन बनाने के स्थान को "यज्ञशाला" भी कहा जा सकता है। इसकी बनावट नियमानुसार उत्तम होनी आवश्यक है।

(२) "हे स्त्री! पवित्र कड़ाही या और किसी बर्तन को इस पर चढ़ादे और उसमें देवताओं को देने के लिए अन्न बनाओ।" जब इस प्रकार का मनके अनुकूल रसोई-घर बन चुका हो तो उसपर स्त्री को चाहिए कि भोजन बनाने के लिए 'पवित्र' पात्र चढ़ादे। पात्र के साथ "पवित्र" शब्द विचार करने योग्य है। वेद केवल पात्र चढ़ा देने की ही आज्ञा नहीं देता, बल्कि "पवित्र" पात्र की ओर ध्यान आकर्षित करता है भोजन तैयार करने के पात्र को मांज कर साफ़ रखने चाहिएं, वे मैले गन्दे, अपवित्र न हों। लिखा भी है-

"सम्मार्जनोपलेपाभ्यां गृहमण्डल-वर्त्तनैः।
स्वयं च मण्डिता नित्यं परिमृष्टपरिच्छदा॥"
(श्रीमद्भागवत)

स्त्रियों को उचित है कि धोना, पोंछना, माँजना, लीपना पोतना आदि शुद्धि के कार्यों को स्वयं करें। इस वचन के अनुसार, गृहदेवियों का कर्त्तव्य है कि भोजन बनाने के पात्र बिलकुल शुद्ध और मल-रहित रखें। भारत के कई भागों में बर्त्तनों को मिट्टी वग़ैरह से माँज कर पानी से धो डालने का रिवाज है। किन्तु राजपूताना, मालवा आदि प्रान्तों में उन्हें केवल राख से माँज कर रख देते हैं-पानी से धोए नहीं जाते! पानी से धोए बिना पात्र बिलकुल शुद्ध नहीं होता। उस पर राख तथा जूंठन आदि लगी ही रहती है। स्त्रियों को इन बातों पर बारीक नजर रखनी चाहिए; और रसोई-घर में जाने के पेश्तर बर्त्तनों को खूब साफ़ कर लेना चाहिए। जो स्त्रियाँ आलसी होती हैं, वे चूल्हे पर चढ़ने वाले पात्र का काला पेंदा कभी साफ़ नहीं करतीं। भरतिया, बटलोई, कड़ाही, तवा, देगची, भगौनी आदि बर्तनों का पेंदा प्रायः काला ही रहता है। उसे वे साफ़ नहीं रखतीं। वेद को ऐसी गन्दगी पसन्द नहीं। वह "शुद्ध पात्रों" के लिए आज्ञा दे रहा है। पीतल ताँबे के पात्रों का ही नहीं, बल्कि लोहे के पात्र जैसे तवा कड़ाही वगैरह के पेंदे भी बिलकुल साफ़ रहने चाहिएं। उनके पेंदे की कालिमा छुड़ा देना उचित है। इसी तरह बर्तन के अन्दरूनी हिस्से की सफ़ाई का भी ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है। जो गृहस्थ अपने पात्रों को शुद्ध रखता है—शुद्ध बर्तनों में ही अपना भोजन पकाता है वह सकुटुम्ब स्वस्थ एवं नीरोग रहकर दीर्घायु पाता है। बहनो! इसे भूल न जाओ कि भोजन बनाने के पात्र अत्यन्त शुद्ध और पवित्र हों।

उसमें देवताओं को देने योग्य अन्न बनाना चाहिए। यहाँ पर

"देवताओं का अन्न" विचारने योग्य है। जो कुछ भी पकाया जाय, वह देवान्न हो। आसुर अन्न न हो। आसुर पदार्थों के लिए वेद आज्ञा नहीं देता। आपकी रसोई में भूल कर भी आसुर अन्न न आने पावे। शाक, कन्द मूल, फलफूल, पत्र, अन्न, दूध, घृत, आदि वस्तुएँ दैवी पदार्थ हैं। माँस, चर्बी, रक्त, अण्डे, हड्डी, मदिरा, लाल मिर्च, प्याज, तेल खटाई आदि आसुर पदार्थ हैं। जिनके खाने से शरीर और मन पर अच्छा प्रभाव पड़े, ऐसे सत्वगुणी पदार्थों को देवान्न माना गया है। और जिनके खाने से शरीर और मन पर बुरा असर पड़ता हो—स्वभाव उद्दण्ड तथा नीच बनता हो, उन्हें तमोगुणी अथवा आसुरी अन्न कहा गया है। यह बात एक मानी हुई है कि प्राणी जैसा भोजन करेगा, उसका स्वभाव भी वैसा ही बन जायगा। इस बात का प्रमाण शाकभोजी और माँसभोजी जीव हैं। शाकभोजी प्राणी शान्त और सज्जन होते हैं और माँसभोजी उद्दण्ड, खूँख्वार, अविचारी, निर्दय और दुर्जन। वेदों को नीचता, उद्दण्डता और निर्दयता पसन्द नहीं है। इसी लिए यह आज्ञा देता है कि तुम अपने रसोई घर में देवान्न बनाओ। माँस पकाना असुरों का काम है जो पापी और नारकी माने जाते हैं।

"देव" शब्द हम में से कुछ लोगों को शायद अटपटा जँचे। क्योंकि हम लोगों की धारणा है कि "देव" कोई योनि विशेष हैं और वे कहीं आकाश में, किसी स्थान विशेष पर रहा करते हैं। लेकिन यह धारणा निर्मूल है। "देव" शब्द का अर्थ है—धार्मिक, सज्जन, विद्वान्, वेद-पाठी, परोपकारी, उदार, शान्त, अनुभवी और सद्गुणी इत्यादि। जो इन बातों से युक्त होगा, वही "देव" है। देव बनने के लिए या बने रहने के लिए देवान्न की बड़ी भारी आवश्यकता है। इसके विपरीत जो लोग आचरण करते हैं, वे आसुर, राक्षस, दनुज, दानव, दस्यु, अनार्य, यवन आदि नामों से पुकारे जाते हैं। हमारी गृहदेवियों को अपना "देव" शब्द सार्थक

रखने के लिए रसोई घर में देवान्न ही पकाना और आसुरी अन्न को त्याग देना चाहिए।

अन्न में भी कुछ अन्न विशेषतः दैवी अन्न समझे गए हैं, जैसे जौ, चावल, मूँग, गेहूँ आदि। जो अन्न शरीर के लिए सुपच, स्वास्थ्यप्रद और बलवर्द्धक हों वे सब देवान्न हैं। जो पचने में भारी, रोगोत्पादक और शक्ति-नाशक हों, वे सब आसुरी अन्न हैं। सारांश यह है कि स्त्रियों को ऐसे पदार्थ ही बनाने चाहिएं, जो सुस्वाद, लघुपाक, स्वास्थ्यप्रद, शक्तिवर्द्धक और रुचिकारक हों। घर के लोगों का स्वास्थ्य उत्तम रखना अथवा उसे बिगाड़ देना स्त्रियों के हाथ में है, क्योंकि भोजन बना कर खिलाना उनका कार्य है।

शरीर की सब बीमारियाँ पेट से पैदा होती हैं। अर्थात् पेट की खराबी से सब खराबियाँ हैं। इस लिए पेट को खराब नहीं करना चाहिए। पेट भोजन की खराबी से बिगड़ जाता है। इस लिए वेद कहता है कि भोजन तैयार करने का स्थान, ब्रह्म ओदन की वेदी के समान पवित्र और उत्तम हो। भोजन बनाने में असुविधा उत्पन्न करने वाली कोई बात न हो। फिर वहां पर मैले कुचैले पात्रों में खाना न पकाया जाय, नहीं तो अत्यन्त हानि होने की सम्भावना है। सुन्दर स्थान में, शुद्ध पात्रों में देवताओं के खाने योग्य लघुपाक, स्निग्ध, मिष्ट, दूध घी युक्त एवं बलवर्द्धक अन्न पकाया जाय। इस प्रकार बहुत सावधानी एवं शुद्धता से तैयार किया हुआ भोजन पेट को कदापि नहीं बिगाड़ सकता। बल्कि ऐसे उत्तम भोजन से जठराग्नि प्रदीप्त होकर शरीर को स्थायी बना देगी।

कौन सी वस्तु हानिप्रद है, और कौनसी लाभदायक है; यह बातें प्रत्येक स्त्री को जान लेनी आवश्यक है। जो खाद्य पदार्थ रात दिन घर में काम आते हों, उनका गुण, उनका स्वभाव और तत्सम्बन्धी अन्य बातों का ज्ञान स्त्रियों को अवश्य प्राप्त करलेना चाहिए। किस ऋतु में कौनसी

वस्तु खानी-पीनी चाहिए, कैसे खानी चाहिए, कितनी खानी चाहिए आदि बातों की जानकारी अवश्यमेव आवश्यक है। जो स्त्रियां इन बातों को नहीं जानतीं वे कभी कभी बड़े सङ्कट में पड़ जाती हैं। इसलिए रसोई बनाकर खिलाने वाली स्त्री-जाति को घरेलू पदार्थों की सारासार गुण अवगुण आदि अवश्य जान लेने चाहिएं। इस विषय पर "पदार्थ विद्या" नाम से एक स्वतन्त्र पुस्तक होनी चाहिए, जो अकारादि क्रम से वस्तुओं के नाम तथा उनके गुण दोषों को बताने वाली हो। ऐसी पुस्तक तैयार हो जाने पर पढ़ी-लिखी स्त्रियों को बहुत सहायता मिलेगी।

---

(५) कल्याणी बनो

ॐ शिवाभव पुरुषेभ्यो गोभ्यो अश्वेभ्यः शिवा।
शिवास्मै सर्वस्मै क्षेत्राय शिवा न इहैधि ॥

अथर्व० ३ । २८ । ३ ॥

(पुरुषेभ्यः गोभ्यः) पुरुषों, गौओं (अश्वेभ्यः) और घोड़ों के लिए (शिवाभव) कल्याणकारिणी हो। (अस्मै सर्वस्मै क्षेत्राय) इस सब स्थान के लिए कल्याणदायिनी हो। (नः) हमारे लिए (शिवा इह एधि) कल्याणकारिणी होकर आओ।

(१) "पुरुषों, गौओं और घोड़ों के लिए कल्याणकारिणी हो।" स्त्रियों का कर्त्तव्य है कि वे सदा पुरुषों की शुभचिन्तक बनी रहें। क्योंकि स्त्री-जाति पुरुषों के अधिकार में रहने वाली है। हमारे हिन्दू शास्त्रों में लिखा है कि "स्त्री को बचपन में पिता के अधिकार में रहना चाहिए। जवानी में वह पति के अधिकार में रहे और पति के न रहने पर उसे अपने पुत्र के अधिकार में रहना चाहिए। अर्थात् स्त्री स्वतन्त्र नहीं है। उसे पुरुषवर्ग के अधिकार में रहने की आज्ञा है।

भले ही वह पिता हो, पति हो अथवा पुत्र हो। जब कि स्त्रियों को इस प्रकार पुरुषों के अधिकार में रहना है, तो यह उनका कर्त्तव्य हो जाता है कि वेह पुरुषों के लिए कल्याणकारिणी बनें। पुरुषों का अशुभ-चिन्तन या उनके लिए मन में बुरे विचार रखना स्त्रियों को मना है। क्योंकि आमरण जिनके आश्रित रहना पड़े, उनके लिए अशुभ-विचार रखना मूर्खता है। पुरुषों के द्वारा ही स्त्रियों को भोजन-वस्त्र प्राप्त होता है, इस कारण पुरुषों का भला मनाते रहना चाहिए। केवल शुभ कामना करने से ही काम नहीं चलेगा, बल्कि ऐसे व्यवहार तथा आचरण भी होने चाहिएं, जिनसे पुरुषों का भला हो।

आजकल की स्त्रियों ने प्रायः इस बात को भुला सा दिया है। पुरुषों के प्रति उनका क्या कर्त्तव्य है। इसे वे नहीं समझतीं। पिता और पुत्र आदि पुरुषों को जाने दीजिए केवल पति के प्रति अपने व्यवहारों पर दृष्टि डालिए। जिसे वे अपना जीवन धन, नाथ, स्वामी, प्राणेश्वर, प्राणवल्लभ, जीवनसर्वस्व आदि समझती हैं, उस पति के लिए ही अनुदार विचारों से काम लिया जाता है। स्त्रियाँ पुरुषों के लिए भाररूप बन जाती हैं। पति के सुख दुःख में साथ देने वाली स्त्रियाँ आज विरली ही हैं। स्त्रियों को याद रखना चाहिए कि पुरुष, जो कि दिन भर बाहर रहते हैं, चुपचाप बैठे नहीं रहते। घर खर्च के वास्ते जो कुछ भी कमाकर लाते हैं, वह उन्हें वहीं पड़ा नहीं मिल जाता है। न जाने कैसी कैसी मुसीबतें और कठिनाइयाँ सहकर वे द्रव्योपार्जन करते हैं। अपनी गृहस्थी चलाने के लिए—अपनी आबरू रखने के लिए, न जाने किन किन लोगों की खुशामद बरामद करनी पड़ती है। बाल बच्चों की ख्वाहिश पूरी करने के लिए लोगों की भली बुरी बातें सहनी पड़ती हैं। वे रात दिन घानी के बैल की तरह जुटे रहकर, खून को पसीना बना कर, घर खर्च चलाते हैं। बहनो! यह मत समझ लेना कि ये दिक्कतें केवल

ग़रीबों को ही उठानी पड़ती हैं। नहीं, अमीरों को तो इससे भी अधिक पापड़ बेलने पड़ते हैं। ग़रीब हो या अमीर अपना खर्च चलाने के लिए सभी को कष्टों का सामना करना ही पड़ता है। परन्तु देखा जाता है कि घर में आनन्द से बैठी हुई स्त्रियों को मर्दों की इन बातों का कुछ भी विचार नहीं होता। वे ज़ेवर और वस्त्रों के लिए अपने पति को बुरी तरह सताती हैं। उनकी तरफ़ से, जीओ, मरो, चोरी करो, जेल जाओ, भीख मांगो कुछ भी करो—उन्हें तो ज़ेवर और वस्त्र खूब चाहिए।

त्यौहारों पर स्त्रियाँ खूब सज-धज कर अपनी सहेलियों में इतराया करती हैं। परन्तु वे अपने पति के सामने सदा मैले कपड़े पहन कर जाया करती हैं, और उनकी जान, कपड़ा-लत्ता सिलवाने तथा ज़ेवर बनवाने के लिए खाया करती हैं। सदा अपने पति के पीछे लगी रहकर उसे रात दिन चिन्ता में डुबोए रखती हैं। क्या यही तुम्हारा कर्तव्य है! तुम्हारे इस निठुर एवं स्वार्थपूर्ण व्यवहार से तुम्हारा पति मारे चिन्ता के दुर्बल हो जाता है और शरीर पनपने नहीं पाता। अपनी सारी आमदनी तो तुम्हारे ज़ेवर और कपड़े में लगादें तो फिर घर-खर्च कैसे चलावें? इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए। इस प्रकार अपने पति के साथ स्वार्थपूर्ण कपट व्यवहार रखना भली स्त्रियों का काम नहीं है। जो स्त्रियाँ अपने पति को इस प्रकार सताती हैं, वे नीच, पतित, फूहड़ कुल्टा और दुष्टा हैं। स्त्री जाति के इन्हीं कपटपूर्ण व्यवहारों को देख कर नीतिकारों ने समस्त स्त्री जाति के लिए यह लिख दिया है कि—

स्त्री चरित्रं पुरुषस्य भाग्यम्।
दैवो न जानाति कुतो मनुष्यः॥

"स्त्री चरित्र को दैव भी नहीं जान सकता पुरुष की तो गति ही क्या है।" ऐसी बातों पर ही लोगों ने कहना शुरू किया है कि—

त्रियाचरित जाने नहिं कोय।
खसम मार कर सत्ती होय॥

स्त्रियों के लिए जो ऐसे अपवाद प्रचलित हैं उनसे लज्जा आनी चाहिए। इन्हें हटाने के लिए प्रयत्न होना चाहिए न कि बढ़ाने के लिए, देवियो ! पुरुषों का मन अपने हाथ में रक्खो, उन्हें व्यर्थ न सताओ। व्यर्थ की चिन्ताएँ पैदा कर अपने वैधव्य को मत बुलाओ। क्योंकि तुम्हारे पतिदेव का शरीर सूख कर लकड़ी बन जायगा, जिससे वे इस लोक में शीघ्र ही जीवन-जवनिका गिरा कर अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देंगे। तुम्हारा यह धर्म्म है कि, बाहर से आए हुए थके माँदे पति का दिल हरा भरा कर दो। दिन भर के अपने दुःखों को भूल जायँ, ऐसा व्यवहार करो। शिकारी की तरह अपने पति के आने की ताक बाँध कर बैठे रहना और आते ही डाइन बन कर वाग्बाणों द्वारा उसके हृदय को व्यथित कर देना, तुम्हारा धर्म नहीं है। यदि पति का आप पर प्रेम है तो फटे चिथड़ों में आनन्द समझो, बिना ज़ेवर अपना जीवन धन्य मानो।

वेद कहता है कि पुरुषों के लिए कल्याणकारिणी बन जाओ। अर्थात् यदि तुमने पुरुषों के प्रति अपने सद्भाव रक्खे तो, तुम सदा आनन्दित रह सकोगी। यदि पत्नी अपने पति के लिए सद्भाव रक्खे तो पति को भी रखना लाजिमी होगा। "ताली दोनों हाथों से बजा करती है" इस उक्ति के अनुसार यदि तुम्हें पति-प्रेम की आवश्यकता है, तो तुम भी अपने पति के प्रति हृदय में सच्चा प्रेम रक्खो। इस प्रकार पुरुषों के लिए स्त्रियाँ कल्याणकारिणी बन जायँगी।

गौओं और घोड़ों के लिए भी कल्याणकारिणी बनना चाहिए। क्योंकि पशुधन सब धनों में श्रेष्ठ है। इसी लिए वेद कहता है कि गौ आदि पशुओं के लिए भी कल्याणकारिणी बनो। अर्थशास्त्र में भी पशुधन को श्रेष्ठ धन

माना है। यदि स्त्रियों के लिए वस्त्राभूषण वेद को आवश्यकीय मालूम होते, तो वह अवश्य गौ घोड़े आदि का ज़िक्र न कर ज़ेवरों का वर्णन करता। किन्तु वेद स्वर्ण आदि धातुओं को उतना उत्तम नहीं समझता, जितना गौ आदि पशुओं को। वर्त्तमान समय में हमारा स्त्री-समाज पशु-पालन को बुरा और ज़ेवर को अपना सर्वस्व समझ बैठा है। यह बहुत बुरा है। ज़ेवर से देश को भी आर्थिक हानि पहुँचती है, इसके अतिरिक्त और भी कई प्रकार की सामाजिक हानियां होती हैं। कुछ लोगों का ख़याल है कि ज़ेवर बनाकर रखने से किसी न किसी समय काम ही आता है। किसी हद तक ऐसा सोचना ठीक है, परन्तु ज़ेवर से जितनी हानि है, उतना लाभ नहीं। रुपए के बारह आने तो सोनार ही बना देता है। बाद में पहनने पर वह घिस कर कम होता है, टूटता है, बिगड़ता है, इत्यादि। कभी कभी तो खो जाता है—चोरी चला जाता है। ख़राब हो जाने पर स्त्रियों को फिर उसे नया बनवाने की सूझती है। इस प्रकार जब जब वह सोनार का घर देखता है, तभी रुपए में बारह आना बनता जाता है। ज़ेवर को बेचने का इरादा हो तो वह कभी पूरी क़ीमत में नहीं बिकता। बनवाई वग़ैरह की मज़दूरी तो दूर रही, वह चाँदी सोने के बाज़ारू भाव में भी नहीं बिकता। स्त्रियों का एक स्वभाव सा होता है कि वे एक ज़ेवर को तुड़ा कर दूसरा नया बनवाया करती हैं। इस प्रकार बहुत आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। ज़ेवर के लिए प्राण तक खोने पड़ते हैं। कई स्त्रियों के पैरों के कड़े जब निकालने पर नहीं निकले, तब डाकुओं ने उनके पैर काट कर कड़े निकाल लिए हैं, ऐसी घटनाएँ प्रायः हुआ करती हैं। इसके अतिरिक्त ज़ेवर से मुहब्बत करने वाली स्त्री को अब पुरुष अच्छी दृष्टि से नहीं देखते। पुरुषों की यह धारणा हो गई है कि जो स्त्रियां अपने लिए ज़ेवर बनवा देने को अपने पति से रात दिन आग्रह किया करती हैं, वे सच्चरित्रा नहीं होती हैं, और

अपने पति को मरा देखती हैं। इसी कारण ज़ेवर बनवाने के लिए अपने पति को विवश करती रहती हैं कि दैव योग से यदि पति नहीं रहे तो इनके बाद में अपना पेट इन जेवरों के द्वारा पाल सकूँगी। बहनो ! कितना भयङ्कर लाञ्छन है ? क्या इतने पर भी तुम ज़ेवर बनवाना अथवा पहिनना पसन्द करोगी ?

इन सब बातों को समूल नष्ट कर देने के लिए वेद की आज्ञा है कि गौ, घोड़े, भैंस, बकरी आदि को ही अपना धन बनाओ। स्त्रियों के लिए ज़ेवर उतना प्रिय नहीं होना चाहिए, जितने गौ आदि पशु। यदि घर में आवश्यकतानुसार द्रव्य है, तो ज़ेवर बनवाना बुरा नहीं; किन्तु ऐसे ज़ेवरों की आवश्यकता भी नहीं कि घर में तो चूहे दण्ड पेलें और आप ज़ेवर के लिए रूठें। पशु धन ज़ेवर की तरह रुपए में बारह आना नहीं हो जाता, बल्कि उत्तरोत्तर बढ़ता ही जाता है। गोपालन द्वारा उत्तम बछड़े बछड़ी पैदा होने पर वे सैकड़ों रुपए दे जाते हैं। घर में, घी, दही, छाछ, आदि स्वर्गीय पदार्थ भी रहते हैं, और धन भी बढ़ता रहता है। इसे कहते हैं "आमके आम और गुठली के दाम" इसीलिए वेद "पशुपालन" के लिए प्रत्येक स्त्री को बारम्बार अनुमति देता है। इसमें "गोरक्षा" के मूलतत्व का भी समावेश है। इसमें राष्ट्र हित भी है। गृहदेवियों को चाहिए कि अपने और दूसरे के कल्याण के लिए पशुपालन ज़रूर करें और पशुओं के लिए कल्याणकारिणी बनें।

(३) "इस स्थान के लिए कल्याणकारिणी हो।" जिस स्थान में स्त्रियाँ रहती हैं, उन्हें उस स्थान के लिए कल्याणकारिणी होना चाहिए। अर्थात् अपने घर की व्यवस्था अच्छी रक्खो। "कहीं सूप कहिं पड़ी बुहारी, कहीं लुढ़कती चलनी न्यारी।" इस प्रकार गृह-व्यवस्था रखना फूहड़ स्त्रियों का काम समझा जाता है। जो वस्तु जिस जगह पर होनी चाहिए, उसका उसी जगह होना ही स्वच्छता कहाता

है। और चीजों का इधर उधर पड़ा रहना ही गन्दगी है। मकान साफ सुथरा, लिपा-पुता, झाड़ा हुआ और मनमोहक होना चाहिए। प्रत्येक वस्तु के रखने का स्थान नियत करो, और उसे सदैव उसी स्थान पर रखने की आदत डालो, स्त्रियों के लिए यह सबसे अच्छा नियम है। अपने रहने के स्थान की उत्तरोत्तर उन्नति करते जाओ। जो जो त्रुटियाँ दिखाई पड़ें, उन्हें धीरे-धीरे दूर करती जाओ। रसोई घर, सुसज्जित हो शयनागार सुसज्जित हो। चीज़, वस्तु रखने का भण्डार व्यवस्थित हो। ईश्वरोपासना के लिए स्थान पवित्र हो पशुशाला साफ सुथरी और हवादार हो पानी रखने का स्थान पवित्र हो। मकान में छोटी-मोटी पुष्प-वाटिका अथवा गमले वगैरह हों। इस प्रकार सारा घर स्वच्छ, पवित्र, उत्तम और सजा हुआ रहना चाहिए। जो घर अच्छे कार्यों के लिए नियुक्त हों, उनमें रोना-पीटना आदि अशुभ कार्य नहीं करने चाहिएं। वेदों में रोने के लिए एक कमरा अलग नियुक्त करने की आज्ञा है। उसे "शोक भवन" कहा जा सकता है। जब रानी कैकेई को रोने-पीटने की ज़रूरत पड़ी तब वह "शोक-भवन" में जाकर पड़ रही। वह चाहती तो अपने शयनागार में ही मुँह फुला कर अथवा फटे-पुराने चिथड़े पहन कर राजा दशरथ पर अपना जाल डाल सकती थी; किन्तु ऐसा करना वेदविरुद्ध समझ कर उसे "शोक-भवन" में ही जाना पड़ा। "शोक-भवन" राजाओं के यहाँ ही होने चाहिएं, ऐसी वेद की इच्छा नहीं है। वेद, राजा और रङ्क सभी के लिए समान है। स्त्रियों को चाहिए कि अपने रहने के मकान में क्रोध, शोक, भय, निन्द्रा, ईर्ष्या, निर्दयता, हिंसा व्यभिचार आदि पाप कार्यों को न होने दें ऐसा करने से स्त्रियाँ कल्याणकारिणी हो सकती हैं।

(४) "हमारे लिए कल्याणकारिणी बनकर यहाँ आओ।" वेद की इस आज्ञा में कहा गया है कि "स्त्रियो! तुम अपने

पिता के घर रह कर इतनी अच्छी शिक्षा प्राप्त करो कि कल्याण कारिणी बनकर अपने पति के घर जाओ" । स्त्रियों का बचपन पिता के घर पर बीतता है । शिक्षा देने का समय बचपन ही है । बड़े हो जाने पर शिक्षा और उपदेश उतने काम नहीं करते, जितने कि बचपन में । वृक्ष की पकी शाखाओं को इच्छानुसार झुकाना कठिन है । मिट्टी के पके हुए बर्तन पर रङ्ग चढ़ाना मुश्किल है । इसी प्रकार सन्तान के बड़े हो जाने पर उसे उपदेश द्वारा सन्मार्ग पर लाना टेढ़ी खीर है । बचपन में जैसी आदतें डालदी जाती हैं, वे जन्म भर साथ नहीं छोड़ती । बालक को अच्छा या बुरा बना देना माँ-बाप के हाथ है । यही कारण है कि सपूत के माता पिताओं की प्रशंसा होती है और कपूत के मा बाप गालियों से सम्मानित किए जाते हैं । इसलिए स्त्रियों का कर्त्तव्य है कि ससुराल में आने के पहले अपने पीहर में कल्याणकारिणी बन जायँ । जो कुछ भी उन्हें ज्ञान प्राप्त करना हो, वे पिता के घर में ही प्राप्त करलें । पढ़ना लिखना, सीना, पिरोना, भोजन बनाना आदि सब गृह-कार्यों को अपने पीहर में ही सीख लेना चाहिए । कोई काम ससुराल में उतनी उत्तमता तथा सहूलियत से नहीं सीखा जा सकता, जितना कि पिता के घर सीखा जा सकता है । जो स्त्रियाँ अपने पीहर से बिना ज्ञान प्राप्त किये जङ्गली जानवर की तरह पति गृह में आती हैं, उन्हें तो कटुवचन सुनने ही पड़ते हैं; परन्तु साथ ही साथ उनके मा बाप को भी गालियां सुननी पड़ती हैं । जो माता पिता अपने बच्चों को शिक्षा नहीं देते, वास्तव में वे गालियों के पात्र हैं ।

वेद के उपर्युक्त कथन को मिट्टी में मिला देने वाली एक कुप्रथा हिन्दुओं के दुर्भाग्य से हिन्दुस्थान में प्रचलित है । वह है सर्वनाशी "बाल-विवाह" । इस बाल-विवाह के कारण लड़कियाँ अपने माता पिता के घर अच्छी तरह शिक्षा नहीं पा सकतीं । वे एक नए घर में आती हैं, जहाँ उन्हें सभी नए २ मनुष्य दिखाई पड़ते हैं । नई बहू जानकर थोड़े समय

है। और चीजों का इधर उधर पड़ा रहना ही गन्दगी है। मकान साफ़ सुथरा, लिपा-पुता, झाड़ा हुआ और मनमोहक होना चाहिए। प्रत्येक वस्तु के रखने का स्थान नियत करो, और उसे सदैव उसी स्थान पर रखने की आदत डालो, स्त्रियों के लिए यह सबसे अच्छा नियम है। अपने रहने के स्थान की उत्तरोत्तर उन्नति करते जाओ। जो जो त्रुटियाँ दिखाई पड़ें, उन्हें धीरे-धीरे दूर करती जाओ। रसोई घर, सुसज्जित हो शयनागार सुसज्जित हो। चीज़, वस्तु रखने का भण्डार व्यवस्थित हो। ईश्वरोपासना के लिए स्थान पवित्र हो पशुशाला साफ सुथरी और हवादार हो पानी रखने का स्थान पवित्र हो। मकान में छोटी-मोटी पुष्प-वाटिका अथवा गमले वगैरह हों। इस प्रकार सारा घर स्वच्छ, पवित्र, उत्तम और सजा हुआ रहना चाहिए। जो घर अच्छे कार्यों के लिए नियुक्त हों, उनमें रोना-पीटना आदि अशुभ कार्य नहीं करने चाहिएं। वेदों में रोने के लिए एक कमरा अलग नियुक्त करने की आज्ञा है। उसे "शोक भवन" कहा जा सकता है। जब रानी कैकेई को रोने-पीटने की ज़रूरत पड़ी तब वह "शोक-भवन" में जाकर पड़ रही। वह चाहती तो अपने शयनागार में ही मुँह फुला कर अथवा फटे-पुराने चिथड़े पहन कर राजा दशरथ पर अपना जाल डाल सकती थी, किन्तु ऐसा करना वेदविरुद्ध समझ कर उसे "शोक-भवन" में ही जाना पड़ा। "शोक-भवन" राजाओं के यहाँ ही होने चाहिएं, ऐसी वेद की इच्छा नहीं है। वेद, राजा और रङ्क सभी के लिए समान है। स्त्रियों को चाहिए कि अपने रहने के मकान में क्रोध, शोक, भय, निन्दा, ईर्ष्या, निर्दयता, हिंसा व्यभिचार आदि पाप कार्यों को न होने दें ऐसा करने से स्त्रियाँ कल्याणकारिणी हो सकती हैं।

(४) "हमारे लिए कल्याणकारिणी बनकर यहाँ आओ।" वेद की इस आज्ञा में कहा गया है कि "स्त्री! तुम अपने

पिता के घर रह कर इतनी अच्छी शिक्षा प्राप्त करो कि कल्याण कारिणी बनकर अपने पति के घर जाओ"। स्त्रियों का बचपन पिता के घर पर बीतता है। शिक्षा देने का समय बचपन ही है। बड़े हो जाने पर शिक्षा अ र उपदेश उतने काम नहीं करते, जितने कि बचपन में। वृक्ष की पक्की शाखाओं को इच्छानुसार झुकाना कठिन हैं। मिट्टी के पके हुए बर्तन पर रङ्ग चढ़ाना मुश्किल है। इसी प्रकार सन्तान के बड़े हो जाने पर उसे उपदेश द्वारा सन्मार्ग पर लाना टेढ़ी खीर है। बचपन में जैसी आदतें डालदी जाती हैं, वे जन्म भर साथ नहीं छोड़ती। बालक को अच्छा या बुरा बना देना माँ-बाप के हाथ है। यही कारण है कि सपूत के माता पिताओं की प्रशंसा होती है और कपूत के मा बाप गालियों से सम्मानित किए जाते हैं। इसलिए स्त्रियों का कर्त्तव्य है कि ससुराल में आने के पहले अपने पीहर में कल्याणकारिणी बन जायँ। जो कुछ भी उन्हें ज्ञान प्राप्त करना हो, वे पिता के घर में ही प्राप्त करलें। पढ़ना लिखना, सीना, पिरोना, भोजन बनाना आदि सब गृह-कार्यों को अपने पीहर में ही सीख लेना चाहिए। कोई काम ससुराल में उतनी उत्तमता तथा सहूलियत से नहीं सीखा जा सकता, जितना कि पिता के घर सीखा जा सकता है। जो स्त्रियाँ अपने पीहर से बिना ज्ञान प्राप्त किये जङ्गली जानवर की तरह पति गृह में आती हैं, उन्हें तो कटुवचन सुनने ही पड़ते हैं; परन्तु साथ ही साथ उनके मा बाप को भी गालियां सुननी पड़ती हैं। जो माता पिता अपने बच्चों को शिक्षा नहीं देते, वास्तव में वे गालियों के पात्र हैं।

वेद के उपर्युक्त कथन को मिट्टी में मिला देने वाली एक कुप्रथा हिन्दुओं के दुर्भाग्य से हिन्दुस्थान से प्रचलित है। वह है सर्वनाशी "बाल-विवाह"। इस बाल-विवाह के कारण लड़कियाँ अपने माता पिता के घर अच्छी तरह शिक्षा नहीं पा सकतीं। वे एक नए घर में जातीं हैं, जहाँ उन्हें सभी नए २ मनुष्य दिखाई पड़ते हैं। नई बहू जानकर थोड़े समय

तक तो उसका लाड़ प्यार होता है; किन्तु कुछ दिनों बाद ही, ननद, जेठानी, सासु आदि उसे तङ्ग करने लगती हैं। और जब उससे कुछ काम नहीं बन पड़ता, तब उसे मारते पीटते और गाली देते हैं। यहाँ तक कि उसके मा, बाप को भी गालियाँ दी जाती हैं। बेचारी छोटी सी लड़की जो अभी गृहस्थी के कार्य के लिए असमर्थ है; बुरी तरह सताई जाती है। नादान, बाल बुद्धि होने के कारण घबरा जाती है। कभी कभी तो ज़हर खाकर, या कूएं में पड़ कर आत्म-हत्या कर लेती है। माता पिता को चाहिए कि लड़कियों को शिक्षित एवं गृह-कार्य में दक्ष करने के बाद ही उनका विवाह करें। अपनी कन्या को भात खाना देने का अपने नर्क जाने के भय से रोओ पीटो मत। हिन्दू शास्त्रों में लिखा है कि "कन्या का ३६ बार अपने घर मासिक धर्म हो चुकने पर ही उनका विवाह योग्य पति के साथ करें।" इन बातों से स्पष्ट है कि कन्या को विवाह कम से कम सोलह वर्ष की उम्र में होना चाहिए। बहनो! यदि तुम्हारे माता-पिता तुम्हारे भले-बुरे का ध्यान न रखकर "बाल-विवाह" करने के लिए तैयार हों, तो तुम किसी तरह उसे टालदो। इसके लिए यदि तुम्हें निर्लज्जता पूर्वक उनसे कहना पड़े तो भी कोई परवाह नहीं। मूर्खों को समझा देना धर्म है। ऐसा करने से तुम्हारा सारा जीवन आनन्द मय बन जायगा। न कुछ तो, शर्म के लिए सारे जीवन को गुड़गोबर बना डालना कहाँ की बुद्धिमत्ता है? बहनो! तुम वेद की आज्ञानुसार पिता के घर से ही, पतिगृह के लिए कल्याण-कारिणी बन कर आओ।

(६) उन्नति करो

ॐ इह प्रियं प्रजायै ते समृध्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि।
एना पत्या तन्वं१सं स्पृशस्वाथजिर्विविदथमा वदासि ॥
अथर्व० १४ । १ । २१ ॥

(इह) यहाँ (ते प्रजायै) तेरे लिए तथा सन्तान के लिए (प्रियं) हित (सं ऋध्यतां) बढ़े, (अस्मिन्) इस (गृहे) घर में (गार्हपत्याय) घर की व्यवस्था के लिए (जागृहि) जागती रह । (एना-पत्या) इस पति के साथ (तन्वं संस्पृशस्व) शरीर सुख प्राप्त कर। (अथजिर्वीः) और ज्ञानवृद्ध बन कर (विदथं आवदासि) सभा में वक्तृता दे।

(१) "यहां तेरे लिए तथा सन्तान के लिए हित बढ़े।" स्त्रियो ! इस संसार में ऐसे ऐसे अच्छे कार्य करो, जिससे तुम्हारे लिए और तुम्हारी औलाद के लिए लोग शुभचिन्तक बने रहें। अच्छे आचरणों द्वारा ही मनुष्य दूसरे मनुष्यों के मन पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर सकता है। शास्त्रकारों का कथन भी है कि:—

सदाचारेण देवत्वं ऋषित्वञ्च तथा भवेत्।

जो मनुष्य सदाचारी होता है, वह देव तथा ऋषियों की तरह संसार में आदर पाता है। इस लिए पवित्र व्यवहार द्वारा लोगों की सहानुभूति एकत्र करनी चाहिए। जिसके लिए लोगों के हृदय में प्रेम हो और जिसकी संसार प्रशंसा करता हो, वह स्त्री धन्य है। वेद के उक्त वचन की यही मंसा है। कविवर, शेख सादी ने कहा है:—

यादगारी के वक्त ज़ाइदन तो हमःखंदां बुवद तू गिरियां।
हम चुनांचे याद मुरदन तो हमःगिरियाँ बुवद तू खन्दाँ॥

अर्थात्—जिस दिन तू दुनियाँ में आया था उस दिन तू रोता था

और लोग हँसते थे ! अब दुनियाँ में आकर तू ऐसे अच्छे काम कर कि जिस दिन तेरा यहाँ से कूँच हो, उस दिन तू हँसे और लोग रोवें। जिसके वियोग में दुनियाँ को दुःख हो, जिस के उठ जाने से दुनियाँ चार आँसू बहावे, उसी का जीवन सच्चा मनुष्य-जीवन कहा जा सकता है। अतएव स्त्रियो ! इस संसार में ऐसी बन कर रहो कि लोग तुम्हारी और तुम्हारी सन्तान की प्रियकामना करते रहें। जिस तरह तुम कल्याणकारिणी बनोगी, उसी तरह सारा विश्व तुम्हारे लिए कल्याणप्रद बन जायगा। यह एक मानी हुई बात है कि जैसा मनुष्य होता है, विश्व भी उसके लिए वैसा ही बन जाता है। "हम भले तो जग भला, और हम बुरे तो जग बुरा" इस लोकोक्ति के अनुसार यदि स्त्रियाँ दूसरों के लिए हित बुद्धि रक्खेंगी, तो लोग उनके तथा उनकी सन्तान के लिए हित-दृष्टि रक्खेंगे। इसीलिए वेद कहता है कि "शिवाभव" कल्याणकारिणी बनो। पतिव्रता स्त्रियाँ जगत् में धन्यवाद होती हैं। ऐसी माता की सन्तान भी कीर्ति प्राप्त करती है। इस लिए अपने पातिव्रत धर्म की रक्षा ध्यानपूर्वक करनी चाहिए। स्त्रियों की सब प्रकार की उन्नति का यही एक गुरु मन्त्र है।

(२) "इस घर में घर की व्यवस्था के लिए जागती रहो।" पुरुषवर्ग का अधिकांश समय घर के बाहर ही बीतता है। वे यदि घर की व्यवस्था में अपना समय लगा दिया करें, तो फिर धन कमाने के लिए असुविधा पैदा हो जायगी। इसीलिए यह "व्यवस्था" का कार्य वेद ने स्त्रियों को सौंपा है। गृह-प्रबन्ध स्त्रियों के हाथ में ही होना चाहिए। घर में जिस वस्तु की आवश्यकता हो, इस बात की सूचना कुछ समय पहले ही गृह-स्वामी को दे देनी चाहिए। जब घर में वस्तु बिलकुल न रहे, "तब नमक नहीं है, मसाला नहीं है, तेल नहीं है" इत्यादि बातों का झुण्ड मचाना मूर्ख स्त्रियों का काम है। इसके

नाम प्रबन्ध नहीं है। "जागती रह" यह वाक्य पहले से सावधान रहने के लिए सूचित कर रहा है। भोजन करने के पहले "घी नहीं है" इस तरह की सूचना देने वाली स्त्रियाँ जागती नहीं, सोती हैं। यदि घर में घी नहीं था, तो दो दिन पहले सूचित कर दिया होता। ठीक मौके पर ऐसी बातों की सूचना न देने वाली स्त्री "फूहड़" समझी जाती है। ऐसी बेफ़िक्री से काम करने में बहुत हानि होती है। समय पर वस्तु ठीक दामों में तथा अच्छी नहीं मिलती। यदि ऐसी बातें याद न रहती हों, तो क़ाग़ज़ पर नोट कर लिया करो और वक्त से पूर्व ही सूचित कर दिया करो।

घर का छोटा-मोटा हिसाब-किताब भी स्त्रियों को अपने ही हाथ में रखना चाहिए। इससे पुरुषों का काम हलका हो जायगा, और जो समय उनका ऐसी छोटी-मोटी बातों में ख़र्च होता है, वह बच जायगा, जिसे वे खाने कमाने में ख़र्च कर सकेंगे। धोबी, बनियाँ, नाई, तेली, तम्बोली, नौकर और पानी वाले आदि का हिसाब स्वयं स्त्रियों को रखना चाहिए। आजकल ऐसे छोटे हिसाब भी मर्दों को अपने हाथ में रखने पड़ते हैं। इसका भी एक कारण है। जब स्त्रियों के हाथ में पैसे सौंप दिए जाते हैं, तो वे झूठा हिसाब बनाकर उसमें से कुछ पैसे चुरा लेती हैं, और अपना ख़ज़ाना अलग रखने लगती हैं। कुछ इकट्ठा हो जाने पर गुप्त रूप से उसे क़रारे ब्याज पर चलाती हैं। कभी-कभी तो वह "चोरी का माल मोरी में" चला जाता है अर्थात् डूब जाता है। ऐसा हो जाने पर उस गुप्त बात को अपने पति पर प्रकट करती हैं! गोटा ख़रीदना, ज़ेवर बनवाना, कपड़े लत्ते बनवाना, मिठाई खाना आदि कार्य अपने घर के लोगों से लुक-छुप कर हुआ करते हैं। इसलिए पुरुषों का विश्वास स्त्रियों पर से उठ सा गया है! कितने आश्चर्य की बात है! भला जब घर का व्यवस्थापक ही चोर, कपटी, चालाक और अविश्वस्त

हो, तो घर की क्या दशा होनी चाहिए ? इसका अन्दाज़ा तुम खुद लगा सकती हो !

"पहरे वाला चोर हो तो कौन रखवाली करे।
बाग का क्या हाल जब माली ही पामाली करे॥

जो स्त्रियाँ इन बातों से बची हैं, वे धन्य हैं। घर की व्यवस्था तो गई चूल्हे में, उल्टे घर का नाश करने वाली स्त्रियों की भी यहाँ कमी नहीं है। जब मर्द, स्त्रियों के हाथ में हिसाब-किताब नहीं रखते, तो वे दूसरे उपायों द्वारा पैसा इकट्ठा करती हैं। घर की वस्तुएँ जैसे, आटा, दाल, पापड़, गुड़, शक्कर, आचार, मुरब्बे आदि चोरी से बेचकर पैसा जोड़ती रहती हैं! बेचारा कमाने वाला तो कमा कमा कर मर जाय, और स्त्रियाँ उसे इस प्रकार उड़ावें!! क्या ऐसी स्त्रियाँ गृहस्वामिनी कहलाने योग्य हैं? पुरुष जिस वस्तु को चार पैसे देकर लाया हो, उसे अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए दो पैसे में बेचकर गाँठ जोड़ना क्या भली औरतों का कार्य कहा जा सकता है? ऐसी स्त्रियों के नाम पर संसार धिक्कारता है। ये गृहदेवियाँ नहीं, बल्कि घर की डाइनें हैं। स्त्रियों को उचित है कि इन पापपूर्ण कार्यों से अपने को बचावें, और अपने घर का प्रबन्ध स्वयं अपने हाथ में लें। जो स्त्रियाँ इस प्रकार पुरुषों को सहायता पहुँचाती हैं, वे ही सच्ची अर्द्धांगिनी हैं।

(३) पति के साथ शरीर सुख प्राप्त कर। अर्थात् स्त्री पुरुष दोनों स्वस्थ रहो। स्त्री यदि स्वस्थ है और पुरुष रोगी, तो स्त्री भी निकम्मी है। इसलिए वेद कहता है स्त्रियो! अकेली नहीं, बल्कि पति के साथ नीरोग रहो। घर में ऐसी बातें मत पैदा होने दो, जिनसे पति को दुःख शोक एवं चिन्ता में पड़कर निर्बल बनना पड़े। अच्छा भोजन खिलाओ, खूब सेवा करो और सर्वदा प्रसन्न रक्खो। पति-पत्नी ब्रह्मचर्य से रहो। अधिक भोग-विलास से घृणा करो। पति-पत्नी में पवित्र, सच्चा

और धार्मिक प्रेम हो। काम-वासना की शक्ति के लिए पापमय प्रेम न हो। स्मरण रक्खो, तुम्हारा सम्बन्ध केवल सन्तान पैदा करने के पवित्र कार्य के लिए हुआ है, न कि ऐशोआराम के लिए। कुदरत के पवित्र कार्य को यदि तुमने "व्यभिचार" बना डाला तो तुम्हारे समान संसार में दूसरा कोई भी पापी नहीं है। जिन स्त्रियों को पति के साथ शरीर सुख भोगने की इच्छा हो, उन्हें व्यभिचार से बचना चाहिए। व्यभिचारी व्यक्ति कदापि मोटे-ताजे बलवान् अथवा तन्दुरुस्त नहीं रह सकते! जो स्त्री अपने पति को व्यभिचार के लिए उत्तेजित करती है, अथवा व्यभिचारी पति को इसके लिए मना नहीं करती, वह अपने लिए वैधव्य को निमन्त्रित करती है। याद रक्खो, परिमित आहार-विहार ही मनुष्य को स्वस्थ रखता है। यदि स्त्री-पुरुष विषयी बनें तो, शरीर-सुख की स्वप्न में भी आशा मत करो। वेद कहता है कि पति को स्वस्थ रखने का फर्ज पत्नी का है। भले-बुरे समय पर हिताहित का ध्यान रखकर यदि पत्नी अपने पति को समझाती-बुझाती रहे, तो बहुत कुछ लाभ हो सकता है। बहनो! तुम्हें अकेले स्वस्थ रहने में आनन्द नहीं है, बल्कि अपने आराध्य देव-पति के साथ स्वस्थ रहने में सच्चा आनन्द है।

(४) ज्ञानवृद्ध बनकर सभा में वक्तृता दें। अर्थात् खूब ज्ञान प्राप्त करने के बाद अपने ज्ञान को, अपने अनुभवों को जनता के सम्मुख प्रकट करो। ज्ञान की प्राप्ति के लिए पढ़ना-लिखना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि पुस्तकों द्वारा ज्ञान प्राप्त करना पड़ेगा। हमारे ज्ञान का भण्डार पुस्तकों में है। हमारे पूर्वजों के उपदेश हमारे ऋषि मुनियों के अनुभव और तत्वज्ञान ग्रन्थों में लिखे हुए हैं। इसलिए यदि ज्ञान की प्राप्ति करनी है, तो स्त्रियों को अवश्य ही पढ़ना-लिखना पड़ेगा।

इस समय भारत में दो दल हैं। एक तो स्त्रियों को पढ़ाने-लिखाने के पक्ष में है, और दूसरा इस बात का विरोधी है। परन्तु हर्ष की बात

है कि स्त्री-शिक्षा विरोधियों का पक्ष अब धीरे-धीरे कमज़ोर होता ज रहा है। लोगों ने एक ऐसी मूर्खता-पूर्ण बात गढ़ली है कि "जो स्त्रिय पढ़ी-लिखी होती हैं, वे शीघ्र ही विधवा हो जाती हैं, या व्यभिचारिण निकलती हैं" इत्यादि। ये परिणाम विद्या के तो हो नहीं सकते। ह यदि बिना पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ कभी विधवा न होती हों, अथवा व्यभिचा से बची रहती हों तो, ऐसा भी माना जा सकता था। परन्तु यह नहीं है। ऐसी व्यर्थ की मूर्खता-पूर्ण बातें रचकर स्त्री-शिक्षा का विरोध करन धार्मिक पुरुषों का काम नहीं है। पहले समय में प्रायः सभी स्त्रिय पढ़ी-लिखी होती थीं, वे न तो इस वजह से विधवा ही हुई और न व्यभिचारिणी ही बनीं। न जाने, देश में कब से इस प्रकार स्त्रियों की शिक्षा का विरोध होने लगा। स्त्रियों को ज्ञान का अधिकार ही नहीं! स्त्रियों को अधम और शूद्रों के साथ गिना जाने लगा। यहाँ तक कि संस्कृत के विद्वानों ने स्त्री शिक्षा के विरोध में सैकड़ों श्लोक बना डाले।

"स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां न वेद श्रवणं मतम्।"

(देवी भागवत)

अर्थात्—स्त्री, शूद्र, और इनसे जो अधम हैं उन्हें वेद के उपदेश सुनने का अधिकार नहीं है। ये सब बातें स्वार्थी मनुष्यों के बनाए ग्रन्थों में पाई जाती हैं। वेद इस तरह के पक्ष-पात का विरोधी है और यह कहता है कि:—

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः
ब्रह्म राजन्याभ्याᳬ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।

यजुर्वेद० २६। २॥

अर्थात्—वेद वाणी, सबके लिए समान है। वह चाहे ही आर्य हो अनार्य हो, शूद्र हो या निषाद हो। इसके अतिरिक्त हमारे इतिहास

ग्रन्थों में सैकड़ों प्रमाण भरे पड़े हैं कि स्त्रियाँ अपने पति के साथ यज्ञ में सम्मिलित होती थीं। यहाँ तक कि बिना स्त्री के यज्ञ ही सफल नहीं माना जाता था। मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी एक पत्नी व्रत थे। जब उन्हें अश्वमेध-यज्ञ में स्त्री की आवश्यकता पड़ी तो स्वर्ण की सीता बना कर अपने वाम भाग में स्थापित करनी पड़ी। किन्तु जब सीता देवी आ गईं, तब सोने की सीता को हटा कर वहाँ उन्हें बैठाया।

समागतां वीक्ष्य पत्नीं रामचन्द्रस्य कुम्भजः।
सुवर्णपत्नीं धिक्कृत्य तामधाद्धर्मचारिणीम्॥

(पद्मपुराण पातालखण्ड)

इन प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि—यदि स्त्रियाँ शूद्रा ही मानी गई होतीं, तो उन्हें यज्ञ में सम्मिलित होने का कोई अधिकार ही न रहता। परन्तु शास्त्रों में तो यहाँ तक लिखा है कि बिना स्त्री के कोई जप, तप, दान, पुण्य, यज्ञ आदि सफल ही नहीं होते !!

शायद यहाँ कोई यह कह दे कि स्त्री जाति को केवल पति के ही साथ यज्ञादि पवित्र कार्यों में सम्मिलित होने की आज्ञा है। अकेले मना है, तो हम यहाँ पर दो प्रमाण उपस्थित करते हैं—

सन्ध्याकालमनाः श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी।
नदीं चेमां शुभजलां सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी॥

(वाल्मीकि)

अर्थात्—हनुमान जब लङ्का में पहुंचे, तब सीता देवी को न पाकर एक नदी किनारे पहुँच कर सोचने लगे कि अब सायंकाल हो गया है, भगवती सीता सन्ध्योपासना के लिए यहाँ अवश्य आवेंगी। ऐसा ही हुआ भी कुछ समय बाद हनुमान ने सीता जी को नदी के किनारे सन्ध्या करते देखा।

है कि स्त्री-शिक्षा विरोधियों का पक्ष अब धीरे-धीरे कमज़ोर होता जा रहा है। लोगों ने एक ऐसी मूर्खता-पूर्ण बात गढ़ली है कि "जो स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी होती हैं, वे शीघ्र ही विधवा हो जाती हैं, या व्यभिचारिणी निकलती हैं" इत्यादि। ये परिणाम विद्या के तो हो नहीं सकते। हाँ, यदि बिना पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ कभी विधवा न होती हों, अथवा व्यभिचार से बची रहती हों तो, ऐसा भी माना जा सकता था। परन्तु यह नहीं है। ऐसी व्यर्थ की मूर्खता-पूर्ण बातें रखकर स्त्री-शिक्षा का विरोध करना धार्मिक पुरुषों का काम नहीं है। पहले समय में प्रायः सभी स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी होती थीं, वे न तो इस वजह से विधवा ही हुईं और न व्यभिचारिणी ही बनीं। न जाने, देश में कब से इस प्रकार स्त्रियों की शिक्षा का विरोध होने लगा। स्त्रियों को ज्ञान का अधिकार ही नहीं! स्त्रियों को अधम और शूद्रों के साथ गिना जाने लगा। यहाँ तक कि संस्कृत के विद्वानों ने स्त्री शिक्षा के विरोध में सैकड़ों श्लोक बना डाले।

"स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां न वेद श्रवणं मतम्।"

(देवी भागवत)

अर्थात्—स्त्री, शूद्र, और इनसे जो अधम हैं उन्हें वेद के उपदेश सुनने का अधिकार नहीं है। ये सब बातें स्वार्थी मनुष्यों के बनाए ग्रन्थों में पाई जाती हैं। वेद इस तरह के पक्ष-पात का विरोधी है और वह कहता है कि:—

यथेमां वाचं कल्याणी मा वदानि जनेभ्यः
ब्रह्म राजन्याभ्याꣳ शूद्राय चार्याय चस्वाय चारणाय।

यजुर्वेद० २६। २॥

अर्थात्—वेद वाणी, सबके लिए समान है। वह भले ही आर्य हो अनार्य हो, शूद्र हो या निषाद हो। इसके अतिरिक्त हमारे इतिहास

ग्रन्थों में सैकड़ों प्रमाण भरे पड़े हैं कि स्त्रियाँ अपने पति के साथ यज्ञ में सम्मिलित होती थीं। यहाँ तक कि बिना स्त्री के यज्ञ ही सफल नहीं माना जाता था। मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी एक पत्नी व्रत थे। जब उन्हें अश्वमेध-यज्ञ में स्त्री की आवश्यकता पड़ी तो स्वर्ण की सीता बना कर अपने वाम भाग में स्थापित करनी पड़ी। किन्तु जब सीता देवी आ गईं, तब सोने की सीता को हटा कर वहाँ उन्हें बैठाया।

समागतां वीक्ष्य पत्नीं रामचन्द्रस्य कुम्भजः।
सुवर्णपत्नीं धिक्कृत्य तामधाद्धर्मचारिणीम्॥

(पद्मपुराण पातालखण्ड)

इन प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि—यदि स्त्रियाँ शूद्रा ही मानी गई होतीं, तो उन्हें यज्ञ में सम्मिलित होने का कोई अधिकार ही न रहता। परन्तु शास्त्रों में तो यहाँ तक लिखा है कि बिना स्त्री के कोई जप, तप, दान, पुण्य, यज्ञ आदि सफल ही नहीं होते !!

शायद यहाँ कोई यह कह दे कि स्त्री जाति को केवल पति के ही साथ यज्ञादि पवित्र कार्यों में सम्मिलित होने की आज्ञा है। अकेले मना है, तो हम यहाँ पर दो प्रमाण उपस्थित करते हैं—

सन्ध्याकालमनाः श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी।
नदीं चेमां शुभजलां सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी॥

(वाल्मीकि)

अर्थात्—हनुमान जब लङ्का में पहुंचे, तब सीता देवी को न पाकर एक नदी किनारे पहुँच कर सोचने लगे कि अब सायंकाल हो गया है, भगवती सीता सन्ध्योपासना के लिए यहाँ अवश्य आवेंगी। ऐसा ही हुआ भी कुछ समय बाद हनुमान ने सीता जी को नदी के किनारे सन्ध्या करते देखा।

सा क्षौमवसना हृष्टा नित्यं व्रतपरायणा।
अग्निं जुहोति स्म तदा मन्त्रवत्कृतमङ्गला॥
(वाल्मीकि)

चौदह वर्ष के लिए वनवास जाते वक्त जब श्री रामचन्द्रजी अपनी माता कौशल्या के महलों में आज्ञा प्राप्त करने के लिए पहुंचे तो वहाँ पर उन्होंने अपनी माता को ऊनी वस्त्र पहने मन्त्र पढ़ कर यज्ञ में आहुतियाँ डालते पाया। इत्यादि प्रमाणों से सिद्ध होता है कि स्त्रियों को पढ़ने का तथा सन्ध्योपासन एवं अग्निहोत्रादि पवित्र कार्य करने का पुरुषों की भाँति समान अधिकार है। मनुजी ने भी पुत्री को पुत्रवत् कहा है—

यथैवात्मा तथा पुत्रः पुत्रेण दुहिता समा।

अर्थात्—जैसे पुत्र आत्मा के तुल्य है वैसे ही कन्या भी पुत्र के समान है। इन सब बातों से सिद्ध होता है कि स्त्रियों को ज्ञानप्राप्ति के लिए पढ़ना-लिखना सीखना चाहिए। बिना पढ़े-लिखे स्त्रियाँ पशु के समान हैं। स्त्रियों को उचित है कि प्रायः धार्मिक पवित्र ग्रन्थों का ही अध्ययन करें। कुमार्ग पर ले जाने वाले साहित्य को भूल कर भी घर में न आने दें। वेद कहता है कि केवल ज्ञान ही नहीं, बल्कि ज्ञानवृद्ध बनो। जब तुम्हारे पास ज्ञान का भण्डार भरपूर हो जाय, तब सभा-समितियों में जाओ और व्याख्यान दो।

व्याख्यान से मतलब केवल ज़बानी जमा ख़र्च करने का नहीं है। बल्कि अपने ज्ञान के प्रकाश द्वारा दूसरों के अज्ञान अन्धकार को हटाओ। अपने अनुभवों को लोगों के सामने रक्खो और उन्हें उपदेश दो। ज्ञान प्राप्त करके उसमें अपनी आत्मा को ही पवित्र कर लेना यह वेद को अभीष्ट नहीं है। बल्कि अपने ज्ञान तथा अनुभव द्वारा मनुष्य-समाज का जितना भी कल्याण किया जा सके, करना चाहिये। वर्तमान युग में लेक्चरबाज़ी

एक हुनर सा बन गया है। ऐसे-ऐसे लोग भी हैं जिन्हें तिलमात्र अनुभव नहीं होता और बड़े लम्बे लम्बे व्याख्यान दे डालते हैं। इन्हीं कारणों से अब लोगों की दृष्टि में लेक्चरबाज़ी बुरी गिनी जाने लगी है। यदि इत्त-फ़ाक़ से कोई स्त्री प्लेटफ़ार्म पर आ भी जाय तो पुराने ढर्रे के लोग नाक-भौं सिकोड़ने लगते हैं। उसे बेशर्म, कुलाङ्गार और वेश्या कह डालते हैं। ऐसे लोगों को वेद के उक्त वचन पर ध्यान देना चाहिए। ज्ञानवृद्ध बन कर, स्त्री को उचित है कि स्त्री-समाज और पुरुष समाज में अपनी वक्तृता सुनावे।

पुरुष-समाज में स्त्री का व्याख्यान देने जाना शायद परदा-प्रेमी लोगों को बुरी तरह खटके! खटकना चाहिए भी। क्योंकि जो पुरुष स्त्रियों को हवा भी नहीं देना चाहते, जो स्त्री का नाख़ून भी दूसरे को नहीं दिखाना चाहते, वे ऐसी बातों से क्यों ख़ुश होंगे? परन्तु यहाँ इतना ही कह देना काफ़ी होगा कि "यह परदे की प्रथा भारत की प्राचीन प्रथा नहीं है। यह कुछ शताब्दियों से ही भारत के घरों में आ घुसी है। वेद में कहीं भी इस तरह के घातक परदे की आज्ञा नहीं है"। यही कारण है कि वेद कहता है—"स्त्रियो! ज्ञानवृद्ध होकर सभा-सोसाइटियों में व्याख्यान दो"।

---

(७) कुटुम्ब में रहो

ॐ इहैव स्तं मावि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वस्तकौ॥

अथर्व० १४। १। २२॥

(इह एव स्तं) तुम दोनों यहाँ ही रहो। (मावियौष्टं) अलग अलग मत होओ। (नप्तृभिः) नातियों के साथ (पुत्रैः) पुत्रों के साथ (क्रीडन्तौ) खेलते हुए (स्वस्तकौ मोदमानौ) अपने उत्तम घर से आनन्दित होते हुए (विश्वं आयुः) दीर्घायु (विअश्नुतं) प्राप्त करो।

(१) तुम दोनों स्त्री-पुरुष यहाँ ही रहो। अलग अलग मत होओ। पाणिग्रहण=संस्कार के पश्चात् पति पत्नी का धर्म है कि वे दोनों आमरण एक दूसरे का साथ न छोड़ें। एक दूसरे पर क्रुद्ध न हों और आपस में रूठें नहीं। कई देशों में "तलाक" दे देने की प्रथा है परन्तु भारत में अभी वैसा नहीं है। विदेशों में एक स्त्री कई पति कर सकती है और इसी तरह एक पति कई स्त्रियाँ रख सकता है। हमारे भारतवर्ष में इन बातों के लिए शास्त्रीय बन्धन और सामाजिक बन्धन कठोर हैं। स्त्री को चाहिए कि अपने घर में कलह का मौका आने ही न दे। पति कितना भी रुष्ट क्यों न हो, यदि क्रोध के समय तुमने शान्ति चुप्पी साधली तो उनका क्रोध कुछ भी नहीं बिगाड़ सकेगा। कहा भी है—

अगिन परी तृण रहित थल आपहिं ते बुझि जाय।

पदार्थ शून्य ज़मीन पर आग पड़ने से कुछ भी नहीं जला सकती, बल्कि खुद जल जाती है। इसी तरह एक के क्रोध के समय दूसरे ने शान्ति रक्खी तो वह क्रोध निष्फल हो जायगा। स्त्री को तो पति पर क्रोध करने की आज्ञा ही नहीं है। इसी प्रकार पति को भी मना है। परन्तु वर्त्तमान समय में देखा जाता है कि *प्रत्येक गृह पति-पत्नी के गृह-कलह* का अखाड़ा बन रहा है। देश के लिए इसका परिणाम बड़ा ही घातक हो रहा है। इस गृह-कलह से सुख-शान्ति का नाश हो गया। सन्तान अच्छी उत्पन्न नहीं होने पाती। लोग अल्पायु बन गए। इसके अपराधी पुरुष भी हैं परन्तु अधिकतर प्रायः स्त्रियों का ही दोष होता है। स्त्रियाँ अपढ़ एवं मूर्खा होने के कारण अपने धर्म का ज्ञान नहीं रखतीं, वे अपने को पति से उच्च मानकर उस पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहती हैं। उनकी सदा यही इच्छा रहती है कि मैं जिस प्रकार अपने पति को नाच नचाऊँ, वह उसी तरह नाचता रहे—वह मेरे हाथ की कठ पुतली हो। इसके लिए वे रात दिन चिन्तित रहती हैं। अपनी सखी-सहेलियों से इस

विषय की चर्चा किया करती हैं। साधु-फ़क़ीरों से जादू-टोना, गण्डा-मन्त्र, दवा-दारू, जड़ी-बूटी प्राप्त करती फिरती हैं। और वे मूर्ख जो कुछ भी उन्हें उपाय बता देते हैं उसे बिना सोचे-समझे कर डालती हैं। ऐसा करने के बाद कभी कभी तो स्त्रियों को जीवन भर पछताना पड़ता है। मुझे लिखते दुःख होता है कि कई अज्ञानी बहनें तो अपने पति पर अपना प्रभुत्व रखने की इच्छा से धोखे में पशुओं का मांस तथा विष्ठा तक खिला देती हैं! कैसी नीचता है! कितना भयङ्कर पाप है!!

जिन स्त्रियों को अपने पति के मन पर अधिकार प्राप्त करना हो उन्हें चाहिए कि "प्रेम" द्वारा उन्हें अपने वश में रक्खें। सच्चा प्रेम और सच्ची सेवा में यह शक्ति है कि खूँख्वार पशु तक अपने वश में किए जाते हैं। इसमें धर्म भी नष्ट नहीं होने पावेगा, और तुम्हारा उद्देश्य भी सफल होगा। इस तरह दोनों आपस में प्रेममय जीवन बना लेंगे तो अलग होने का मौक़ा नहीं आवेगा।

पति पत्नी दोनों आपस में आमरण मित्र होते हैं। एक दूसरे के दुःख-सुख का साथी होता है। दोनों के अधिकार यद्यपि समान हैं, तथापि पुरुषों के कुछ विशेष हैं। आजकल के लोग, जिन्होंने पाश्चात्य विचारों की हवा खा रक्खी है, कहते हैं कि हिन्दू शास्त्रों के रचयिता पुरुष हैं, अतएव उन्होंने स्त्रियों के प्रति बहुत ही अनुदारता से काम लिया है। प्रत्येक ग्रन्थ में स्त्रियों की निन्दा है और उन्हें तुच्छ ठहराया गया है, इत्यादि। परन्तु ऐसा नहीं है। भारत के अति प्राचीन ग्रन्थों में स्त्रियों का बड़ा भारी आदर प्रकट किया गया है। वर्तमान समय के ग्रन्थ लेखकों ने स्त्रियों के लिए अवश्य सङ्कीर्ण-हृदयता का परिचय दिया है। परन्तु इसके लिए लेखक वैसा दोषी नहीं है। स्त्री जाति को पतित देख कर ही उन्हें ऐसा लिखना पड़ा।

ढोल गँवार शूद्र पशु नारी।
ये सब ताड़न के अधिकारी ॥ इत्यादि।

वेदादि प्राचीन शास्त्रों में स्त्रियों के प्रति ज़रा भी घृणा नहीं दिखाई पड़ती। वहाँ समानता है। पुरुष वर्ग न जाने क्यों स्त्रियों को तुच्छ समझने लगा है। स्त्रियों को "पैरों की जूती" समझने वाले पुरुषों की संख्या अल्प नहीं है। जब कि पुरुष स्त्रियों को "जूतियाँ" समझने लगे, तब स्त्रियों का भी उनके लिए आदर-भाव कम हो गया। यह तो परस्पर का व्यवहार है। पुरुषों को चाहिए कि यदि घरेलू झगड़ों से बचना है, तो स्त्रियों का उचित आदर करें और स्त्रियों का फ़र्ज़ है कि "जैसा भी उन्हें पति मिला है, उसे देवता के समान समझ कर उसका आदर सम्मान करें।" इसी में महान्-आनन्द तथा परम सुख है।

हमारे भारत में पति पत्नी के प्रेम में अन्तर आने का एक कारण और भी है। वह "अनमेल विवाह" है। पुरुष स्त्री को नहीं देखता और स्त्री पुरुष को नहीं देखती। उनके माता पिता अथवा दूसरे आत्मीय जन दोनों का सिर भिड़ा देते हैं। नाई और ब्राह्मण स्त्री पुरुष के भाग्य विधाता बनकर उन्हें महान् कष्ट में डाल देते हैं। स्त्री पुरुष की अवस्था, रूप, कुल, स्वभाव, ज्ञान, योग्यता आदि जिन बातों के देखने की आवश्यकता होती है, उन्हें न देखकर काग़ज़ पर लिखी हुई जन्म पत्रियाँ मिलाई जाती हैं! कैसा अनर्थ है!! जिन्हें आजीवन मित्र बनकर रहना है, जिन्हें सारी उम्र एक साथ एक घर में एक बनकर गुज़र करनी है, उन्हें पाणिग्रहण के पहले यह भी नहीं मालूम होता है कि पुरुष को किसका पति बनना है और स्त्री को किसकी पत्नी बनना पड़ेगा। पञ्च कहलाने वाले लोग इकट्ठे होकर उन दोनों अपरिचित व्यक्तियों को पति पत्नी क़रार दे देते हैं!! मानों वे उन दोनों को इस बात का नोटिस

दे देते हैं कि तुम्हें आपस में झखमार कर प्रेम करना पड़ेगा! प्रेम भी कैसा? आमरण! एक दूसरे को नहीं छोड़ सकते। अगर छोड़ा तो जातीय दण्ड एवं राजदण्ड मिलेगा!! कैसा अन्धेर है? क्या इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर कोई भी विचार नहीं करेगा? देश में सुख और शान्ति की स्थापना के लिए पहले इस ओर ध्यान देना होगा। हिन्दू-सङ्गठन के नाम पर तोबा तिल्ला मचाने वालों को पहले हिन्दू जाति के इन दोषों को मिटाना पड़ेगा। बाल-विवाह और अनमेल-विवाह जैसे ज़हरीले कीड़े हिन्दू जाति के सारे शरीर में प्रवेश कर चुके हैं। केवल लैकचरों से सेवा-समितियों से अथवा व्यायाम शालाएँ खोल देने से ही हिन्दू जाति का उद्धार नहीं हो सकेगा। स्थाई सुधार तथा सङ्गठन के लिए सब से पहले हिन्दुओं को सामाजिक और नैतिक उन्नति की आवश्यकता है। बाद में धार्मिक, शारीरिक, मानसिक आदि उन्नति का नम्बर है। इन दोनों वैवाहिक दोषों के कारण आज घर घर में गृह-कलह है। जिन लोगों ने उपर्युक्त बातों पर पानी फेर कर विवाह किया है वे ही पति-पत्नी दुःखमय जीवन व्यतीत करते हैं। एक दूसरे से बोलना पसन्द नहीं करते। एक दूसरे से मन ही मन घृणा रखते हैं। एक दूसरे के विचारों में विरोध होता है। दोनों के दिल एक नहीं हो पाते। दोनों ही दुःख भरी आहें भरा करते हैं। इन गर्म आहों से गृहस्थ का समस्त सुख भस्म हो जाता है। स्वर्गीय आनन्द का देने वाला गृह, श्मशान के समान भयानक बन जाता है। व्यभिचार बढ़ता है। व्यभिचारी बढ़ते हैं। आत्म-हत्याएं होती हैं। घर से लोग निकल भागते हैं। ज़हर खाया जाता है। कूएँ पड़ा जाता है। इन बातों का मूल कारण एकमात्र अनमेल-विवाह है।

पहले समय में गृहस्थाश्रम की यह अधोगति नहीं थी। लोग इसे परम पवित्र तथा धन्यवाद के योग्य आश्रम मानते थे। कारण कि

उन दिनों स्वयम्वर की प्रथा देश में चालू थी। जब कन्याएं स्वयं विवाह की इच्छा प्रकट करती थीं; तब उनके पालक उनकी इच्छा के अनुसार पति चुन लिया करते थे। उस वक्त की कन्याएँ योग्य होती थीं और उनके माता पिता भी समझदार होते थे। परन्तु आजकल के मूर्ख मां बाप बेटी के सुख दुःख की ज़रा परवाह न करके मन माना कर डालते हैं। पालतू कुतिया के लिए अच्छा कुत्ता तलाश करेंगे, अपनी घोड़ी के लिए अच्छे घोड़े की खोज करेंगे, गौ के लिए उत्तम सांड देखेंगे, भैंस के लिए अच्छा पाड़ा ढूँढेंगे किन्तु खेद और महाखेद है कि अपनी पुत्री के लिए योग्य वर नहीं ढूँढते !! प्राचीन काल में कन्याएं खुद अपना पति ढूँढ लिया करती थीं। सीता, कुन्ती, द्रौपदी, दमयन्ती, सावित्री, पार्वती आदि नारीरत्नों के विवाह की कथाएँ जिन लोगों ने पढ़ी हैं या सुनी हैं वे हमारे कथन को सत्यासत्य का निर्णय कर सकेंगे। शिशुपाल ने बहुत चाहा कि रुक्मिणी का पाणिग्रहण मैं करूँ, किन्तु उसे यह वर स्वीकार नहीं था, अतएव पिता और भाई का विरोध करके उसने अपने मनोनीत पति श्री कृष्णचन्द्र के साथ ही विवाह किया। ऐसा करने के लिए रुक्मिणी को कैसे षड्यन्त्र रचने पड़े; यह किसी से छिपा नहीं है। हमारा प्राचीन इतिहास ऐसी अनेक कथाओं से भरा पड़ा है। क्या प्राचीन स्त्रियाँ निर्लज्ज थीं या ना समझ थीं ? नहीं, वे अपने अधिकारों को समझती थीं और उन्हें प्राप्त करने के लिए उनमें आत्मिक बल था। मैं अपनी बहनों से प्रार्थना करता हूं कि व्यर्थ की झूठी लज्जा में पड़कर अपना समस्त जीवन दुःख-पूर्ण न बनावें बल्कि योग्य पुरुष को ही अपना पति बनावें। ऐसा होने से आपस में मनोमालिन्य कदापि नहीं होगा, और वेद की आज्ञा का अच्छी तरह पालन हो सकेगा कि "तुम दोनों एक जगह रहो और अलग मत हो।"

भारत में कई जातियाँ ऐसी भी हैं; जिनमें पति पत्नी को, और

पत्नी पति को त्याग सकते हैं। इसे "घर बासा"-या "नातरा" कहते हैं। यह बुरा वेद विरुद्ध कार्य है। यह नहीं होना चाहिए। पहले से ही बहुत सोच समझकर पाणि-ग्रहण क्यों न किया जाय, जिससे अलग होने, या छोड़ने का मौक़ा ही न आवे!

(२) "पुत्र और नातियों के साथ खेलते हुए अपने घर से आनन्दित होते हुए सब आयु प्राप्त करो।" इस वाक्य में दो उपदेश हैं (१) पुत्र और नातियों के साथ खेलते हुए घर में आनन्दित रहो और (२) पूर्णायु प्राप्त करो। घर के लोगों के साथ और अपने पुत्र पुत्री नाती पौत्र आदि के साथ घर में प्रसन्नता पूर्वक रहो। अर्थात् बेटों पोतों से ऐसा उत्तम व्यवहार रक्खो कि वे तुमसे अलग न हो जायँ। एक ही घर में सब को बड़े आनन्द के साथ जीवन निर्वाह करना चाहिए। प्रायः माता-पिता अपने पुत्र को जब कि वह १५। १६ वर्ष का होता है, कुछ कटु वचन बोलने लगते हैं। और कुछ नहीं तो उसे कहते हैं कि "हमने पाल पोस कर पढ़ा लिखा कर (!) बड़ा कर दिया, अब अपने कमाओ खाओ। क्या जिन्दगी भर हमारे सिर कर्ज़ माँगते हो?" इत्यादि। बच्चा भी कुछ समझने लगता है। उसे अपने मा-बाप के ऐसे कड़ुए वचन कुछ असह्य हो जाते हैं। इससे घबड़ा कर या तो वे अलग हो जाते हैं, या कहीं परदेश में घूमने निकल जाते हैं। फ़िज़ी, जावा, मोरीशस, अफ़्रिका आदि देशों में ऐसे लोग अधिकांश मिलेंगे जो घर के लोगों से तङ्ग आकर छुटपन ही में आरकाटियों द्वारा इन द्वीपों में भेज दिए गए, जहाँ अपना नारकी जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इसलिए अपने बच्चों के प्रति इतना अच्छा व्यवहार रक्खो कि जिन्दगी खेलते-कूदते आनन्द में व्यतीत हो जाय।

प्रायः देखने में आया है कि जब कभी लड़का उद्दण्ड निकल जाता है और मा बाप का कहना नहीं मानता तब लोग श्रीरामचन्द्रजी की

उन दिनों स्वयम्बर की प्रथा देश में चालू थी। जब कन्याएं स्व विवाह की इच्छा प्रकट करती थीं, तब उनके पालक उनकी इच्छा के अनुसार पति चुन लिया करते थे। उस वक्त की कन्याएँ योग्य होती थीं और उनके माता पिता भी समझदार होते थे। परन्तु आजकल के मूर्ख मा बाप बेटी के सुख दुःख की ज़रा परवाह न करके मन माना कर डालते हैं। पालतू कुतिया के लिए अच्छा कुत्ता तलाश करेंगे, अपनी घोड़ी के लिए अच्छे घोड़े की खोज करेंगे, गौ के लिए उत्तम साँड देखेंगे, भैंस के लिए अच्छा पाड़ा ढूँढेंगे किन्तु खेद और महाखेद है कि अपनी पुत्री के लिए योग्य वर नहीं ढूँढत !! प्राचीन काल में कन्याएं खुद अपना पति ढूँढ लिया करती थीं। सीता, कुन्ती, द्रौपदी, दमयन्ती, सावित्री, पार्वती आदि नारीरत्नों के विवाह की कथाएँ जिन लोगों ने पढ़ी हैं या सुनी हैं वे हमारे कथन को सत्यासत्य का निर्णय कर सकेंगे। शिशुपाल ने बहुत चाहा कि रुक्मिणी का पाणिग्रहण मैं करूँ, किन्तु उसे यह वर स्वीकार नहीं था, अतएव पिता और भाई का विरोध करके उसने अपने मनोनीत पति श्री कृष्णचन्द्र के साथ ही विवाह किया। ऐसा करने के लिए रुक्मिणी को कैसे षड्यन्त्र रचने पड़े; यह किसी से छिपा नहीं है। हमारा प्राचीन इतिहास ऐसी अनेक कथाओं से भरा पड़ा है। क्या प्राचीन स्त्रियाँ निर्लज्ज थीं या ना समझ थीं ? नहीं, वे अपने अधिकारों को समझती थीं और उन्हें प्राप्त करने के लिए उनमें आत्मिक बल था। मैं अपनी बहनों से प्रार्थना करता हूं कि व्यर्थ की झूठी लज्जा में पड़कर अपना समस्त जीवन दुःख-पूर्ण न बनावें बल्कि योग्य पुरुष को ही अपना पति बनावें। ऐसा होने से आपस में मनोमालिन्य कदापि नहीं होगा, और वेद की आज्ञा का अच्छी तरह पालन हो सकेगा कि "तुम दोनों एक जगह रहो और अलग मत हो।"

भारत में कई जातियाँ ऐसी भी हैं; जिनमें पति पत्नी को, और

पत्नी पति को त्याग सकते हैं। इसे "घर बासा" या "नातरा" कहते हैं। यह बुरा वेद विरुद्ध कार्य है। यह नहीं होना चाहिए। पहले से ही बहुत सोच समझकर पाणि-ग्रहण क्यों न किया जाय, जिससे अलग होने, या छोड़ने का मौक़ा ही न आवे!

(२) "पुत्र और नातियों के साथ खेलते हुए अपने घर से आनन्दित होते हुए सब आयु प्राप्त करो।" इस वाक्य में दो उपदेश हैं (१) पुत्र और नातियों के साथ खेलते हुए घर में आनन्दित रहो और (२) पूर्णायु प्राप्त करो। घर के लोगों के साथ और अपने पुत्र पुत्री नाती पौत्र आदि के साथ घर में प्रसन्नता पूर्वक रहो। अर्थात् बेटों पोतों से ऐसा उत्तम व्यवहार रक्खो कि वे तुमसे अलग न हो जायँ। एक ही घर में सब को बड़े आनन्द के साथ जीवन निर्वाह करना चाहिए। प्रायः माता-पिता अपने पुत्र को जब कि वह १५। १६ वर्ष का होता है, कुछ कटु वचन बोलने लगते हैं। और कुछ नहीं तो उसे कहते हैं कि "हमने पाल पोस कर पढ़ा लिखा कर (!) बड़ा कर दिया, अब अपने कमाओ खाओ। क्या जिन्दगी भर हमारे सिर कर्ज़ माँगते हो?" इत्यादि। बच्चा भी कुछ समझने लगता है। उसे अपने मा-बाप के ऐसे कड़ुए वचन कुछ असह्य हो जाते हैं। इससे घबड़ा कर या तो वे अलग हो जाते हैं, या कहीं परदेश में घूमने निकल जाते हैं। फ़िज़ी, जावा, मोरीशस, अफ्रिक़ा आदि देशों में ऐसे लोग अधिकांश मिलेंगे जो घर के लोगों से तङ्ग आकर छुटपन ही में आरकाटियों द्वारा इन द्वीपों में भेज दिए गए, जहाँ अपना नारकी जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इसलिए अपने बच्चों के प्रति इतना अच्छा व्यवहार रक्खो कि जिन्दगी खेलते-कूदते आनन्द में व्यतीत हो जायं।

प्रायः देखने में आया है कि जब कभी लड़का उद्दण्ड निकल जाता है और मा बाप का कहना नहीं मानता तब लोग श्रीरामचन्द्रजी की

पितृ-भक्ति का उदाहरण रख कर अपने बच्चों की निन्दा किया करते हैं और उन्हें लज्जित करते रहते हैं। परन्तु रामचन्द्रजी के समान आज्ञा पालक पुत्र पाने की इच्छा रखने वाले माता-पिता को पहले दशरथ तथा कौशल्या के समान पुत्र-स्नेही बनना चाहिए। यदि माता-पिता सच्चा स्नेह रक्खेंगे और बच्चों के हृदय को दुःख पहुंचाने वाले कार्य न करेंगे, तो सन्तान अवश्य आज्ञाकारिणी होगी। इस प्रकार पुत्रों और नातियों के साथ घर में आनन्दपूर्वक खेलते-कूदते समय निकल जायगा। स्त्रियों को चाहिए, अपने बच्चों पर पूर्ण अनुराग रक्खें। शास्त्र कहते हैं—

मातृदेवोभव। पितृदेवोभव।

वैदिक सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य को दीर्घायु प्राप्त करनी चाहिए। अल्पायु होना बहुत ही बुरा है। माता पिता, पुत्र पुत्रियों के साथ खेलते कूदते आनन्द पूर्वक अपना समय व्यतीत कर रहे हों और दैवात् उनमें से किसी एक की मृत्यु हो जाय, तो सारा आनन्द नष्ट हो जाता है। बल्कि कभी कभी तो हृदय पर ऐसा भयानक आघात होता है कि मनुष्य, जीवन भर के लिए दुःखी बन जाता है। इसी कारण वेदों ने "दीर्घायु" के लिए कहा है। सब आनन्दित रहो और बड़ी आयु प्राप्त करो। कहीं ऐसा न हो कि "रङ्ग में भङ्ग" हो जाय! छोटे-छोटे बच्चों के मा-बाप न मरें और मा-बाप के रहते पुत्र-पुत्री का मरण न हो। यह वेद की इच्छा है। श्रीरामचन्द्रजी के राज्य-काल में पिता की उपस्थिति में पुत्र नहीं मरता था। वाल्मीकीय रामायण में लिखा है कि—

न पुत्रमरणं केचिद्

अर्थात्—उस वक्त पुत्र का मरण पिता के जीवित रहते नहीं सुना गया! वेद ने मनुष्य की आयु कम से कम १०० वर्ष की मानी है। इससे पूर्व मरने वाले की अकाल मृत्यु गिनी है। वेद में सैकड़ों मन्त्र वर्णित हैं।

यह इस पुस्तक का विषय न होने से हम इस पर विस्तार पूर्वक नहीं लिख सकते * । वेद कहता है कि:—

शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमुवसन्तान् । शतंत इन्द्रो अग्निः सविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषा हार्षमेनम् ॥　　-अथर्व० ३ । ११ । ४ ॥

इस मन्त्र में मनुष्य को सौ वर्ष तक जीते रहने की आज्ञा है । प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह सौ वर्ष तक जीने का उपाय करे । यह मान लेना कि, जो कुछ भी हमारे भाग्य में परमात्मा ने लिख दिया है, उसमें से एक तिल भी कम नहीं हो सकता, ठीक नहीं है । यह साधारण बुद्धि के लोगों का अनुमान है । वेद इस बात को स्वीकार नहीं करता । वह मृत्यु को दूर ढकेल देने की आज्ञा देता है—पहाड़ के नीचे दबा देने की आज्ञा देता है । वहां साफ़ कहा गया है कि—ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत । अर्थात्—ब्रह्मचर्य रूपी तप से देवताओं ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की । यदि मृत्यु अटल और अनिवार्य ही होती तो मृत्यु पर विजय पाने की सूचना देने वाला यह मन्त्र वेद में कदापि नहीं होता । स्त्री पुरुषों को चाहिए, दीर्घायु प्राप्त करने के लिए वीर्यरक्षा, शुद्ध अन्न, शुद्ध जल, शुद्ध वायु, शुद्ध स्थान और शुद्ध प्रकाश का निरन्तर ध्यान रक्खें । जो लोग वीर्य-रक्षा का ध्यान रक्खेंगे, वे अवश्य दीर्घजीवी बनेंगे । कहा है—

मरणं बिन्दुपातेन, जीवनं बिन्दुधारणात् ।

इसके अतिरिक्त परिमित आहार-विहार का भी ध्यान रखना आवश्यक है । क्रोध, शोक, चिन्ता, दुःख आदि से भी बचना चाहिए । क्योंकि

---

* मेरी लिखी हुई "दीर्घायु" नामक सचित्र पुस्तक में इस विषय पर खूब लिखा गया है । जिन्हें देखना हो "आर० डी० वाहिती एण्ड कं० नं० ४ नौर बागान कलकत्ते से ३॥) रु० में मँगाकर देखलें ।"　　(लेखक)

ये भी आयु क्षीण करने वाले हैं। सारांश यह है कि, स्त्रियों को चाहिए, अपने घर में सुख अनुभव करने योग्य परिस्थिति बनाकर अपने बाल बच्चों के साथ आनन्द पूर्वक निवास करती हुई सम्पूर्ण आयु प्राप्त करके चिरकाल तक जीवित रहें।

---

(८) पवित्रता

ॐ अश्लीला तनूर्भवति रुशाति पापयामुया
पतिर्यद् वध्वो३ वाससः स्वमङ्गमभ्यूर्णुते।

अथर्व० १४। १। २७

(रुशती तनूः) तेजस्वी शरीर (अमुयापापया) इस बुरे आचरण से (अश्लीला) घृणित होता है, जो (वध्वः वाससः) पहने हुए वस्त्रों से (पतिः) पति अपने शरीर को (अभ्यूर्णुते) ढक लेता है।

(१) उस पुरुष का तेजस्वी शरीर अपवित्र हो जाता है जो स्त्रियों के पहने हुए वस्त्रों को पहनता है। स्त्री को चाहिए कि वह अपने पहने हुए अथवा पहनने के वस्त्र अपने पति को न पहनने दे। इससे पति को हानि पहुँचती है। वह अपवित्र हो जाता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह पतित अथवा शूद्र बन जाता है। तात्पर्य यह है कि उसका पुरुषार्थ, तेजस्वी शरीर, निर्बल अथवा तेजोहीन हो जाता है। क्योंकि मनुष्य जैसा वस्त्र धारण करता है, उसका वैसा ही स्वभाव हो जाता है या यों भी कहा जा सकता है कि मनुष्य अपने स्वभाव के अनुसार ही अपनी पोशाक भी रखता है। तेज़ मिज़ाज़, क्रोधी, उद्दण्ड, तथा झगड़ालू व्यक्ति सिपाहियाने कपड़े पसन्द करता है। व्यभिचारी, कामी तथा नाज़ुक व्यक्ति, चटकमटकदार भड़कीली बारीक और मुलायम पोशाक पहनता है। धार्मिक, सीधे, सज्जन, परोपकारी, श्रमजीवी व्यक्ति सादा और मोटे

वस्त्र पहनेंगे। हिजड़े और नपुंसक, जनाने वस्त्रों से सारे शरीर को ढाकेंगे। वेद की यही मंशा है कि, जनाने वस्त्र पहन कर पुरुषार्थी पुरुष अपने तेज को खोकर कहीं जनाना न बन जाय। इसलिए मना किया है कि अपने पति के शरीर को तुम अपने ओढ़ने पहनने के वस्त्रों से मत ढाँको।

एक बात और भी है, कि या तो पुरुष को स्त्री के वस्त्रों के लिए ही मना किया गया है, परन्तु शास्त्रकारों ने तो दूसरे के पहने वस्त्रों को पहनने के लिए स्पष्ट निषेध कर दिया है। एक दूसरे के वस्त्र पहनने या ओढ़ने से आयु क्षीण हो जाती है। महाभारत युद्ध समाप्त होने के बाद, जब लोगों ने श्रीभीष्मदेव से उनके दीर्घायु होने का कारण पूछा था; तब उन्होंने और बहुत सी बातों के साथ ही साथ एक कारण यह भी बताया था कि मैंने आज तक दूसरे के पहने हुए वस्त्र और जूते कभी नहीं पहने। भीष्मजी का यह वाक्य विचार करने योग्य है। यही ध्वनि उपर्युक्त वेद-मन्त्र से निकलती है। स्त्रियों को उचित है कि अपने पति की दीर्घायु चाहने की इच्छा से उन्हें अपने कपड़े लत्ते कदापि न पहनने दें। अपने पहनने के तथा ओढ़ने-बिछाने के वस्त्र अलग रक्खें और पति अलग।

आजकल मूर्ख स्त्रियाँ, अपने पति को अलग बिछौने पर सोता देख कर अनेक प्रकार की शङ्काएं करने लगती हैं। वे समझने लगती हैं कि पति हमसे प्रेम नहीं करते, हमसे घृणा करते हैं। शायद पर-स्त्री संसर्ग हो, इत्यादि। ऐसी मूर्खता-पूर्ण बातों ने ही भारतवासियों को बर्बाद कर दिया है। एक बिछौने पर पति पत्नी का सोना तो दूर रहा बल्कि भाई भाई का, पिता पुत्र का एक साथ सोना बुरा है। मा अगर अपने बच्चे को अपने बिछौने पर सुलाती है, तो समझलो कि वह अपने बच्चे को अपने हाथों विष देती है। कहने का तात्पर्य यह है कि एक बिछौने पर एक व्यक्ति को ही सोना चाहिए। दो मनुष्यों के एक पर सोने के कारण आपस

में प्रेम मत समझो, बल्कि आपस में एक दूसरे को अपना शत्रु मानो। माना कि आपको, एक बिछौने पर दो के सोने का बुरा परिणाम मालूम नहीं पड़ा किन्तु वास्तव में यह एक दूसरे को भयङ्कर हानि पहुंचाता है। मनुष्य शरीर में से रोमछिद्रों द्वारा रात, दिन विजातीय द्रव्य-ज़हरीले पदार्थ निकलते रहते हैं, इसीलिए सटकर सोना बहुत ही बुरा है। यदि सोते वक्त दोनों ने ऊपर से ओढ़ लिया तो, जो विषैले द्रव्य शरीर में निकलते हैं वे बाहर नहीं जा सकते और शरीर पर बुरा प्रभाव डालते हैं। स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, अनेक रोग पैदा हो जाते हैं। बिना किसी प्रत्यक्ष बीमारी के ही शरीर निर्बल और पीला पड़जाता है। जो माताएं अपने नन्हें नन्हें बच्चों को अपने शरीर के साथ चिपटाकर वस्त्र से ढाँककर सोती हैं, उनके बच्चे मर जाते हैं। यदि दैवयोग से बच्चे का शरीर उस दूषित वायु को सह गया, तो वह पनपने नहीं पाता तथा ज़िन्दगी भर रोगी रहता है। इन सब बातों से यह सिद्ध होता है कि दो आदमियों का एक वस्त्र ओढ़ कर सोना अत्यन्त हानिप्रद है।

शरीरशास्त्रज्ञों का कहना है कि, एक वस्त्र ओढ़कर सोना तो दरकिनार रहा, एक कमरे में भी दो मनुष्यों को नहीं सोना चाहिए। पन्द्रह फीट लम्बे और इतने ही चौड़े कमरे में एक आदमी को सोना चाहिए, बशर्ते कि उसमें काफ़ी हवा आती हो। इससे बड़े कमरे में उसकी लम्बाई चौड़ाई की हैसियत से, एक से अधिक सो सकते हैं, परन्तु हवा के आने जाने के लिए मार्ग खुब हों। खुले मैदान में, बरण्डे में जहां शुद्ध हवा स्वतन्त्रता पूर्वक आती जाती हो, पास पास भी सो सकते हैं, लेकिन एक ओढ़ने में दो आदमी कदापि न हों। इन बातों का ध्यान रखने से शरीर स्वस्थ, दृढ़, पुष्ट और बलवान् बनकर दीर्घायु प्राप्त करता है। जो स्त्री-पुरुष एक बिछौने पर नहीं सोते वे भलीभाँति ब्रह्मचर्य का पालन कर सकते हैं। इन सब बातों को विचार कर ही वेद कहता है कि—"स्त्रियो!

अपने वस्त्र से अपने पति को शरीर मत ढकने दो; अर्थात् अपने ओढ़ने बिछाने तथा पहनने के वस्त्रों का पति के लिए उपयोग मत होने दो। नहीं तो उनका तेजस्वी शरीर इस अनुचित कार्य से भद्दा, अपवित्र हो जायगा"। सारांश यह कि स्त्री का वस्त्र पुरुष को अपने काम में नहीं लाना चाहिए।

---

(६) सुख की प्राप्ति

ॐ शंते हिरण्यं शमु सन्त्वापः शंमेथिर्भवतु शंयुगस्य तर्द्म।
शंत आपः शतपवित्रा भवन्तु शमु पत्या तन्वं १ संस्पृशस्व॥

अथर्व० १४।१।४०

(हिरण्यं) स्वर्ण (आपः) जल (मेथिः) पशु बांधने का खूंटा (युगस्यतर्द्म) जूए के छिद्र (शतपवित्रा आपः) सैकड़ों प्रकार से बने हुए जल (ते शंभवन्तु) तेरे लिए कल्याणकारक हों। इस सुख से युक्त तू (पत्या) पति के साथ (तन्वं) शारीरिक सुख को (संस्पृशस्व) प्राप्त कर।

(१) हे स्त्री! स्वर्ण, जल, विविधपेय द्रव्य, पशुशाला, गाड़ी आदि वाहनों के सुखों का उपभोग करती हुई तू अपने पति के साथ शारीरिक सुख प्राप्त कर। यहाँ कहा गया है कि धातुओं में बहुमूल्य धातु "स्वर्ण" घर में अवश्य हो। प्राचीन काल में स्वर्ण के सिक्के चलते थे। उस समय वर्तमान काल की तरह गिन्नी (सावरन) नहीं होती थीं जो खालिस सोने की नहीं हैं और जिनमें दूसरी कम कीमती धातुएं भी मिली हुई हैं। प्राचीन समय में जो चाँदी सोने का सिक्का चलता था, वह बिलकुल शुद्ध स्वर्ण या चाँदी का हुआ करता था। इसलिए वेद कहता है कि तुम्हारे घर में एव स्वर्ण हो। मोहरें और

हुई (पत्युः अनुव्रता) पति की इच्छानुसार चलने वाली (भूत्वा) बन कर (कं) अपना सुख (अमृताय सं नह्यस्व) अमरत्व के साथ साथ जोड़ दे।

(१) "स्त्री को चाहिए कि प्रसन्नता, सन्तान, ऐश्वर्य और धन के साथ ही साथ पति की आज्ञानुवर्त्ती बने।" धन और बाल बच्चों का सुख प्राप्त करके, स्त्री को इतरा नहीं जाना चाहिए। बहुत सी स्त्रियाँ धन और सन्तान पाकर गर्व करने लगजाती हैं, यह बहुत ही बुरा है। इन अस्थायी ऐश्वर्यों को पाकर घमण्ड करना, ओछापन है। जो इन सुखदाई वस्तुओं का मूल उद्गम है, उस पति को ही अपना सर्वस्व मानना चाहिए। द्रव्य और सन्तान प्रभृति ऐश्वर्यों को पाकर पति को तुच्छ समझने लगना कमीनापन है। मनुस्मृति में कहा है कि:—

सततं देववत्पतिः। ५। १५४॥

अर्थात्—पति की सदा देवता की तरह इज्जत करनी चाहिए।

अपत्य लोभाद्या तु स्त्री भर्त्तारं मति वर्त्तते।
सेह निन्दा मवाप्नोति पतिलोकाच्च हीयते॥ (मनु)

जो स्त्री सन्तान आदि के लिए अपने पति की परवाह नहीं करती, उसका इहलोक और परलोक, दोनों बिगड़ जाते हैं। श्रीमद्भागवत में भी लिखा है कि:—

पतिरेव हि नारीणां दैवतं परमं स्मृतम्॥

स्त्री के लिए केवल पति ही परमाराध्य देव है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी रामायण में लिखा है कि:—

एकै धर्म, एक व्रत नेमा। काय वचन मन पतिपद प्रेमा।

... बहनो! धन, सन्तान आदि सुख सामग्रियों को पाकर तुम पति

से विमुख हुई, तो इन्हें नाश होते कुछ भी देरी न लगेगी। प्राचीन भारतीय ललनाओं के जीवन-चरित्र पढ़ो, उनके पढ़ने से तुम्हें मालूम हो जायगा कि, उन्होंने पति-सेवा के आगे धन और सन्तान को किस तरह ठुकराया है। यहाँ एक आख्यायिका है।

"कोई एक ब्राह्मण राजा के यहाँ से यज्ञ कराके, अपने घर को वापस आया। थक जाने के कारण वह अपनी स्त्री की जङ्घा पर सिर रख कर सो गया, नीन्द आगई। दैवयोग से उसका छोटा बच्चा घुटनों चलते-चलते अग्नि-कुण्ड में जा गिरा। उस वक्त "पुत्रं पतन्तं प्रसमीक्ष्य पावके न बोधयामास पतिं पतिव्रता।" अपने पुत्र को आग में गिरा देख कर भी उस स्त्री ने पतिदेव की निद्राभङ्ग हो जाने के भय से उफ़ तक नहीं किया, उसी प्रकार अचल बैठी रही। जब उसका पति उठा और उसने अपने पुत्र के विषय में पूछा तो उस पतिव्रता ने उसके अग्नि कुण्ड में गिर जाने का वृत्तान्त कह सुनाया।

तदाभवत्तत्पतिधर्मगौरवात् हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः।

तब पातिव्रत-धर्म के प्रभाव से अग्नि भी चन्दन के समान शीतल हो गया। उन स्त्री-पुरुषों ने जाकर देखा कि अग्निकुण्ड में बच्चा आनन्द से पड़ा हुआ है।"

इससे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि, स्त्री के सब सुखों में पतिसुख ही सर्वोपरि माना गया है। परन्तु वर्तमान समय में, यदि देखा जाय तो ऐसी स्त्रियाँ बहुत मिलेंगी, जो धन सन्तान पाकर पति को तुच्छ समझने लगती हैं। उन्हें धन और पुत्र से अधिक स्नेह होता है। इनके लिए दिलोजान से मरती हैं। पति से कभी हँस कर बोलती भी नहीं। जब देखो तब बात बात पर उन्हें काटने दौड़ती हैं। अपने बच्चों को लेकर अलग हो जाने की धमकियाँ दिखाती हैं, या अलग हो जाती

हैं। ये सब आचरण अवैदिक हैं। धार्मिक स्त्रियों को इन बातों से बहुत बचना चाहिए। शास्त्रकारों ने लिखा है:—

न दानैः शुध्यते नारी नोपवासशतैरपि ।
न तीर्थसेवया तद्वत् भर्तुः पादोदकैर्यथा ॥

स्त्री यदि धन पाकर घमण्ड करे कि, मैं दान, व्रत तथा तीर्थ यात्रादि से उत्तम गति और आत्मा को पवित्र कर सकूँगी, तो ऐसा सोचना भूल है। स्त्री की शुद्धि तो उसके पति के चरणोदक से ही होती है। इसलिए वेद कहता है कि इन नरक में ले जाने वाले पुत्र और धन आदि साधनों से प्रेम मत करो, बल्कि इनके उपभोग के साथ ही साथ पति की आज्ञा में रहो।

जिस समय तुम्हारे पति घर में आवें, उस वक्त तुम यदि बैठी हो तो उठ कर और खड़ी हो तो आगे बढ़ कर उनका आदर-सत्कार करो। उनके पैरों को छुओ, और जल आदि के लिए पूछो। बैठने के लिए आसन दो, और ऐसी बातें करो जिनसे उनका चित्त प्रसन्न हो। सासजी ने यह कहा, और ननदजी ने ऐसा किया, जेठानीजी ने गाली दी, और देवरानीजी घर का कुछ भी धन्धा नहीं करतीं—इत्यादि मूर्खता-भरी बातें कह कर अपने पति के चित्त को व्यथित मत करो। यह सच है कि स्त्री का सहारा एकमात्र पति ही है, यदि ऐसी बातों को अपने पति से ही न कहे, तो फिर किससे कह कर अपना जी हलका करे? अपने पति से अपना दुःख-दर्द अवश्य कहना चाहिए, किन्तु मौका देख कर। साथ ही एक प्रार्थना यह भी है कि छोटी-छोटी बातों को दुःख-दर्द बना कर अपने पति के सामने रोने बैठना कहाँ की बुद्धिमत्ता है? आखिर मर्द भी तो सैकड़ों की सहते हैं! अगर तुमने घर में अपनी सास ननद की बातों को सह लिया, तो कौनसा एहसान कर डाला! असल बात तो यह है कि तुम अपने घर के लोगों को अपना नहीं समझतीं, उनसे डाह रखती हो!

तभी तो छोटी-छोटी बातें पति के कान में फूँक देती हो! इस तरह गृहस्थी का सुख न मिलेगा। तुम्हें अपने मन की सङ्कीर्णता निकाल देनी चाहिए और ऐसे कार्य करने चाहिएं, जिनसे तुम्हारे पति को आनन्द हो। तुम्हारी सास और ननद, तुम्हारे पति की पूज्य माता और बहन हैं। फिर भला उन्हीं की चुगली–निन्दा तुम अपने पति के सामने करके उनका दिल क्यों दुखाती हो? तुमसे कहीं अधिक दर्जा तुम्हारी सास और ननद का है। एक तो तुम्हारे पति के शरीर का जन्म देने वाली है और दूसरी उसी गर्भ से उत्पन्न होने वाली उनकी बहन है। पति के सामने इनका विरोध प्रकट करना तुम्हारी मूर्खता है। बहनो! इन घर-फोड़ी बातों को अपने हृदय में न आने दो। जबतक तुम्हारे पति महाराज घर में रहें, तबतक तुम उनकी आज्ञानुवर्त्तिनी रहो और उन्हें प्रसन्न रख कर उनकी सेवाभक्ति करो। यही तुम्हारा धर्म्म है। जब तुम्हारे पति खाने कमाने के धन्धे में लगे हों, उस वक्त घर के बड़े बूढ़ों की सेवा करो, और उनकी आज्ञापालन में तत्पर रहो। अपने सास-ससुर की सेवा सच्चे मन से करो। इससे तुम्हारे पति तुमसे बहुत प्रसन्न होंगे।

जो कुछ भी तुम्हें तुम्हारे पति आज्ञा दें, उसे बिना आलस्य के पालन करो, बेपरवाही मत बनो। यदि तुम कुछ काम पहले से कर रही हो और इसी मौक़े पर तुम्हारे पति ने तुम्हें कोई अन्य कार्य करने की आज्ञा दी तो तुम्हें तत्काल अपना पहला काम छोड़ कर अपने पति की आज्ञा पालन करनी चाहिए। इसी में तुम्हारा कल्याण है। पति की ग़ैर-हाज़िरी में भी ऐसा कोई काम न करो, जो पति की इच्छा अथवा उद्देश्य के विरुद्ध हो। प्रत्येक बात में, प्रत्येक कार्य में, अपने पति का ध्यान रक्खो। कोई भी कार्य, भूल कर भी, ऐसा न करो जिससे पति का दिल नाराज़ हो। इस तरह पतिसेवा द्वारा अमरत्व प्राप्त करना चाहिए।

अर्थात् पति-लोक की अधिकारिणी बनना चाहिए। इस वेद मन्त्र का यही उपदेश है।

---

(११) पत्नी के अधिकार

ॐ यथासिन्धुर्नदीनां साम्राज्यं सुषुवे वृषा।
एवात्वं सम्राज्ञ्येधि पत्युरस्तं परेत्य॥

अथर्व० १४ । १ । ४३

(यथा) जैसे (वृषासिन्धुः) बलवान् समुद्र ने (नदीनां) नदियों का (साम्राज्यं) चक्रवर्ती राज्य (सुषुवे) उत्पन्न किया है (एव) इसी तरह (पत्युः अस्तं पराइत्यः) पति के घर जाकर (त्वं सम्राज्ञी एधि) तू सम्राट् की पत्नी बन।

(१) जिस प्रकार बलवान् समुद्र ने, नदियों पर चक्रवर्ती राज्य स्थापित किया है, उसी तरह स्त्री को चाहिये कि वह अपने घर में सम्राज्ञी का पद प्राप्त करे। स्त्रियों को यहाँ नदी और समुद्र के उदाहरण पर पहले विचार करना चाहिए। समुद्र ने यदि सम्राट् पद प्राप्त किया है, तो नदियों के कारण। यदि नदी नाले इकट्ठे हो होकर समुद्र में न जायँ तो उसे कौन "सरित्-पति" कह सकता था? इसी तरह नदियों द्वारा प्राप्त जल को सूर्य अपनी किरणों द्वारा समुद्र से खींचकर यदि जलवृष्टि नहीं करते, तो नदियाँ समुद्र को जल कहाँ से देतीं? कैसा अच्छा परस्पर सम्बन्ध है। एक दूसरे की मानवृद्धि करता है। यदि नदियाँ जाकर समुद्र से मिलती हैं तो समुद्र अपनी सम्पदा नदियों को प्रदान कर उन्हें तृप्त कर देता है। अपने सम्राट् से इस प्रकार असंख्य, विपुल जीवन प्राप्त कर नदियाँ फिर अपना जीवन, आभार पूर्वक समुद्र को अर्पण कर देती हैं। इस उदाहरण से यह सिद्ध होता है कि

सम्राट् बनने के लिए क्या करना चाहिए। यदि किसी की भी परवाह न कर कोई सम्राट् बनना चाहे, तो कदापि नहीं बन सकता। सम्राट् बनने के लिए वैसे आचरण, गुण और स्वभाव भी होने चाहिएं। घर में अपना आधिपत्य स्थापित करने की योग्यता होनी चाहिए। घर के लोगों के साथ यथावत् व्यवहार करना चाहिए। अपनी इज्ज़त चाहने वाले को पहले दूसरों की इज्ज़त करनी चाहिए। जो दूसरों को तुच्छ मानकर केवल अपने को ही बड़ा प्रदर्शित करना चाहता है, वह मूर्ख है। शायद कुछ समय के लिए लोग किसी कारणवश उसकी इज्जत करें किन्तु सदा के लिए ऐसा होना असम्भव है। इसलिए, जिन स्त्रियों को घर की मालकिन अर्थात् सम्राज्ञी बनना हो, उन्हें चाहिए कि वे कुटुम्ब के लोगों की यथावत् इज्ज़त करनी सीखें।

मैं सम्राज्ञी हूं, इसलिए सब लोग मेरा मान करो ऐसा नहीं हो सकता। स्वामी बनने के लिए अथवा सम्मान प्राप्त करने के लिए हमें "सेवक" बनना चाहिए। गरुड़ ने सेवा के द्वारा ही मान प्राप्त किया है। कहा जाता है कि विष्णु का वाहन गरुड़ है। किन्तु वही सेवक गरुड़ उनके झण्डे में चित्रित होता है और वे "गरुड़ध्वज" नाम से पुकारे जाते हैं। इसी प्रकार शिव का वाहन वृषभ है और उनके झण्डे में भी वृषभ चित्रित होता है। लोग शिव को "वृषभ-ध्वज" भी कहते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार गरुड़ और वृषभ ने सेवा द्वारा उच्च स्थान प्राप्त किया, उसी तरह तुम्हें भी सेवा द्वारा घर की सम्राज्ञी बन जाना चाहिए।

कहीं यह न समझ लेना कि मेरा पति सम्राट् है, और मैं घर की सम्राज्ञी! इसलिए सास, ससुर आदि की मुझे परवाह नहीं। उन्हें मेरी सेवा करनी चाहिए तुम्हारे सास-ससुर आदि पूज्य ... रह चुके हैं, अब तुम उनके आसन पर ...

अपने स्थान पर दूसरे सम्राट् को स्थापित करता है तो उस नए सम्राट् का कर्त्तव्य हो जाता है कि वह भूतपूर्व सम्राट् की प्रजा बनकर सेवा करे। उन्हें किसी प्रकार से कष्ट न पहुंचने दे। जो कंस की तरह या औरङ्गजेब की तरह, बलपूर्वक सम्राट् बनना चाहते हैं; वे उन्हीं की तरह बदनामी सहकर बुरी तरह नष्ट हो जाते हैं। सारांश यह है कि, स्त्रियों को चाहिए, वे अपने पूज्य पुरुषों का समुचित आदर किया करें। उनकी शिक्षा ग्रहण करें, उनसे सम्मति लिया करें। सच्चे दिल से उनकी सेवा करें और उनकी आज्ञानुवर्त्ती रहें। इस प्रकार व्यवहार करने वाली स्त्रियाँ अपने घर में अपने आप उच्च पद प्राप्त कर लेती हैं। घर के प्रत्येक आदमी के मन में उनके लिए प्रेम और श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है।

वेद कहता है कि "पति के घर जाकर तू सम्राट् की पत्नी बन"। अर्थात्-स्त्री केवल पति के घर ही सम्राज्ञी हो सकती है, पिता के घर नहीं! सम्राट्-पति के न रहने पर स्त्री का सम्राज्ञी पद हलका हो जाता है। क्योंकि—

वाल्ये पितुर्वशे तिष्ठेत्पाणिग्राहस्य यौवने।
पुत्राणां भर्तरि प्रेते न भजेत् स्त्री स्वतन्त्रताम् ॥ (मनु)

बाल्यावस्था में स्त्रियों को पिता के, यौवनावस्था में पति के और पति के मरने पर पुत्र के वश में रहना चाहिए। सम्राट्-पिता की कन्या को कोई सम्राज्ञी नहीं कहता और न कोई सम्राट्-पुत्र की माता को ही सम्राज्ञी कह सकता। केवल सम्राट् पति की पत्नी ही सम्राज्ञी हो सकती है। तात्पर्य यह है कि स्त्री को जो सम्राज्ञी का पद मिलता है वह पति के कारण ही मिलता है। जो स्त्री पति की अवहेलना कर घर पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहे, वह मूर्खा है। पति के घर जाकर ही सम्राट् की भार्या होने के कारण, स्त्री सम्राज्ञी हो सकती है। जबतक पति मौजूद है, तभी तक स्त्री भी सम्राज्ञी है।

सम्राट् और सम्राज्ञी को अपने राज्य की उचित व्यवस्था रखनी पड़ती है। इसी तरह पति-पत्नी को अपने अधिकृत घर का प्रबन्ध अच्छा रखना पड़ेगा। सम्राट् के हाथ के नीचे उसकी आज्ञानुसार सम्राज्ञी को अर्थात् गृहिणी को कार्य करना चाहिए। राज्य के कार्य-सञ्चालन के लिए शिक्षित तथा बुद्धिमान् सम्राट्-सम्राज्ञी चाहिएं। मूर्खा, अशिक्षिता और उद्दण्ड स्त्रियाँ सम्राज्ञी नहीं बन सकतीं। जिनका अपने शरीर पर, बुद्धि पर और मन पर शासन नहीं; वे सम्राट् या सम्राज्ञी कैसे बन सकते हैं? स्त्रियों को चाहिए कि वे इस वैदिक उपदेश पर खूब विचार करें और अपने को सम्राज्ञी बनाने का प्रयत्न करें। अब जो आगे का मन्त्र है वह भी इसी विषय का है, इसलिए उस पर विचार करना चाहिए।

(१२) सम्राज्ञी का पद

ॐ सम्राज्ञ्येधि श्वशुरेषु सम्राज्ञ्युत देवृषु।
ननान्दुः सम्राज्ञ्येधि सम्राज्ञ्युत श्वश्र्वाः॥

अथर्व० १४। १। ४४

(श्वशुरेषु) अपने ससुर आदि के बीच (देवृषु) देवरों के मध्य (ननान्दुः) ननद के साथ और (श्वश्र्वाः) सास के सङ्ग (सम्राज्ञी एधि) महारानी होकर रह।

(१) ससुर, देवर, ननद और सास के साथ महारानी बनकर रह। वेद कहता है कि "स्त्रियो! अपने पति के पिता, माता, भाई और बहन से तुम सम्मान प्राप्त करो"। परन्तु आजकल देखने में आता है कि स्त्रियाँ इन्हीं से विरोध रखती हैं। सास-ससुर, देवर-देवरानी ननद-भौजाई उन्हें नहीं सुहातीं। इसका उत्तरदायित्व माताओं पर है। जो माताएं अपनी पुत्रियों को उनके ससुराल से लौटने पर मीठी मीठी

बातें कह कर झूठा प्यार करती हैं, वे अपनी लड़कियों को बिगाड़ती हैं। वे अपनी बेटी से उसकी ससुराल की बातें पूछती हैं और मा समझ बेटी उनसे बिना सङ्कोच के सब कुछ कह देती हैं। माता अपनी बेटियों से ससुराल की बातें सुनकर ऐसा मुँह बनाती और दुःख प्रकट करती हैं, मानो उनके हृदय पर कोई तलवार का वार कर रहा हो। मूर्ख लड़कियाँ अपनी मा के हाव-भाव को देखकर खुश होती हैं और बात का बतङ्गड़ बनाकर मनमाना कहने लगती हैं। प्रायः लड़कियों की माताएं कहा करती हैं—"बाई! मैं तो अच्छो तरह सुन चुकी हूं कि तेरी सास लड़ाका और एक लखोरी है। उसे तो कोई दूसरा आदमी सुहाता नहीं। वह क्या जाने कि मैंने अपनी बेटी को कैसे-कैसे दुःख उठा पाल-पोस कर बड़ी की है। जिसने मेरी और अपने बाप की हाँ नहीं सुनी वह सास ससुर की कैसे सुन सकती है? मेरी बेटी तो बेचारी भोली-भाली है, वह न तो आजतक किसी के सामने बोली ही और न बोलना जानती ही है। इसीलिए ससुराल वालों की सब कुछ चुपचाप सहलेती है। और कोई पाले पड़ी होती तो एक की जगह सौ सुनाती। तब सासजी को मालूम पड़ती कि पराई जाई को छेड़ना ऐसा होता है! देखो तो छोरी सूखकर लकड़ी हो गई। ऐसे कबतक चलेगी? क्या इसे भगवान् ने ज़ुबान नहीं दी? अब के जमाईजी को आने दो, उनसे पूछूँगी कि क्या पराई बेटी का हाथ इसीलिए पकड़ा था? मेरी बेटी को सास-ननद और देवर-भौजाई के पञ्जों में क्यों डाल रक्खा है? क्या तुम अब भी बालक हो? मैंने तो अपनी बेटी पाल पोस कर और बड़ी करके तुम्हें दी है वह दूसरों को क्या जाने? दूसरों से उसका वास्ता ही क्या है? वाह जी वाह! इतने ही दिनों में मेरी लाड़ली बेटी के हाड़ निकाल दिए।

ऐसी बातें सुन कर स्त्रियाँ लड़ाका ही जाती हैं। और इस पाठ को सीखकर अपनी ससुराल में बात बात में हर किसी का सामना करने

लगती हैं। ससुर, सास, देवर, ननद, किसी का भी हुक्म नहीं मानतीं और लड़ने झगड़ने लगती हैं। इसका परिणाम बहुत ही बुरा होता है। ऐसी स्त्री सब की आँखों से गिर जाती है—वह अपनी इज़्ज़त अपने हाथों तीन कौड़ी की कर लेती है। जब स्त्री को इस प्रकार बढ़ते देखते हैं तो घर के प्रत्येक आदमी उसे सख़्त अल्फ़ाज़ कहने लगते हैं। पति भी उसे "नष्ट देव की भ्रष्ट पूजा" के अनुसार ढोरों की तरह कूटने-पीटने लगता है। पत्नी यह नहीं समझती कि मैं अपनी माता के द्वारा पढ़ाए गए सबक का यह फल पा रही हूं; बल्कि वह सब को अपने विरुद्ध में देख कुतिया की तरह दाँत दिखा कर भूक कर सब को दबाने का प्रयत्न करती है। नतीज़ा यह होता है कि बहू के मारे सारा घर दुखी हो जाता है। सब उस पर नाराज़ होते हैं। घर में रात दिन कलह होता है। भोजन भी सुख से बैठकर नहीं खाया जाता। सारे गाँव और मुहल्ले में बदनामी हो जाती है, सभी बुरा कहते हैं। घर के लोगों की गालियाँ और मार सहनी पड़ती हैं।

बहनो! तुम्हारा ससुराल से जितना सम्बन्ध है उतना पीहर से नहीं। ससुराल का मालमता घर-द्वार तुम्हारा है; लेकिन पीहर के माल असबाब पर तुम्हारा कोई हक़ नहीं; तुम्हारी हुकूमत ससुराल में ही चल सकती है, पीहर में नहीं। तुम ससुराल में ही घर की मालकिन कही जा सकती हो, पीहर में नहीं। बाप के यहाँ कभी कभी कुछ दिन के लिए ही आना पड़ता है। बाप अमीर है, और ससुराल के लोग ग़रीब, तो स्त्री को बाप की उस अमीरी से क्या गरज़? और अगर मा-बाप ग़रीब हैं और ससुराल वाले अमीर, तो तुम भी अमीर हो—तुम्हें अपने बाप की ग़रीबी से क्या प्रयोजन? तुम्हें ससुराल के सुख में सुख और दुःख में दुःख है। ससुराल तुम्हारा घर है, जहाँ जीवन व्यतीत करना है। सारांश यह है कि स्त्री के लिए जो कुछ भी है, पति-गृह (ससुराल) ही है।

इस वास्ते तुम अपने घर की बातें भूल कर भी किसी से मत कहो। सम्राज्ञी—महारानी का पद पाने की इच्छा रखने वाली स्त्री का यह काम नहीं है कि वह अपने राज्य की अर्थात् अपने घर की बातें दूसरों के सामने कहे। अपने घर की इज़्ज़त रखना न रखना तुम्हारे ही हाथ में है। कवि ने कहा है:—

तुलसी निज मन की व्यथा, भूल न कहिये कोय।
सुनि अठि लै हैं लोग सब, बांट न लै है कोय॥

अपने पीहर जाकर अपने मा बाप से अपने दुखड़े को रोना बहुत ही बुरा है। अपने मार्ग में अपने हाथों काँटे बखेरना है। उनको अपनी बात कहने से फ़ायदा ही क्या ? वे क्या कर सकते हैं ? तुम्हें सुख मिलने की जगह दुःख बढ़ जायगा। क्योंकि अपनी निन्दा और चुग़ली मालूम होने पर तुम्हारी ससुराल वाले तुम पर ज़रूर नाराज़ होंगे और तुम्हें किसी रूप में बदला चुकावेंगे। इसी तरह बाहर की चार औरतों में बैठकर अपने घर की बातें उनसे मत कहो। सास, ननद, जेठानी, देवरानी आदि की निन्दा अपने मुँह से भूलकर भी मत करो। अगर कोई इनकी निन्दा करे, तो उन्हें मना कर दो अथवा वहाँ मत बैठो। याद रक्खो, किसी के कानों-कान भी यह मत ज़ाहर होने दो कि तुम्हारे घर में क्या हो रहा है ? किसी को अपनी सखी सहेली समझकर अपने घर की बात चीत अथवा निन्दा-शिकायत मत करो। भूल कर भी अगर किसी से कह दिया तो फिर "निकली ओठों, और चढ़ी कोठों" । वाली कहावत हो जायगी। अपने घर के लोगों के प्रशंसा योग्य न होने पर भी दूसरे लोगों में उनकी प्रशंसा करो। ऐसे व्यवहार से घर की इज़्ज़त बनी रहती है। बस ये ही सम्राज्ञी होने के लक्षण हैं। ऋग्वेद में भी यही बात कही है:—

सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु॥

इस मन्त्र का अर्थ वही है जो उपर्युक्त मन्त्र का है। अपने सास-ससुर आदि की खूब सेवा करो। जेठ-जेठानी को भी अपना सास-ससुर ही समझो। देवर-देवरानी को अपने पुत्र और वहू की दृष्टि से देखो। ननद को अपनी ही बहन करके मानो। जब आपका, घर के लोगों के साथ इस प्रकार का श्रेष्ठ, शिष्ट, उदार और प्रेम-पूर्ण व्यवहार होगा, तब आप सच्ची गृह-स्वामिनी, सम्राज्ञी, महारानी, बन जाओगी। घर के सब लोग तुम्हारे लिए जीने-मरने को तैयार रहेंगे। गृहस्थाश्रम इन्द्र का नन्दन-वन बन जायगा। इस तरह तुम संसार में यश और कीर्त्ति प्राप्त करती हुई कुटुम्ब में सम्राज्ञी बन जाओगी।

---

(१३) सौभाग्यवती बनो।

ॐ गृह्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः।
भगो अर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः॥

अथर्व० १४। १। ५०॥

(सौभगत्वाय) उत्तम भाग्य के लिए (ते हस्तं) तेरा हाथ (गृह्णामि) पकड़ता हूं (मया पत्या) मुझ पति के साथ (जरदष्टिः) बुढ़ापे तक (आसः) तू रह। (भगः) भाग्यवान् (अर्यमा) श्रेष्ठ (सविता) उत्पादक (पुरंधिः) नगर का मुखिया आदि (देवाः) श्रेष्ठ पुरुषों ने (त्वां मह्यं) तुझे मुझको (गार्हपत्याय) गृहपति के कर्त्तव्यों के लिए (अदुः) दिया है।

(१) "हे स्त्री! उत्तम भाग्य के लिये मैं तेरा हाथ पकड़ता हूं।" विवाह-संस्कार के समय पुरुष स्त्री से कहता है कि मैं उत्तम भाग्य के लिए तेरा हाथ पकड़ता हूँ। प्राचीन समय में स्त्री पुरुष दोनों विद्वान् होते थे। वे अपनी-अपनी प्रतिज्ञाएँ स्वयं करते थे। वर कहता था–

" सखे सप्तपदा भव सखायौ सप्तपदा बभूव सख्यन्ते गमेयं सख्यात्त मायोषं सख्यन्मे मा योष्टास्सभ याचसङ्कल्पा वहै सप्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ। इष भूर्जम मिसवंसानौ संतो मनांसि सत्व्रता। शुभचितान्याकरम्। सात्वमस्य मूहल भूहसस्मि सात्वं द्यौरहं पृथ्वी त्वं रेतोऽहं रेतोभृत् त्वं मनोहमस्मि वाक् त्वं सामाह मस्मं ऋकत्वं सामा मनुव्रता भव पुंसे पुत्राय वेत्तवै श्रियै पुत्राय वेत्रवा एहि सूनृते।"

(ऋग्वेद १०।५)

अर्थात्—हम लोगों ने सप्तपदी फिर ली। अब हम एक दूसरे के परम मित्र हो गए। अब हमारा न कभी तुमसे वियोग हो और न तुम्हारा हमसे। हम दोनों एक हुए। हम दोनों प्रसन्न मनसे एक दूसरे की सम्मति सलाह लेंगे। अब हम दोनों का मन, इच्छा, कर्त्तव्य और ध्रुव एक है। तू ऋक् है मैं साम हूँ। मैं द्यौ हूँ तू पृथ्वी है। मैं वीर्य हूँ तू वीर्य धारण करने वाली है। मैं मन हूँ तू वाणी है। मेरी अनुगामिनी हो। जिससे पुत्र और सम्पत्ति की प्राप्ति हो। हे सूनृते! यहाँ आ! पत्नी कहती है—

आनः प्रजां जनयतु प्रजापति राजरसाय समनक्त्वार्यमा।

अर्थात्—"परमात्मा हम लोगों को सुख और सन्तान दे। हम लोग बुढ़ापे तक एक दूसरे के साथी रहें।" इन बातों से यह सिद्ध होता है कि पहले ज़माने में पति-पत्नी आपस में प्रतिज्ञाएँ करते थे। किन्तु इस युग में लड़के-लड़की में से कोई पढ़े हुए नहीं होते। उनकी तरफ़ से एक पुरोहितजी विवाह-संस्कार कराने बैठते हैं और पोथी में देख देख कर इन मन्त्रों को बोल जाते हैं। पण्डितजी ने क्या कहा, इसका अर्थ पति-पत्नी को कुछ भी नहीं मालूम होता! आश्चर्य तो यह है कि खुद पण्डितजी

को भी पता नहीं होता कि वे क्या कह रहे हैं ? वर-वधू दोनों उस समय मूर्खों की तरह बैठ जाते हैं, और जिस प्रकार पण्डितजी, पुरोहितजी, नचाते हैं, उसी तरह नाचा करते हैं। पवित्र विवाह संस्कार की इस दुर्दशा से भारतवर्ष में विवाह का महत्व ही घट गया। विवाह-संस्कार जो किसी समय एक बड़ा ही उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य था, आज लड़के-लड़कियों का खेल हो रहा है।

वेद इस प्रकार के विवाह को अच्छा नहीं समझता। पत्नी और पति जब विवाह का महत्व और उद्देश्य समझने लगें, तभी विवाह करना चाहिए। "बाल-विवाह" में वेद के उक्त मन्त्र का कुछ भी सम्बन्ध नहीं रह जाता! जब से बाल-विवाह रूपी राक्षस ने वैदिक आज्ञाओं की अवहेलना की, तभी से देश की अधोगति होने लगी। पन्द्रह वर्ष के पति और नौ-दस वर्ष की पत्नियाँ जिस देश में मा-बाप बन कर इस महान् पद को कलङ्कित कर सकते हों, उस देश का अधःपतन अनिवार्य है। फ़सल पकने से पहले ही यदि खेत को कुचल कर बरबाद कर दिया जाय तो उसे देख कर किसको दुःख नहीं होगा। खिलने के पहले ही जो कलियाँ कुचल कर फेंक दी गई हों, उन पर किसे दया नहीं आयगी? जिनको कपड़े तक उनके मा-बाप पहनाते हों, ऐसे नादान बच्चों को गृहस्थाश्रम की भारी गाड़ी में जोत देना क्या अन्याय नहीं है? ऐसे ज़ालिम मा-बाप को माता पिता न कह कर "क़साई" कह देना कुछ अनुचित नहीं होगा। मूर्ख मा-बाप निर्दयता पूर्वक अपने छोटे-छोटे बालकों का विवाह कर देते हैं। उन्हें अपने हाथों कामी बनाते हैं। उनके स्वास्थ्य-धन को अपने हाथों नष्ट कर डालते हैं। नादान पति-पत्नी को विषय भोग में लिप्त कर परमानन्द मानते हैं। शीघ्र ही पोते-पोतियाँ खिलाने की इच्छा करते हैं! धिक्कार है ऐसे दुष्ट माता-पिताओं को, जो जान-बूझ कर अपने बच्चों के गले में फाँसी डालते हैं। इन अवैदिक बातों से आज

"सखे सप्तपदा भव सखायौ सप्तपदा बभूव सख्यन्ते गमेयं सख्यात्ते मायोषं सख्यन्मे मा योष्ठास्सम यावसङ्कल्पा वहै सम्प्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ। इष भूर्जम भिसंवसानौ संतो मनांसि. सव्रता। शुभचितान्याकरम् ॥ सात्वमसं भूहल भूहसस्मि सात्वं द्यौरहं पृथ्वी त्वं रेतोऽहं रेतोमत् त्वं मनोहमस्मि वाक् त्वं सामाह मस्म्यकत्वं सामा मनुव्रता भव पुंसे पुत्राय वेत्तवै श्रियै पुत्राय वेत्रवा एहि सूनृते।"

(ऋग्वेद १०।५)

अर्थात्—हम लोगों ने सप्तपदी फिर ली। अब हम एक दूसरे के परम मित्र हो गए। अब हमारा न कभी तुमसे वियोग हो और न तुम्हारा हमसे। हम दोनों एक हुए। हम दोनों प्रसन्न मनसे एक दूसरे की सम्मति सलाह लेंगे। अब हम दोनों का मन, इच्छा, कर्त्तव्य और ध्रुव एक है। तू ऋक् है मैं, साम हूँ। मैं द्यौ हूँ तू पृथ्वी है। मैं वीर्य हूँ तू वीर्य धारण करने वाली है। मैं मन हूँ तू वाणी है। मेरी अनुगामिनी हो। जिससे पुत्र और सम्पत्ति की प्राप्ति हो। हे सूनृते! यहाँ आ! पत्नी कहती है—

आनः प्रजां जनयतु प्रजापति राजरसाय समनक् त्वार्यमा।

अर्थात्—"परमात्मा हम लोगों को सुख और सन्तान दें। हम लोग बुढ़ापे तक एक दूसरे के साथी रहें।" इन बातों से यह सिद्ध होता है कि पहले ज़माने में पति-पत्नी आपस में प्रतिज्ञाएँ करते थे। किन्तु इस युग में लड़के-लड़की में से कोई पढ़े हुए नहीं होते। उनकी तरफ़ से एक पुरोहितजी विवाह-संस्कार कराने बैठते हैं और पोथी में देख देख कर इन मन्त्रों को बोल जाते हैं। पण्डितजी ने क्या कहा, इसका अर्थ पति-पत्नी को कुछ भी नहीं मालूम होता! आश्चर्य तो यह है कि ख़ुद पण्डितजी

को भी पता नहीं होता कि वे क्या कह रहे हैं? वर-वधू दोनों उस समय मूर्खों की तरह बैठ जाते हैं, और जिस प्रकार पण्डितजी, पुरोहितजी, नचाते हैं, उसी तरह नाचा करते हैं। पवित्र विवाह संस्कार की इस दुर्दशा से भारतवर्ष में विवाह का महत्व ही घट गया। विवाह-संस्कार जो किसी समय एक बड़ा ही उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य था, आज लड़के-लड़कियों का खेल हो रहा है।

वेद इस प्रकार के विवाह को अच्छा नहीं समझता। पत्नी और पति जब विवाह का महत्व और उद्देश्य समझने लगें, तभी विवाह करना चाहिए। "बाल-विवाह" में वेद के उक्त मन्त्र का कुछ भी सम्बन्ध नहीं रह जाता! जब से बाल-विवाह रूपी राक्षस ने वैदिक आज्ञाओं की अवहेलना की, तभी से देश की अधोगति होने लगी। पन्द्रह वर्ष के पति और नौ-दस वर्ष की पत्नियाँ जिस देश में मा-बाप बन कर इस महान् पद को कलङ्कित कर सकते हों, उस देश का अधःपतन अनिवार्य है। फ़सल पकने से पहले ही यदि खेत को कुचल कर बरबाद कर दिया जाय तो उसे देख कर किसको दुःख नहीं होगा। खिलने के पहले ही जो कलियाँ कुचल कर फेंक दी गई हों, उन पर किसे दया नहीं आयगी? जिनको कपड़े तक उनके मा-बाप पहनाते हों, ऐसे नादान बच्चों को गृहस्थाश्रम की भारी गाड़ी में जोत देना क्या अन्याय नहीं है? ऐसे ज़ालिम मा-बाप को माता पिता न कह कर "क़साई" कह देना कुछ अनुचित नहीं होगा। मूर्ख मा-बाप निर्दयता पूर्वक अपने छोटे-छोटे बालकों का विवाह कर देते हैं। उन्हें अपने हाथों कामी बनाते हैं। उनके स्वास्थ्य-धन को अपने हाथों नष्ट कर डालते हैं। नादान पति-पत्नी को विषय भोग में लिप्त कर परमानन्द मानते हैं। शीघ्र ही पोते-पोतियाँ खिलाने की इच्छा करते हैं! धिक्कार है ऐसे दुष्ट माता-पिताओं को, जो जान-बूझ कर अपने बच्चों के गले में फाँसी डालते हैं। इन अवैदिक बातों से आज

३० वर्ष की उम्र के बाद ही बुढ़ापा गिना जाने लगा है। शास्त्रों ने तो सोलह वर्ष की अवस्था से आरम्भ होकर सत्तर वर्ष की अवस्था तक "यौवन" काल माना है। यथाः—

आषोडशात् सप्ततिवर्षपर्यन्तं यौवनम्।

बहनो! विचारो तो, हमारा कितना पतन हो गया? वैदिक विधि के अनुसार पति कहता है कि "हे सुभगे! उत्तम भाग्य के लिए, ऐश्वर्य और सुसन्तानादि की वृद्धि के लिए मैं तेरा हाथ पकड़ता हूँ। क्या एक बच्चा किसी बच्ची से ऐसा कहते हुए शोभा पावेगा? हरगिज़ नहीं! क्या बालक पति-पत्नी "उत्तम भाग्य" प्राप्त कर सकेंगे? नहीं। बालक दम्पति का सारा जीवन दुःखमय बन जाता है। उत्तम भाग्य तो दूर रहा, उनसे अपना पेट भी नहीं भरा जाता। वे रोगी जीवन व्यतीत करते हुए अपनी मानवी लीला समाप्त कर डालते हैं। "सन्तान" के विषय में तो कहना ही क्या है? ये इधर पैदा हुईं कि उधर कफ़न और गड्ढे की तैय्यारी करनी पड़ती है। दैव-योग से बच्चा बच भी गया, तो हकीम, वैद्य, और डॉक्टरों की खुशामदें करनी पड़ती हैं। इस प्रकार इस बाल-विवाह रूपी भयङ्कर अग्नि में संसार के समस्त सुख और ऐश्वर्य जल-भुन कर भस्म हो जाते हैं। बाल-विवाह तथा अनमेल विवाह के कारण वेद के उपर्युक्त उपदेश पर पानी सा फिर गया है। इसीलिए हमें इस विषय पर थोड़ा सा निवेदन करना पड़ा। सौभाग्यवती बनने के लिए तुम बाल-विवाह का विरोध करो। बदकिस्मती से बचने के लिए तुम्हें स्वयं प्रयत्न करना होगा। क्या कारण है कि तुम पुरुषों के हाथों अपना सौभाग्य नष्ट कर दो। उचित कार्य के लिए प्रयत्न करने का तुम्हें पूर्ण अधिकार है। ऐसा उद्योग करो जिससे तुम सौभाग्यवती बनो, अभागिनी न कहाओ।

(२) मुझ पति के साथ तू वृद्धावस्था तक रह।

हे स्त्री ! तू दूसरे पति के साथ रहने की इच्छा न कर । बुढ़ापे तक अर्थात् आमरण तू मेरे साथ ही रह । स्त्री को उचित है कि जिस पुरुष को एक बार वरे, उसी की पत्नी बनकर रहे । एक पुरुष को ही अपना पति समझने का नाम पतिव्रता है । जो स्त्री, अपने पति को छोड़कर दूसरे पुरुषों से प्रेम करती है, वह व्यभिचारिणी, कुलटा, छिनाल, वेश्या आदि नामों से पुकारी जाती है । पतिव्रता की संसार प्रशंसा करता है और व्यभिचारिणी के नाम पर दुनियाँ धिक्कारती है । स्त्रियों का भूषण एकमात्र पातिव्रत-धर्म्म है । वाल्मीकीय रामायण में लिखा हैः—

> नगरस्थो वनस्थो वा शुभो वा यदि वाशुभः ।
> यासां स्त्रीणां प्रियो भर्त्ता तासां लोका महोदयाः॥
> दुश्शीलः कामवृत्तो वा धनैर्वा परिवर्जितः ।
> स्त्रीणामार्यस्वभावानां परमं दैवतं पतिः ॥

अनसूयाने वनवासिनी सीता से कहा—"नगर में हो या वन में अनुकूल हो अथवा प्रतिकूल जिन स्त्रियों को अपना पति प्यारा है, उन्हें दोनों लोकों में सुख मिलता है । कठोर स्वभाव का हो या मृदु स्वभाव का, कामी हो अथवा निर्धन हो, आर्य स्वभाव वाली स्त्रियों का पति ही परम देवता होता है" । यह सुन सीता देवी ने कहाः—

> पाणिप्रदानकाले च यत्पुरा त्वग्निसन्निधौ ।
> अनुशिष्टं जनन्यामे वाक्यं तदपि मे धृतम् ॥
> न विस्मृतं तु मे सर्वं वाक्यैः स्वैर्धर्मचारिणि ।
> पतिशुश्रूषणाधार्या स्तपोनान्यद्विधीयते ॥

विवाह-काल में जो मेरी माता ने उपदेश दिया था, वह मुझे याद है । पति की सेवा से बढ़कर स्त्री के लिए कोई तप नहीं । मनुस्मृति में लिखा हैः—

विशीलः कामवृत्तो वा गुणैर्वा परिवर्जितः ।
उपचर्यः स्त्रिया साध्व्या सततं देववत्पतिः ॥
नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषणम् ।
पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते ॥

पतिव्रता स्त्री के लिए शीलरहित, कामी और गुणहीन पति भी देवता के समान पूजनीय है। स्त्रियों को पति के बिना यज्ञ, व्रत और उपवास करने का अधिकार नहीं है। स्त्री तो केवल पति की सेवा से ही स्वर्ग में आदर पाती है।

सा भार्या या शुचिर्दक्षा सा भार्या या पतिव्रता ।
सा भार्या या पतिप्रीता सा भार्या सत्यवादिनी ॥

(वृद्धचाणक्य)

स्त्री वही है जो पवित्र हो, चतुर हो, पतिव्रता हो, पतिप्रिय हो और जो सत्य बोलती हो। कहा है कि—

स्त्रीणां रूपं पतिव्रतम् ।

स्त्रियों की शोभा पातिव्रत धर्म है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामायण में चार प्रकार की पतिव्रता स्त्री मानी हैं। (१) उत्तम (२) मध्यम (३) नीच और (४) लघु—

उत्तम के अस बस मन माँहीं, सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं।

उत्तम पतिव्रता स्त्री वह है जो अपने पति के सिवाय दूसरा पुरुष ही संसार में नहीं देखती।

मध्यम पर पति देखहि कैसे, भ्राता पिता पुत्र निज जैसे।

जो स्त्रियाँ दूसरे पुरुषों को अपने पिता भाई और पुत्र के समान देखती हैं, वे मध्यम श्रेणी की पतिव्रता मानी जाती हैं।

धर्म विचारि समुझि कुल रहई, सो निकृष्ट तिय श्रुति अस कहई।

जो स्त्रियाँ, कुल-मर्यादा के ख़याल से अथवा धर्म के भय से पर पुरुष से बचती हैं, वे निकृष्ट अर्थात् नीच पतिव्रता हैं।

बिनु अवसर भयते रह जोई
जानेहु अधम नारि जग सोई।

जो केवल भय से, अथवा मौका न मिलने से पातिव्रत धर्म धारण करती है वह स्त्री अधम अर्थात् लघु श्रेणी में रक्खी जाने योग्य है। यहाँ तक तो पतिव्रता स्त्रियों की विवेचना हुई; अब कहा है कि:—

पति वञ्चक पर पति रति करई।
रौरव नरक कल्प शत परई॥

जो स्त्री पति को त्याग कर पर-पुरुष से प्रेम करती है, वह सौ कल्प के लिए रौरव नरक में पड़ कर दुःख उठाती है। यदि इच्छानुसार पति नहीं मिला हो, तो भी परपुरुष के लिए कभी इच्छा न करो। स्त्रियों को 'परपुरुष-गमन' बहुत ही अपमानजनक समझना चाहिए। यदि योग्य पति न मिले तो कुमारी ही रहो। सुलभा ने राजा जनक से कहा था कि—

साहं तस्मिन्कुले जाता भर्तर्यसति मद्विधे।
विनीता मोक्षधर्मेषु चराम्येका मुनिव्रतम्॥

"योग्य, गुण, कर्म और स्वभाव वाला पति न मिलने से मैं मुनियों की तरह अपना जीवन व्यतीत करती हूं।" मुनियों की तरह जीवन व्यतीत करना अथवा ब्रह्मचारिणी रहना अच्छा है, परन्तु व्यभिचारिणी बनना अच्छा नहीं। उक्त वेद मन्त्र में यही कहा गया है कि "हे पत्नि! तूने मुझे अपना पति बनाया है, इसलिए तू मेरे साथ वृद्धावस्था तक रह। अर्थात् सिवाय मेरे किसी दूसरे पुरुष को अपना मन समझ।

इस वाक्य से एक ध्वनि और भी निकलती है कि हे स्त्री! ऐसा

पालन में है। बुद्धि और ज्ञान का घमण्ड रखने वाला मनुष्य बुरी तरह पतित हो चुका है। बहनो! वेद कहता है कि—ब्रह्मचर्य से रहने की शिक्षा पशुओं से लो। वे हम मानवों की तरह कामी नहीं हैं। विषय-भोग को वे अपने जीवन का मुख्य उद्देश्य नहीं समझते। प्राकृतिक नियमों के पालनार्थ वे विषय-भोग में लिप्त होते हैं। उनका गार्हस्थ्य-संयोग केवल सन्तान पैदा करने के लिए ही होता है। गर्भ-धारण के पश्चात् पशु-पक्षी सभी ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। ये बातें मनुष्यों में नहीं हैं। आज मनुष्य काम का कीड़ा हो रहा है, विलासमय जीवन व्यतीत कर रहा है! इसीलिए वेद कहता है कि मनुष्यो! ब्रह्मचर्य विषयक शिक्षा तुम्हें अश्व आदि प्राणियों से ग्रहण करनी चाहिए।

विवाह-संस्कार का प्रथम उद्देश्य "सन्तान" उत्पन्न करना है। वेद ने इसे ही मुख्य गृह-कार्य माना है। नगर के मुखिया लोगों ने इसीलिए तुम्हें तुम्हारे पति के सिपुर्द किया है। इसलिए स्त्रियों का कर्त्तव्य है कि जिस कार्य की पूर्ति के लिए पाणि-ग्रहण किया है, उसे ईश्वरीय आज्ञा समझकर पूर्ण करें, अर्थात् सुसन्तान उत्पन्न करें। मरण पर्यन्त सन्तान पैदा करने की आज्ञा वेद में नहीं है। क्योंकि उम्र के ढल जाने पर उत्तम सन्तान पैदा करने की शक्ति दम्पति के रज-वीर्य में नहीं रहती। पचीस वर्ष की उम्र से लगाकर ५० । ५५ वर्ष की उम्र तक ही सन्तान उत्पन्न करनी चाहिए। वेद में दस से अधिक बच्चे पैदा करने की आज्ञा नहीं पाई जाती।

इमां त्वमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रां सुभगां कृणु।
दशास्यां पुत्रानाधेहि पतिमेकादशं कृधि॥
(ऋग्वेद १० । ७ । ८५ । ४५)

अर्थात्—"परमात्मन्! इस स्त्री को तुम सुपुत्रा बनाओ। इसे दस पुत्र दो। पति सहित इसे ग्यारह वीर प्राप्त हों। पुत्र वीर हों। विद्या

में वीर हों, बल में वीर हों, अथवा धन में वीर हों—परन्तु हों वीर ! वेद को वीर पुत्र होना इच्छित है।

वीरसूर्देव कामास्योनाशन्नोभव..........

(ऋग्वेद)

अर्थात्—वीरों की जन्मदायिनी, देवताओं की इच्छा करने वाली, सुखी हों ! इन श्रुति वचनों से सिद्ध होता है कि स्त्रियों को अधिक से अधिक दस दीर्घजीवी सन्तान पैदा करनी चाहिएं। अल्पजीवी सन्तान न हों, इस बात का खूब ध्यान रखना चाहिए। ब्रह्मचारी दम्पति से अल्पजीवी बालक नहीं पैदा हो सकते। विषय-वासना में फँसे हुए प्राणी की सन्तान दीर्घायु नहीं हो सकती। वेद कहता है।

प्रजां प्रजनयावहै पुत्रान् विन्दावहै बहून्।
ते सन्तु जरदष्टयः संप्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ॥

उत्तम प्रजा को उत्पन्न करें। बहुत पुत्रों को प्राप्त हों। वे पुत्र जरा अवस्था के अन्त तक जीवन युक्त रहें; अर्थात् शतायु हों। अल्पायु, रोगी तथा निर्बल बच्चों की अपेक्षा तो उनका न होना ही अच्छा है। आज भारतवर्ष अल्पायु और रोगी बालकों को उत्पन्न कर इस दुर्गति को पहुंच चुका है। हमारी बहनें आज चाहे तो, राम जैसे पितृ-भक्त, भरत और लक्ष्मण जैसे भातृ-भक्त, जनक के समान ब्रह्मवादी, व्यास के समान लेखक पाणिनि के समान विद्वान्, वाल्मीकि सदृश कवि, कौशल्या के समान माताएं, सीता, सावित्री और गान्धारी के समान पति-व्रताएं, हनुमान्, परशुराम, भीष्म, शङ्कराचार्य और दयानन्द के समान ब्रह्मचारी, अर्जुन के समान धनुर्धारी, भीमसेन, राणा प्रताप और वीर शिवाजी के समान बलधारी अपने उदर से उत्पन्न कर सकती हैं। बहनो ! तुमने गृहस्थाश्रम में इसीलिए पैर रखा है कि अपने देश के लिए उपयोगी सन्तान उत्पन्न

करो। यदि तुमने पृथ्वी के भाररूप बच्चे पैदा किए तो याद रक्खो कि तुम देश के साथ बड़ा भारी अन्याय करती हो। देश के उत्थान और पतन का बीज तुम्हीं हो। तुम्हें शास्त्रों में शक्ति कहा गया है। लिखा है:-

शङ्करः पुरुषाः सर्वे स्त्रियः सर्वा महेश्वरी।

(शिव पुराण)

सब पुरुष शङ्कर हैं और सब स्त्रियाँ पार्वती हैं। स्त्रियों को शास्त्रों में दैवी सम्पदा कहा है:—

सन्ति नो विस्मयः कार्यः स्त्रियो हि देवसम्पदाः।

(शि० पु० धर्मसंहिता)

बहनो! तुम अपने को तुच्छ मत समझो। तुम संसार की जननी हो। जननी का मान पुरुषों में अधिक है। जन्मभूमि के पहले तुम्हारा स्थान है। इसी लिए कि तुम्हीं सुसन्तान उत्पन्न करने वाली पृथ्वी रूप हो। पुरुष तो केवल द्युलोक के समान, जलवृष्टि करने वाले हैं। वेद भी यही कहता है:—

..........सामाहमस्मि ऋक्त्वं द्यौरहं पृथिवीत्वं
तावेव विवहावहै सहरेतो दधावहै..........।

"मैं साम हूं तू ऋग्वेद है। तू पृथ्वी है मैं वर्षा करने वाले सूर्य के समान हूं। तू और मैं दोनों ही प्रसन्नता पूर्वक विवाह करें। साथ मिल कर वीर्य को धारण करें।" वेद की दृष्टि में स्त्रियों का दर्जा उच्च है। हम लोग भी मानते हैं कि:—

जननी, जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।

माता और मातृभूमि ये दोनों स्वर्ग से भी बढ़ कर हैं। किसी कवि ने कहा है:—

जननी औ निज भूमि को बढ़ प्राणहुँ ते देख।
इनकी रक्षा के लिए प्राण न कछु अवरेख॥

बहनो ! तुम्हारा आसन संसार में बहुत ऊँचा रक्खा गया है। उस पर आसीन होने के लिए तुम्हें अपने पति के साथ गृह-कार्यों में संलग्न होना चाहिए और सुसन्तानों को प्रसव कर देश का कल्याण करना चाहिए। इसी में तुम्हारा सौभाग्य है।

---

(१४) ज्ञान-प्राप्ति

ओ३म् ब्रह्मापरं युज्यतां ब्रह्म पूर्वं ब्रह्मान्ततो मध्यतो ब्रह्म सर्वतः।
अनाव्याधां देवपुरां प्रपद्य शिवास्योना पतिलोके विराज॥

अथर्व० १४। १। ६४॥

(ब्रह्म) ज्ञान ही (अपरं) पश्चात् (पूर्वं) पहले (अन्ततः) अन्त में (मध्यतः) बीच में (सर्वतः) सर्वत्र है। उस ज्ञान को प्राप्त करके और (अनाव्याधां) बाधारहित (देवपुरां) दिव्य नगरी को (प्रपद्य) प्राप्त होकर (पतिलोके) पति के घर (शिवास्योना) कल्याण करने वाली बन कर (विराज) शोभायमान हो।

यहाँ पर हमने "ब्रह्म" शब्द का अर्थ ज्ञान किया है। परन्तु एक बात और देखनी है कि "ब्रह्म" शब्द के अर्थ कई हैं। वेद, ईश्वर, ज्ञान, तत्व, मोक्ष, तप, ब्राह्मण, ब्रह्मचर्य, अध्यात्म विद्या, ब्राह्मण ग्रन्थ, सम्पत्ति, सत्य इत्यादि अनेक अर्थ हैं। इन पर अर्थ हो सकता है कि:—

(१) वेद भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालों में रहता है। स्त्रियो ! इसे पढ़ो, सुनो, और सुनाओ। क्योंकि यह अनन्त ज्ञान का भण्डार है, इसका ज्ञान अगाध है। इसका प्रत्येक शब्द ध्यान-पूर्वक विचारने तथा मनन करने योग्य है। यह स्वतः प्रामाणिक ग्रन्थ है।

हिन्दुओं का अभिमान है—उनका पथ-प्रदर्शक है। ईश्वरीय ज्ञान कराने वाला, तथा धर्माधर्म का निर्णय करने वाला है। आर्यों का जीवन धन, और इह-पारलौकिक सम्पत्ति है। समस्त ग्रन्थों का आधार है। सब धर्मों का मूल है। वेद के द्वारा प्रतिपादित वस्तु ही धर्म है, बाकी धर्म नहीं कहे जाते। इस प्रकार वेद की महत्ता आज सब लोग मानते हैं। ऐसे सर्व-मान्य और ज्ञान के भण्डार का स्वाध्याय करना, सुनना, प्रत्येक स्त्री का कर्त्तव्य है। जो स्त्री वेद को यह जानकर पढ़ती या सुनती है कि आगे पीछे और सर्वत्र अब वैदिक ज्ञान ही व्यापक है, वह अनन्त सुखों को प्राप्त करती हुई अपने पति की प्यारी बन जाती है।

स्त्री शूद्र द्विजबन्धूनां न वेद श्रवणं मतम्।

स्त्री-शिक्षा-विरोधी लोगों ने ऐसे श्लोकों को गढ़ा है, उनके विषय में हम पहले इसी पुस्तक में बहुत कुछ लिख आए हैं। वेदों में ऐसी आज्ञा नहीं पाई जाती, जिसमें स्त्रियों को वेद का पढ़ना या सुनना मना हो। वेद ईश्वरीय ज्ञान है, वह किसी की बपौती नहीं है, वह मनुष्यमात्र के लिए है। उस परम पिता परमात्मा ने अपने पुत्रों के लिए उसे दिया है। ब्राह्मण हो या शूद्र, चमार हो या भङ्गी, स्त्री हो अथवा पुरुष, उस पिता की सम्पत्ति (ईश्वरीय ज्ञान वेद) पर सबका समान अधिकार है। *यह लोगों की स्वार्थपरता है कि उन्होंने शास्त्रों में मनमाने श्लोक ठूँस-*ठूँस कर किसी को अधिकारी ठहराया और किसी को उसका अनधिकारी, ऐसे वेद-विरोधी वचनों को कदापि नहीं मानना चाहिए।

स्त्रियों के विरुद्ध जो साहित्य आज देखने में आता है वह एक हज़ार वर्ष से पहले का नहीं मालूम होता। इस विषय पर हम यहाँ विवेचन करना नहीं चाहते, क्योंकि यह इस समय हमारा विषय नहीं है। परन्तु यदि विद्वान् लोग इस पर विचार करेंगे तो उन्हें स्पष्ट मालूम हो जायगा। ऐसा होने का एक कारण यह हो सकता है कि उस वक्त धर्म

समाज अपने कर्तव्य से च्युत होने लगा होगा। यदि ऐसा न होता तो ग्रन्थकारों को ऐसा लिखने का मौका ही न आता। महाराजा भर्तृहरि एक अच्छे लेखक थे, साथ ही बड़े भारी कवि अपनी महारानी का कुकर्म देख कर उन्हें वैराग्य लेना पड़ा, और उन्होंने अपने काव्य में स्त्री-निन्दा भी अच्छी तरह से की। दुःखी हृदय के उद्गार ऐसे ही होते हैं। इसके अतिरिक्त हमारे ग्रन्थकार, योगी, ऋषि, मुनि, वनवासी और त्यागी ही हुए हैं। उन्हें वैसे ही स्त्री-जाति से घृणा रहती थी। कामिनी और काञ्चन उनके अप्रिय पदार्थ थे, अतएव उन्होंने अपनी लेखनी इन दोनों के विरुद्ध चलाने में कसर नहीं की। इस प्रकार धीरे धीरे स्त्रियों के विरुद्ध साहित्य तैयार होने लगा और आज वह इस रूप को पहुँच गया कि:—

> अग्निरापः स्त्रियो मूर्खः सर्पो राजकुलानि च।
> नित्यं यत्नेन सेव्यानि सद्यः प्राणहराणि षट्॥
>
> (वृद्धचाणक्य)

स्त्री की तुलना सर्प से कर दी है! अर्थात् उसे पुरुषों के लिए प्राणघातक मान लिया है। स्त्रियों के लिखे हुए ग्रन्थ नहीं हैं, वर्ना उस वक्त वे भी मर्दों के लिए इनसे भी कठोर वचन लिख सकती थीं। स्त्रियों के पतन के साथ ही साथ पुरुषों ने भी उनकी निन्दा करना शुरू कर दिया। इसलिए अब स्त्रियों को उचित है कि जो जो लाञ्छन उन पर लगाए जाते हैं, यदि वे सत्य हों तो, उन्हें त्यागने का प्रयत्न करना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि स्त्रियों को वेद पढ़ने का पूर्ण अधिकार है। उन्हें निरन्तर वेदों का स्वाध्याय करना चाहिए। जब कभी गृह-कार्य से फ़ुरसत मिले, तभी वेद अथवा वैदिक पुस्तकों को पढ़ कर ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। ऐसा करने से तुम्हें महान् आनन्द प्राप्त होगा।

(२) ब्रह्म शब्द का अर्थ है "ईश्वर"। ईश्वर, पश्चात्, पूर्व अन्त में

और मध्य में सर्वत्र व्यापक है। वह इस अखिल विश्व का निर्माता है। यह जो कुछ भी हम देख रहे हैं, सब उसी की महिमा है। वह जन्म-मृत्यु से रहित, नित्यानन्द युक्त, मोक्ष सुख का देनेवाला, सर्वोपरि, सर्वव्यापक, निराकार और सबका कर्त्ता है। इस लिए स्त्रियों को चाहिए कि ऐसे देवाधिदेव ईश्वर का स्मरण, भजन अवश्य किया करें। ईश्वर भजन के लिए इधर उधर भटकने की आवश्यकता नहीं है। जो स्त्रियाँ इधर उधर घूमा करती हैं वे निन्द्य समझी जाती हैं। चाणक्य ने भी लिखा है:—

> भ्रमन् संपूज्यते राजा भ्रमन् संपूज्यते द्विजः।
> भ्रमन् संपूज्यते योगी स्त्री भ्रमन्ती विनश्यति॥

"राजा, ब्राह्मण और योगी घूमते रहने पर ही आदर पाते हैं, पर स्त्री जो भटकती रहती है, शीघ्र ही अपना मान खो देती है।" इसी कारण स्त्रियों को मन्दिर, तीर्थ, यात्रा आदि से रोक कर यह दिया है कि "पति-पूजा" ही स्त्रियों के लिए देव-पूजा है। इसका यह अर्थ नहीं है कि, स्त्री कभी भूल कर भी ईश्वर-स्मरण न करे। सामयिक नीतिकारों और ग्रन्थकारों ने जब यह देखा कि स्त्रियाँ स्वच्छन्दता पूर्वक मन्दिर और तीर्थों के बहाने इधर-उधर भटकने लगी हैं और चरित्रभ्रष्ट बन रही हैं तब उन्होंने ऐसे-ऐसे श्लोक बनाए, जो कि उस वक्त आवश्यक थे।

> तीर्थस्नानार्थिनी नारी पतिपादोदकं पिबेत्।
> शङ्करादपि विष्णोर्वा पतिरेकोऽधिकः स्त्रियाः॥
> भर्ता देवो गुरुर्भर्ता धर्मतीर्थव्रतानि च।
> तस्मात्सर्वं परित्यज्य पतिमेकं समर्चयेत्॥

(स्कन्दपुराण)

अर्थात्—तीर्थ स्नान की इच्छा करने वाली स्त्री को चाहिए कि अपने

पति के चरणों का जल पान करे। क्योंकि स्त्री के लिए उसका पति शङ्कर और विष्णु से भी अधिक है। स्त्री को उसका पति ही उसके लिए गुरु, धर्म, तीर्थ व्रत आदि सब कुछ है। अतएव सबको छोड़ कर उसे उसी की सेवा करनी चाहिए। मनुस्मृति में लिखा है—

नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषितम्।
पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते॥

स्त्रियों के लिए अलग यज्ञ, व्रत, उपवास आदि करना मना है। जो कुछ भी वह करे, अपने पति के साथ करे। क्योंकि पति-सेवा से ही स्त्री को स्वर्ग की प्राप्ति है। इसका यह मतलब नहीं कि स्त्री ईश्वर-चिन्तन करे ही नहीं। उसे ईश्वर-स्मरण करना चाहिए, किन्तु घर में और अपने पति के साथ। आजकल बड़ी भयानक विपरीतावस्था है। औरतें भजन-पूजन में पुरुषों के भी कान काट रही हैं। मर्द शायद ही नित्य मन्दिर जाते हों, परन्तु स्त्रियाँ प्रायः नियम पूर्वक मन्दिर में दर्शनार्थ जाती हैं। वहाँ की अधम दशा का वर्णन किया जाय तो रोङ्गटे खड़े हो जायँ। सैकड़ों मुक़द्दमे जो अदालतों में हुए हैं, उनके फ़ैसले हमारे इस कथन के प्रमाण हैं। पुरुष, व्रत-उपवास कम करेंगे, परन्तु स्त्रियाँ ग्यारस, प्रदोष, तीज, पूनों, चौथ, [illegible]ई आठें, आमला नौमी, बच्छबारस, गूगा नौमी, शीतला अष्टमी, नाग [illegible]मी, नवरात्र, मङ्गल, शनि आदि दिनों पर उपवास करती हैं। [illegible]यो ! याद रक्खो, ये तुम्हारी भूलें हैं। सावधान हो जाओ। अना[illegible]श्यक व्रत-उपवासों को छोड़ दो। स्वास्थ्य ख़राब हो, पेट में गड़बड़ी [illegible]ो अथवा डॉक्टर की सम्मति हो तो उपवास करने में कोई हानि नहीं ! [illegible]द द्रव्यों को ईश्वर मान कर उनका पूजन मत करो। केवल एक पर[illegible]त्मा ही का चिन्तन करो जिसने सबको बनाया है। उसकी बनाई हुई [illegible]स्तुओं को ईश्वर मान कर पूजना, उस सर्व शक्तिमान् परमात्मा का [illegible]ोर अपमान है। किसी पर पुरुष को अपना गुरु मत बनाओ और म

तुम उसकी चेली ही बनो। तुम्हारा पति ही तुम्हारा गुरु है। कहीं की छाप, मुद्रा, तिलक कण्ठी आदि अपने शरीर पर धारण न करो। किसी कपटी, धूर्त मनुष्य से मन्त्रोपदेश नहीं सुनना चाहिए। ये लोग तुम्हारे कान में द्वादशाक्षर मन्त्र सुनाया करते हैं—

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

इसका अर्थ है—"मैं वासुदेव के पुत्र भगवान् श्री कृष्णचन्द्र जी को प्रणाम करता हूँ"। यह अज्ञानी गुरुओं ने अज्ञानी शिष्यों के लिए गढ़ लिया है। क्योंकि यह मन्त्र वैदिक नहीं है। ऋग्वेद में लिखा है कि—

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
(१०। १९१)

सबका मन्त्र एक हो। स्त्री-पुरुष, द्विज-शूद्र आदि का भेद-भाव न हो। वह एक मन्त्र "गायत्री" है। बहनो! यदि तुम्हें मन्त्र की इच्छा हो तो "गायत्री मन्त्र" को अर्थ सहित याद करलो और यथाशक्य उसका नित्य जाप किया करो। मिथ्या मन्त्रोपदेश किसी का मत सुनो। गण्डे तावीज़ की इच्छा से या पुत्र-सन्तान तथा धन की इच्छा से किसी पर-पुरुष के पास, जैसे गुरुजी, बाबाजी, वैरागीजी, साधुजी, सन्तजी, संन्यासीजी, गोसाईंजी, महन्तजी, पुरोहितजी, पुजारीजी, पण्डेजी, भगतजी, व्यासजी, फक्कड़जी, पीरजी, मौलानाजी, फ़क़ीरजी, साईंजी, उस्तादजी, मौलवीजी, मुल्लाजी, हाफ़िज़जी, हाज़ीजी, क़ाज़ीजी, पादरीजी, स्वामीजी वग़ैरह के यहाँ मत भटको। भूलकर भी मियाँ, मदार, गाज़ी, पीर, पैग़म्बर, सैय्यद, शहीद, औलिया, क़ब्र, दरगाह, नबी, जिन्द, सगैया, भूत, प्रेत, चुड़ैल, डाकिन वग़ैरह के झगड़ों में मत पड़ो। किसी की मंगाई हुई खील, इलायची, मिश्री, जायफल, जावित्री, रेवड़ी, बताशे, लड्डू पेड़ा वग़ैरह जो प्रसाद के बहाने बाँटे जाते हैं नहीं लेने चाहिए। शीतला, मसानी, भवानी देवी, दुर्गा, वाराही, चण्डी, चामुण्डा, हरदेवलाला, गूगा, नरसिंहा, सैयद

महाराज आदि कपोल-कल्पित देवताओं के यहाँ मत भटको। केवल एकमात्र अपने पति को ही अपना आराध्य देव मानो! वही तुम्हारा इष्ट देव है। उसके साथ-साथ या उसकी मङ्गल-कामना के लिए ही ईश्वरोपासना करो। वेद में, स्त्रियों को सन्ध्योपासना, अग्निहोत्र आदि करने के आज्ञा-प्रदर्शक कई मन्त्र हैं।

(३) "ज्ञान और तत्त्व" ये दो अर्थ भी "ब्रह्म" शब्द के हैं। ज्ञान ही, पीछे, पहले, आख़ीर में और बीच में सर्वत्र उपयोगी है। अर्थात् ज्ञान ही प्रकाश है और अज्ञान ही अन्धकार है। ईश्वर की खोज के लिए या यों कहिए कि अपना कर्त्तव्य जानने के लिए ज्ञानरूपी प्रकाश की परम आवश्यकता है। जिसे ज्ञान अर्थात् समझ, बुद्धि अथवा जानकारी ही नहीं वह मनुष्य कहलाने का अधिकारी कैसे हो सकता है? मनुष्य और पशु का भेद सिर्फ़ ज्ञान ही से ज्ञात होता है। ज्ञान से मनुष्य के अन्तर्चक्षु खुलजाते हैं।

अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।

अर्थात्—अज्ञानरूपी रतौंध को नाश करने के लिए ज्ञानरूपी अञ्जन की शलाका होनी चाहिए। ज्ञान सुख है और अज्ञान महान् दुःख है। ज्ञान ही स्वर्ग है और अज्ञान ही नरक। ज्ञान ही मनुष्यता है और अज्ञान ही पशुता। ज्ञान ही द्विज है अज्ञान ही शूद्र। इस प्रकार यह ज्ञान और अज्ञान का विवेचन बहनों को ध्यान में रखना चाहिए। यदि तुम्हें सर्व गुण-सम्पन्न बनना हो, तो वेद की आज्ञानुसार ज्ञान का सम्पादन करो। यह शरीर, आत्मा के रहने का दिव्य भवन है। इसमें आत्मदेव विराजमान है। जिस प्रकार शरीर का भोजन अन्न, जल, फल, फूल आदि पदार्थ हैं, उसी प्रकार आत्मा की खुराक "ज्ञान" है। इसलिए आत्मदेव की पुष्टि के लिए उसे ज्ञानरूपी खुराक़ दो, जिससे वह बलिष्ठ बन कर कल्याण करने में समर्थ हो। सारांश यह है कि सब अवस्थाओं में ज्ञान ही लाभ-कारी होता है, स्त्रियों को चाहिए कि वे ज्ञानी बनें।

(४) मोक्ष, तप, ब्रह्मचर्य और सत्य इत्यादि अनेक अर्थ "ब्रह्म" के हैं। पश्चात् ये सब पहले, अन्त और मध्य में सर्वत्र हैं। मोक्ष अर्थात् दुःखों की निवृत्ति, आवागमन से छूटना तप अर्थात् इन्द्रिय-संयम, परोपकार के लिए कष्ट-सहन करना, ईश्वर-चिन्तन, ब्रह्मचर्य अर्थात् वीर्य-रक्षा, वेद-प्राप्ति के लिए अनुष्ठान, देवोचित आचरण करना और सत्य अर्थात् सत्य भाषण झूठ का त्याग, उचित कार्य इत्यादि "ब्रह्म" का अर्थ है। इन सब बातों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि ये त्रिकाल में अमिट हैं। हमेशा थीं, हमेशा रहेंगी और अब भी हैं। यह वेदमन्त्र यहाँ विचार करने योग्य है—

ऋतंच सत्यंचाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत, ततो रात्र्यजायत
ततः समुद्रोअर्णवः...
यथापूर्वमकल्पयद्दिवञ्च पृथ्वींचान्तरिक्षमथो स्वः।
ऋ० मं० १० । सू० १९०।

ऋत, सत्य, तप आदि प्रलय के पश्चात उसी प्रकार स्थापित हुए, जिस प्रकार प्रलय के पहले थे; अर्थात् ये सब त्रिकालाबाधित ईश्वरीय नियम हैं। स्त्रियों को उचित है कि मोक्ष प्राप्ति के लिए पतिसेवा किया करें। तप द्वारा अपना और अपने देश का भला करें। ब्रह्मचारिणी रहकर सुसन्तान की माता बनें और सत्य भाषण द्वारा अपने को पवित्र रक्खें। स्त्रियों पर झूठ बोलने का लाञ्छन लगाया जाता है। स्त्रियों के आठ दूषणों में असत्य भाषण है। मानो झूठ बोलना स्त्रियों का धन्धा ही हो—कभी करती ही नहीं। बहनो! पुरुषों द्वारा लगाए गए इन दूषणों से बचो और उनके दावे को झूठा सिद्ध करके दिखा दो। तुम्हें वेद आज्ञा देता है कि सब अवस्थाओं में ज्ञान आदि सदाचार ही लाभदायक हैं। इसलिए ज्ञान प्राप्त करके विदुषी बन स्त्री को अपने पति के घर जाकर ऐसा व्यवहार करना चाहिए कि सब लोग उसकी प्रशंसा करें।

(१५) दीर्घायु

ॐ इयं नार्युपब्रूते पूल्यान्यावपन्तिका।
दीर्घायुरस्तु मे पतिर्जीवाति शरदः शतम्॥

(इयं नारी) यह स्त्री (पूल्यानिआवपन्तिका) मेल-मिलाप के बीजों को बोती हुई (उपब्रूते) कहती है कि (मे पतिः) मेरा पति (जीवाति शरदः शतम्) दीर्घायु हो—सौ वर्ष तक जीवे।

(१) स्त्री कहती है कि मेल-मिलाप के बीजों को मैं बोती हूं, मेरा पति शतायु हो। स्त्री को ऐसी बातें नहीं करनी चाहिए, जिनसे पति देव को बुरा मालूम हो। पति की इच्छा के विरुद्ध कार्य करने से पति नाराज़ हो जायंगे और आपस में मनोमालिन्य हो जायगा। मेल-मिलाप के बीज बोने के लिए स्त्री पुरुष को मिलकर काम करना पड़ेगा। स्त्री को अपने पति की आज्ञा में रहकर उसे सन्तुष्ट रखना चाहिए। मनुजी ने कहा हैः—

सन्तुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्रा भार्या तथैवच।
यस्मिन्नेवं कुले नित्यं कल्याणं तत्रवै ध्रुवम्॥

"*जिस कुल में स्त्री से पति और पति से स्त्री प्रसन्न रहती है, वहाँ सब सुख-सम्पत्ति निवास करती है*"। स्त्री को चाहिए कि अपने आचरणों द्वारा पति को अपना बनाले। उसका प्रेम अपने प्रति उत्पन्न करले। जहाँ इस प्रकार प्रेमानन्द होगा, वहाँ पूर्णायु प्राप्त कर लेना कठिन नहीं है। चिन्ता, शोक, भय क्रोध इत्यादि विकार आयुका नाश करते हैं। यदि रात दिन घर में कलह रहा और आठों पहर लड़ाई-झगड़े और टण्टे-फ़साद में ही गुज़रे तो समझ लीजिए कि शरीर में बल और तन्दुरुस्ती कदापि नहीं रह सकती। स्त्री को चाहिए कि पति को चिन्ता और शोक में डालने वाली बात न करे। चिन्ता बहुत ही बुरी वस्तु है। यह काष्ठ

की चिता से भी बुरी है, इसलिए स्त्रियों का कर्त्तव्य है कि अपने जीवन-धन को चिन्ता, शोक, क्रोध आदि से निवारण करती रहा करें। उन्हें सदा प्रसन्न रखने का ध्यान रक्खें। अपने व्यवहार तथा मीठे वचनों से उनके हृदय को समय समय पर शान्त करती रहें। बस, यही पतिव्रता स्त्री का धर्म है। जिस घर में पति-पत्नी आनन्द पूर्वक रहते हैं, वहाँ सब सुखों का वास होता है। उस घर में अल्पायु कोई नहीं होता। अपने पति को दीर्घायु या अल्पायु बनाना पत्नी के हाथ की बात है। इसीलिए वेद ने स्त्री के मुख से कहलाया है कि "मेरा पति सौ वर्ष तक जीवित रहे"। ऐसा ही एक मन्त्र और है उस पर भी विचार करना चाहिए।

पुनः पत्नीमग्निरदादायुषा सह वर्चसा।
दीर्घायुरस्या यः पतिर्जीवाति शरदः शतम्॥
(अथर्व० १४।२।२)

"ईश्वर ने दीर्घायु और तेजस्वी पत्नी प्रदान की है। इसका पति दीर्घजीवी होकर सौ वर्ष तक जीता रहे"। दीर्घायु स्त्री को अल्पायु पति नहीं चाहिए। विवाह-संस्कार के पहले पति-पत्नी का उत्तम जोड़ा मिलाना चाहिए। बिना सोचे-विचारे जोड़ा मिला देने से परिणाम अच्छा नहीं होता। न तो सन्तान ही उत्तम होती है और न दम्पति दीर्घायु हो पाते हैं। जब कि स्वस्थ और बलवती स्त्री हो, तो उसके लिए उससे अधिक बलवान् और स्वस्थ पुरुष खोजना चाहिए। प्राचीन काल में इस विषय में बहुत सावधानी रक्खी जाती थी। शिवजी के वज्रसार धनुष को उठाकर एक ओर रखने वाली अपनी पुत्री सीता के लिए महाराजा जनकजी ने धनुष को तोड़ देने वाला पति योग्य समझा था। अब इस बात का विचार नहीं रहा। यदि जन्मपत्री नहीं मिली, तो सब बात का मेल-मिलाप ताक पर रख दिया जाता है !! सीता जी के विवाह में, रुक्मिणी तथा सुभद्रा के हरण में, कुन्ती और द्रौपदी के स्वयम्वर में पूर्ण

सावित्री के पति निर्वाचन में कब जन्मपत्री देखी गई थी ? वहाँ तो योग्यता और गुणों का ख्याल था। इन दम्पतियों से लवकुश, प्रद्युम्न, अर्जुन, भीम जैसे महा तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुए थे। जन्मपत्रियाँ मिलाकर विवाह करने का यह फल अवश्य हुआ है कि डरपोक और मूर्ख सन्तानें उत्पन्न हो रही हैं तथा उत्तरोत्तर बाल विधवाओं की संख्या बढ़ती जा रही है। आजकल लोगों ने जन्मपत्री को मुख्य मान कर योग्यता और गुणों की ओर ध्यान देना छोड़ दिया। पहले योग्यता और गुणों का विचार रक्खा जाता था जन्मपत्री वगैरह का मिलान आवश्यक नहीं था। इन जन्मपत्रियों के मिलान की बदौलत स्त्री-पुरुषों के दिल नहीं मिलते और सारे गृह-सुख नष्ट हो जाते हैं। स्त्री-पुरुष विष खाते हैं, कुएं में गिरते हैं, आत्म-हत्याएं कर लेते हैं।

इन सब बातों से बचने के लिए वेद उपदेश देता है कि, तेजस्वी और दीर्घायु स्त्री के लिए शतायु पुरुष को नियुक्त करो। अर्थात् बलवान् स्त्री के साथ बलवान् पुरुष को और निर्बल स्त्री के साथ निर्बल पुरुष को मिलाओ। कहीं ऐसा न हो कि रोगी पुरुष के साथ एक स्वस्थ स्त्री का विवाह कर दो। इसी कारण मनु आदि महर्षियों ने लिखा है कि–

हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोम शार्शसम्।
क्षय्यामयाव्यपस्मारि श्वित्रिकुष्ठिकुलानिच ॥
नोद्वहेत्कपिलां कन्यां नाधिकाङ्गीं न रोगिणीम्।
नालोमिकां नातिलोमां न वाचाटां न पिङ्गलाम् ॥

"जो क्रियारहित हो, जिस कुल में पुत्र न पैदा हो, जिसमें वेदों का पठन-पाठन न होता हो, जिस कुल के मनुष्यों के शरीर पर घने रोम हों, जिस कुल में, बवासीर, मन्दाग्नि, क्षयी, मृगी, श्वेत दाग और कोढ़ की बीमारी हों; उसमें विवाह न करें। इसी प्रकार पीले बालों वाली, पीले नेत्रों वाली, अधिक बोलने वाली, कम रोम वाली, अधिक रोम वाली,

नक्षत्र, वृक्ष, नदी, म्लेच्छ, पर्वत, पक्षी, सर्प, और दासी पर जिस कन्या का नाम हो, उस कन्या के साथ भी विवाह नहीं करना चाहिए।" हमारे पूर्वजों ने विवाह के सम्बन्ध में कैसे बारीक़ से बारीक़ नियम बनाए हैं, यह विचारने की बात है। और इधर भी देखना चाहिए कि हमलोग पर-कन्या का जोड़ा ढूँढ़ते वक्त कुछ भी नहीं देखते! या तो रुपया पैसा जागीर जायदाद देखते हैं या जन्मपत्रियाँ देखते हैं। मानो हम रुपये पैसे या जागीर जायदाद अथवा जन्मपत्रियों से अपने लड़के लड़कियों का विवाह कर रहे हों!! आजकल विवाह सम्बन्ध के समय लोग ज़रा भी ध्यान नहीं देते। वेद का उपदेश है कि स्त्रियो! तुम अपने योग्य पति को स्वयं ढूँढलो और उसके साथ पाणि-ग्रहण संस्कार करके सौ वर्ष तक आनन्द पूर्वक रहो। यजुर्वेद में लिखा है—

> सिनीवालि पृथुष्टुके या देवानामसि स्वसा।
> जुषस्व हव्य माहुतं प्रजां देवि दिदिड्ढिनः॥ (३४-१०)

अर्थात्—हे कुमारियो! तुम ब्रह्मचर्य व्रत का पूर्णतया पालन करके और उपर्युक्त विद्याओं को सीख कर अपनी इच्छानुसार पति चुनो। उनके साथ सुखपूर्वक गृहस्थ भोगो तथा सन्तान उत्पन्न करो। यदि योग्य पति न प्राप्त हो तो आमरण ब्रह्मचारिणी रह कर अपना जीवन पवित्र करो। ब्रह्मचारिणी रह कर जीवन व्यतीत करना बुरा नहीं है। बल्कि इसके लिए हिन्दू-ग्रन्थों में आज्ञा है।

> द्विविधाः स्त्रियः ब्रह्मवादिन्यः सद्योवध्वश्च तत्र ब्रह्मवादिनीना मुपनयन मग्नीन्धनं वेदाध्ययनं स्वगृहे भिक्षाचर्य्या।
> (हारीत)

स्त्रियाँ दो प्रकार की होती हैं (१) ब्रह्मवादिनी और (२) सद्योवधू। ब्रह्मवादिनी, उपनयन, अग्निहोत्र, वेदाध्ययन करतीं तथा स्वगृह

में ही भिक्षा माँग कर उदर-पोषण करती रहें। इन सब बातों का तात्पर्य यह है कि, स्त्रियों को उचित है कि वे स्वस्थ, बलवान् और विद्वान् पुरुष को ही अपना पति बनावें। अल्पायु और रोगी पति का पाणि-ग्रहण कर अपने लिए वैधव्य दुःख मोल न लें। अब इसी विषय के निम्न मन्त्र पर भी विचार करना चाहिए।

प्रबुध्यस्व सुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय।
गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासे दीर्घं त आयुः सविता कृणोतु॥
(अथर्व० १४।२।७५)

अर्थात्—सौ वर्ष की दीर्घायु के लिए उत्तम ज्ञान प्राप्त करके ज्ञानी बन अपने घर जाओ। जिस प्रकार गृह-स्वामिनी रहती है, उस प्रकार रह। सूर्य तेरी दीर्घायु करे।" इससे भी स्पष्ट होता है कि स्त्री को सौ वर्ष तक आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करने का उपदेश है। स्त्रियों को चाहिए कि वे अपने कार्य-कलाप को इतना उत्तम रक्खें कि अल्पायु न हों। मित आहार-विहार से आयु-वृद्धि होती है। वेद को सौ वर्ष का पशु-जीवन पसन्द नहीं है। इसलिए वह कहता है कि दीर्घायु के लिए उत्तम ज्ञान प्राप्त करके ज्ञानी बन, अज्ञानी मत रह। मूर्खों की देश को आवश्यकता नहीं है। स्त्रियों का ज्ञानी होना परम आवश्यक है। क्योंकि वे प्रजा उत्पन्न करने वाली हैं। ज्ञानी माता का ही पुत्र ज्ञानी हो सकता है। अज्ञानी माता का पुत्र मूर्ख होता है। "कल मर जाना है पढ़ लिख कर क्या करेंगी? हमें क्या बाबू मुंशी बनना है? पढ़ने से हमें लाभ भी क्या होगा?" इत्यादि बातें बना कर स्त्रियाँ अज्ञान रूपी कीचड़ में फँसी रहती हैं। परन्तु ऐसा विचारना मूर्खता ही है। ज्ञान प्राप्त करना कोई बुरी बात तो है ही नहीं? फिर उससे मुँह छिपाना पाप है। बिना ज्ञान सम्पादन किए स्त्री कदापि गृह-स्वामिनी होने की अधिकारिणी नहीं है। दीर्घायु उसी को शोभा देगी जो ज्ञानी होगी। अज्ञानी दशा में दीर्घ-

जीवन भी अपने लिए और दूसरे लोगों के लिए भार रूप हो जाता है। इसलिए वेद कहता है कि "स्त्रियो ! उत्तम ज्ञान प्राप्त करके ज्ञानी बनो और दीर्घायु प्राप्त करो।"

दीर्घायु सूर्य से प्राप्त हो सकती है। इस विषय पर वेद में बहुत से मन्त्र हैं। "सूर्य-रश्मि-चिकित्सा" का वर्णन भी वेद में है। जो स्त्रियाँ प्रकाश में अथवा धूप में नहीं रहतीं वे तन्दुरुस्त नहीं रहतीं। उन स्त्रियों से जोकि घरों में अर्थात् छाया में जीवन व्यतीत करती हैं, वे स्त्रियाँ अधिक स्वस्थ और बलवती होती हैं जो धूप में घूमती फिरती हैं। छाया में रह कर जिस प्रकार पौधा नहीं पनपने पाता, उसी प्रकार सूर्य-ताप से वञ्चित मनुष्य भी दुर्बल, कृश, रोगी और पीले रङ्ग का हो जाता है। हमारी बहनें अच्छी तरह सूर्य ताप न पा सकने के कारण हमेशा रोगिणी और निर्बल रहती हैं। स्त्रियों के लिए परदा होना चाहिए, किन्तु इतना अधिक न हो कि उन्हें भलीभाँति हवा भी न मिल सके। और दैवयोग से यदि घर के बाहर चार क़दम चलने का मौक़ा आवे, तो उन्हें बुरी तरह वस्त्रों से लपेट दिया जाय या बुरक़ा ओढ़ा दिया जाय! दुरदर्शी इस प्रकार स्त्रियों को लुका-छुपा कर रखने को "इज़्ज़त रखना" कहते हैं! वास्तव में देखा जाय, तो यह स्त्रियों के अधिकारों की हत्या है—उनके साथ भयानक अत्याचार है, इतने पर भी ख़ैर नहीं। जिन मकानों में स्त्रियों को बन्द रखा जाता है, वे प्रायः स्वच्छ, विस्तृत और प्रकाशमय नहीं होते। मैले, ठण्डे, अँधेरे, वायुहीन, तङ्ग और बदबूदार मकानों में स्त्रियों को चौबीसों घण्टे क़ैदियों की तरह बन्द रहना पड़ता है। इस प्रकार के मकानों को मौत का पिंजरा या नरक का नमूना कहा जा सकता है। जिन मकानों में सूर्य की किरणें आने के लिए तथा हवा के आने जाने के लिए मार्ग नहीं हैं, वे मकान मनुष्य को अल्पायु बनाने वाले होते हैं। इसीलिए वेद सूर्य के द्वारा दीर्घायु प्राप्त करने का सङ्केत

करता है। सूर्य-किरणों से बीमारी के कीड़े मर जाते हैं। वेद में भी वर्णन है—

उद्यन्नादित्यः क्रमीन् हन्तु निम्रोचन् हन्तु रश्मिभिः।
ये अन्तः क्रमयो गवि ॥" (अथर्व० २। ३२। १)

अर्थात्—उदय होता हुआ सूर्य एवं अस्त होता हुआ सूर्य उन कृमियों का नाश करे, जो कृमि पृथ्वी पर हैं। और भी—

अपचितः प्रपतत सुपर्णो वसतेरिव।
सूर्यः कृणोतु भेषजं चन्द्रमा वापोच्छतु ॥ अ० ६। ३। ८॥

अर्थात्—सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाश से व्याधियाँ ऐसी गति से भागती हैं, जैसी गति से गरुड़ नामक पक्षी आकाश में उड़ता है। इन वैदिक प्रमाणों से सिद्ध होता है कि स्त्रियों को सूर्य-प्रकाश में रह कर दीर्घायु प्राप्त करनी चाहिए।

---

(१६) बलवान् सन्तान

ॐ आत्मन्वत्युर्वरा नारीय मागन् तस्यां नरो वपत बीजम-स्याम् स वः प्रजां जनयद् वक्षणाभ्यो बिभ्रती दुग्धमृषभस्य-रेतः। (अथर्व० १४। २। १४)

(आत्मन्वती) आत्मिक बल से युक्त (उर्वरा) संतान पैदा करने योग्य (इयं नारी) यह स्त्री (आगन्) आ गई है। (नरः) पुरुष (बीजम्) बीज (वपत) बोओ। (सा) वह (वृषभस्य) बलवान् (रेतः) वीर्य (बिभ्रती) धारण करती हुई (वः प्रजां) आपके लिए प्रजा (वक्षणाभ्यः) गर्भाशय से (जनयत्) उत्पन्न करे।

(१) आत्मिक बलवाली संतान पैदा करने योग्य यह स्त्री आ गई है। इस उपदेश से यह ध्वनि निकलती है कि "आत्मिक

बल" युक्त स्त्री के गर्भाशय से उत्तम संतान उत्पन्न होती है। शारीरिक बल से आत्मिक बल का दर्जा ऊँचा है। यदि शरीर में खूब बल है और आत्मा निर्बल है, तो मनुष्य किसी भी काम का नहीं। और यदि आत्मा प्रबल है, फिर भले ही शरीर निर्बल ही क्यों न हो, तो वह व्यक्ति सब कुछ कर सकता है। स्त्रियों की आत्मा बलवान् होनी चाहिए। आत्मिक शक्ति, एक महान् शक्ति है, जिसे साधारण नहीं जान सकते। मानव शरीर के अन्दर यह महान् ईश्वरीय शक्ति, गुप्त रूप से विराजमान है। ज्ञानी लोग ही इस शक्ति को जानते हैं, और वे ही इस शक्ति का उपयोग भी करते हैं। योगाभ्यास द्वारा इस शक्ति का विकास होता है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि द्वारा आत्मा पर अधिकार जमाया जा सकता है। योगाभ्यास के प्रारंभिक ४ नियम तो इतने सरल हैं कि स्त्रियाँ सहज ही में इन नियमों का पालन कर सकती हैं। "कठिन है" ऐसा कह देने से तो आसान से आसान काम भी नहीं हो सकता। महावीर नैपोलियन का तो यह सिद्धान्त था कि "संसार में "असंभव" कुछ भी नहीं है। बल्कि यह "असंभव" शब्द कोष (Dictionary.) से ही निकाल डालना चाहिए"। वीर-सन्तान उत्पन्न करने के लिए माता भी साहसी, निर्भय और आत्मबल युक्त हो। यह वेद की इच्छा है।

हमारे घरों की स्त्रियों ने शारीरिक और आत्मिक दोनों ही बलों को खो दिया। शरीर हमेशा रोगी बना रहता है। मुँह पर जर्दी आ गई है। घर में दवा दारू हमेशा तय्यार होती रहती है। डाक्टर और वैद्यों को बुलाया जाता है—यह तो शरीर की दशा हुई। अब उस रोगी और कमजोर शरीर में रहने वाले आत्मदेव की निर्बलता का भी दृश्य देखिए। अगर घर में चूहा आजाय, तो उसे भगा देना कठिन होता है! दो बिल्लियाँ अगर आपस में लड़ मरें तो मारे डरके उनके होश उड़ जाते हैं!! अधिक

करता है। सूर्य-किरणों से बीमारी के कीड़े मर जाते हैं। वेद में भी वर्णन है—

"उद्यन्नादित्यः क्रिमीन् हन्तु निम्रोचन् हन्तु रश्मिभिः।
ये अन्तः क्रिमयो गवि॥" (अथर्व० २। ३२। १)

अर्थात्—उदय होता हुआ सूर्य एवं अस्त होता हुआ सूर्य उन कृमियों का नाश करे, जो कृमि पृथ्वी पर हैं। और भी—

अपचितः प्रपतत सुपर्णो वसतेरिव।
सूर्यः कृणोतु भेषजं चन्द्रमा वापोच्छतु॥ अ० ६। ३। ८॥

अर्थात्—सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाश से व्याधियाँ ऐसी गति से भागती हैं, जैसी गति से गरुड़ नामक पक्षी आकाश में उड़ता है। इन वैदिक प्रमाणों से सिद्ध होता है कि स्त्रियों को सूर्य-प्रकाश में रह कर दीर्घायु प्राप्त करनी चाहिए।

---

(१६) बलवान् सन्तान

ॐ आत्मन्वत्युर्वरा नारीय मागन् तस्यां नरो वपत बीजम-स्याम् स वः प्रजां जनयद् वक्षणाभ्यो विभ्रती दुग्धमृषभस्य-रेतः। (अथर्व० १४। २। १४)

(आत्मन्वती) आत्मिक बल से युक्त (उर्वरा) संतान पैदा करने योग्य (इयं नारी) यह स्त्री (आगन्) आ गई है। (नरः) पुरुष (बीजम्) बीज (वपत) बोओ। (सा) वह (वृषभस्य) बलवान् (रेतः) वीर्य (विभ्रती) धारण करती हुई (वः प्रजां) आपके लिए प्रजा (वक्ष-णाभ्यः) गर्भाशय से (जनयत्) उत्पन्न करे।

(१) आत्मिक बलवाली संतान पैदा करने योग्य यह स्त्री आ गई है। इस उपदेश से यह ध्वनि निकलती है कि "आत्मिक

बल'' युक्त स्त्री के गर्भाशय से उत्तम संतान उत्पन्न होती है। शारीरिक बल से आत्मिक बल का दर्जा ऊँचा है। यदि शरीर में खूब बल है और आत्मा निर्बल है, तो मनुष्य किसी भी काम का नहीं। और यदि आत्मा प्रबल है, फिर भले ही, शरीर निर्बल ही क्यों न हो, तो वह व्यक्ति सब कुछ कर सकता है। स्त्रियों की आत्मा बलवान् होनी चाहिए। आत्मिक शक्ति, एक महान् शक्ति है, जिसे साधारण नहीं जान सकते। मानव शरीर के अन्दर यह महान् ईश्वरीय शक्ति, गुप्त रूप से विराजमान है। ज्ञानी लोग ही इस शक्ति को जानते हैं, और वे ही इस शक्ति का उपयोग भी करते हैं। योगाभ्यास द्वारा इस शक्ति का विकास होता है। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि द्वारा आत्मा पर अधिकार जमाया जा सकता है। योगाभ्यास के प्रारंभिक ४ नियम तो इतने सरल हैं कि स्त्रियाँ सहज ही में इन नियमों का पालन कर सकती हैं। "कठिन है" ऐसा कह देने से तो आसान से आसान काम भी नहीं हो सकता। महावीर नैपोलियन का तो यह सिद्धान्त था कि "संसार में "असंभव" कुछ भी नहीं है। बल्कि यह "असंभव" शब्द कोष. (Dictionary) से ही निकाल डालना चाहिए"। वीर सन्तान उत्पन्न करने के लिए माता भी साहसी, निर्भय और आत्मबल युक्त हो। यह वेद की इच्छा है।

हमारे घरों की स्त्रियों ने शारीरिक और आत्मिक दोनों ही बलों को खो दिया। शरीर हमेशा रोगी बना रहता है। मुँह पर जर्दी आ गई है। घर में दवा दारू हमेशा तय्यार होती रहती है। डाक्टर और वैद्यों को बुलाया जाता है—यह तो शरीर की दशा हुई। अब उस रोगी और कमजोर शरीर में रहने वाले आत्मदेव की निर्बलता का भी दृश्य देखिए। अगर घर में चूहा आजाय, तो उसे भगा देना कठिन होता है! दो बिल्लियाँ अगर आपस में लड़ मरें तो मारे डरके उनके होश उड़ जाते हैं!! अधिक

क्या कहें, रात के वक्त उन्हें अपनी छाया से ही डर लगता है !!! स्त्रियों की कैसी बुरी हालत है। आत्मिक शक्ति का इनमें से एकदम लोप हो गया। आत्म-सम्मान, आत्म गौरव, तो इन्हें छू तक नहीं गया। साहस, हिम्मत, का नामोनिशान नहीं पाया जाता। जब से ऐसी स्त्रियाँ होने लगीं, तभी से देश में मानव-समाज का पतन आरंभ हो गया। ऐसी आत्म-हीन स्त्रियों के गर्भ से बच्चे स्वाधीनता के स्वराज्य-आन्दोलन में बल-हीन और निस्तेज सिद्ध हुए। इसमें संदेह नहीं कि शिक्षा के प्रभाव से हमारे विचारों में गाम्भीर्य होगा, और बातें भी वैसी ही गंभीर और बड़ी लम्बी चौड़ी होंगी। किन्तु सब कुछ होने पर भी उनका आचरण अस-हाय बच्चों से कम नहीं होगा। क्योंकि आत्मशक्ति-शून्य माता के गर्भ से उत्पन्न बालक कदापि साहस के कार्यों में सफलता नहीं पा सकता। इसलिए वेद कहता है कि स्त्री को आत्मिक बल अवश्य बढ़ाना चाहिए।

(२) "हे पुरुष ! बीज बोओ। वह बलवान् वीर्य से संतान उत्पन्न करे।" आत्मिक बल वाली स्त्री से बलवान् पुरुष को संतान उत्पन्न करनी चाहिए। निर्बल स्त्री, अथवा पुरुष सन्तान उत्पन्न न करें। जो वेद के इस उपदेश का अतिक्रमण करेगा, वह कष्ट पायगा। जो लोग भोग-विलास के लिए गृहस्थधर्म पालन करते हैं, उनकी संतानें देश के लिए अत्यन्त घातक होती हैं। विषयी लोगों की संतान भी विषयलम्पट, कायर, मूर्ख, पापी और अल्पायु होती है। अतएव विषय-वासना की शांति के लिए आपस में सम्बन्ध न जोड़ो। बहनो ! विवाह, विवाह के लिए करो, पाप और खिलवाड़ के लिये नहीं। देश, समाज और जाति को कलंकित मत करो। ऐसे बच्चे पैदा करने के बजाय तो न करना ही अच्छा है। तुम्हारे इस व्यभिचार के विषैले परिणामरूप आज देश परतंत्रता की मजबूत जंजीर में जकड़ा जा चुका है। राष्ट्रियता का नाश हो चुका है। इस प्रकार यदि निर्बल स्त्री-पुरुष निर्बल रजवीर्य द्वारा

भारत में संतान उत्पन्न करते रहे तो हम लोगों का नाश निकट समझना चाहिए। स्त्री-पुरुषों को विवाह योग्य उम्र होने पर ही, अपनी योग्यता के अनुसार पुरुष और स्त्री ढूँढ़कर विवाह सम्बन्ध करना चाहिए। तभी बलवान् वीर्य द्वारा बलवान् संतान पैदा हो सकती है।

स्त्री-पुरुषों का वैवाहिक सम्बन्ध कामवासना की शान्ति के लिए नहीं है। जो लोग विषय भोग के लिये विवाह करते हैं, वे व्यभिचारी हैं—पापी हैं। वेद कहता है—

सं पितरा वृत्विये सृजेथां माता पिता च रेतसो भवाथः।
मर्य इव योषा मधिरोहयैनां प्रजां कृण्वाथामिह पुष्यतं रयिम्॥
(अथर्व० १४। २। ३७)

माता पिता होने की इच्छा करने वालो! तुम दोनों ऋतुकाल में ही एकत्र होओ। अपने वीर्य से माता पिता बनो। संतान उत्पन्न करो, इत्यादि। सारांश यह कि स्त्री-पुरुषों को ऋतुगामी ही होना चाहिए। इस नियम को तोड़ कर अपने लिए दुःखों का आह्वान न करना चाहिए। नीतिकारों का कहना है कि "जो ऋतुकाल में ही गृहस्थधर्म का पालन करते हैं, वे ब्रह्मचारी हैं और सच्चे धार्मिक स्त्री पुरुष हैं।" गर्भ सम्बन्धी शिक्षाओं के अनेक वेद मंत्र हैं। अथर्ववेद के छठे काण्ड के सूक्त १७ में सब मंत्र गर्भ विषयक ही हैं। वेद स्त्रियों को उपदेश देता है कि:—

गर्भं धेहि सिनीवालि! गर्भं धेहि सरस्वति।
गर्भं ते अश्विनोभा धत्तां पुष्कर स्रजा॥
अथर्व० ६। १७। ३॥

"हे उत्तम ज्ञान वाली, रंभोरु! गर्भ को ठीक प्रकार धारण कर। पुष्टिदाता रज और वीर्य दोनों तेरे गर्भ को भली प्रकार पुष्ट करें।" वेद

कहता है कि स्त्री को उचित है कि ब्रह्मचारी बन कर उत्तम रज प्राप्त करे और ठीक समय में, अच्छी तरह गर्भ धारण करे। गर्भ रहने के समय में स्त्री को जिस प्रकार का आचरण रखना चाहिए, वैसा रक्खे*। गर्भ को हानि पहुँचाने वाला काम भूल कर भी न करे। मूर्खा स्त्रियों को यह भी नहीं मालूम होता कि गर्भिणी को क्या करना चाहिए और क्या नहीं। पशुओं की तरह गर्भ धारण करने वाली स्त्रियों की संतान पशु-तुल्य उत्पन्न होती है। दम्पति-शास्त्र बड़ा ही गहन शास्त्र है। यह शास्त्र शरीर शास्त्र से बहुत कुछ सम्बन्ध रखने वाला है। समझदार स्त्रियों को चाहिए कि गर्भ धारण के पूर्व गर्भ विषयक पूरा पूरा ज्ञान प्राप्त कर लें। हम इस विषय पर "वैदिक दम्पति शास्त्र" में बहुत कुछ लिखेंगे।

यदि हमारी बहनें गर्भ विषयक ज्ञान पाकर ही संतानें प्रसव करेंगी तो भारत के दुर्दिन शीघ्र ही दूर होकर इसका भाग्य चमक उठेगा। बहनो! विषय-भोग को ही अपने जीवन का उद्देश्य मत समझो। बल्कि तुम्हारा प्रथम कर्त्तव्य तो यह है कि अपनी मातृभूमि के दुःखों को हटाने वाली संतानें उत्पन्न करो। राष्ट्र को अवनत दशा से उन्नत बनाना तुम्हारे हाथ है। तुम क्या नहीं कर सकतीं? सब कुछ कर सकती हो। अभिमन्यु को चक्रव्यूह में घुसना गर्भ से ही आता था। निकलना न आने के कारण उसे प्राण खोने पड़े। इस कथा से तुम अन्दाज़ा लगा सकती हो कि तुम्हारा जीवन कितना उत्तरदायित्वपूर्ण है, जिसे तुम कौड़ियों के मोल बर्बाद कर रही हो! तुम्हें वेद की शिक्षाओं पर ध्यान देकर अपना जीवन पवित्र बनाना चाहिए।

---

* इस विषय में मेरी लिखी हुई "सन्तान शास्त्र" नामक पुस्तक देखो। "चाँद" कार्यालय प्रयाग से मिल सकेगी। (लेखक)

(१७) सदाशयता और मन की पवित्रता।

ॐ अघोर चक्षुरपतिघ्नी स्योना शग्मा सुशेवा सुयमा गृहेभ्यः
वीरसूर्देवृकामा सं त्वयैधिषीमहि सुमनस्यमाना ॥

अथर्व० १४।२।१७

हे स्त्री! (अघोर चक्षुः) क्रूर दृष्टि न रखने वाली, (अपतिघ्नी) पति का घात न करने वाली (स्योना) सुख देने वाली (शग्मा) श दक्ष (सुशेवा) सेवा योग्य (गृहेभ्यः) घर के लिए (सुयमा) उत्त नियमों का पालन करने वाली (वीरसूः) वीर संतान पैदा करने वा (देवृकामा) देवर को खुश रखने वाली (सुमनस्यमाना) सु उत्त मन वाली हो। (त्वया) तेरे साथ (सं एधिषीमहि) हम मिल कर व

(१) "क्रूर दृष्टि न रखने वाली" यह वेद वाक्य स्त्रियों सचेत करता है कि—भूल कर भी क्रूर दृष्टि नहीं रखनी चाहिए। क्रू शब्द का अर्थ है—सख्त, कठोर, निर्दय, गर्म इत्यादि। स्त्रियों का हृ कोमल—दयार्द्र होना चाहिए। सब प्राणियों पर प्रेम-दृष्टि होनी चाहिए अपनी ओर से किसी के लिए बुरा विचार नहीं करना चाहिए। क्रूर दृ वाली स्त्रियों से लोग बहुत डरते हैं। लोग ऐसी स्त्रियों को डाकन डायन नाम से पुकारते हैं। सब पर दया-दृष्टि रखनी चाहिए। गर्म मिजाज औरत, लोगों की दृष्टि में गिर जाती है। किसी की उन्नति दे कर कुढ़ना अथवा डाह नहीं करनी चाहिए। ये लक्षण दुष्टों के हैं गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा है:—

जो काहू की देखें विपती, सुखी होहिं मानहु जग नृपती।
जो काहू की सुनहिं बड़ाई, सांस लेहिं जनु जूड़ी आई।

दुष्ट लोग अगर किसी की बड़ाई सुनते हैं, तो दिल में अत्यन्त दुःखी होते हैं और ऐसी लम्बी साँस लेते हैं, मानो बुखार चढ़ा हो। अतः

किसी के दुःख की बात सुनते हैं, तो इतने खुश होते हैं, मानो उन्हें पृथ्वी का सारा राज्य मिला हो। स्त्रियों को उचित है कि वे दुष्ट न बनें। क्रूर स्वभाव वाली न बनें। जो स्त्री क्रूर स्वभाव वाली होती है, उसे घर का कोई आदमी अच्छी दृष्टि से नहीं देखता—उससे बोलना तक पाप समझते हैं। बहुत सी स्त्रियाँ क्रूर स्वभाव की होती हैं। बात बात में सास ससुर को कड़े शब्द कहा करती हैं। पति के सिर पर शेरनी की तरह दहाड़ती हैं। बच्चों को मारना पीटना, और लोगों से लड़ना झगड़ना चौबीसों घण्टे होता रहता है। अगर कोई सामने से बोले तो उसके साथ कटु वचनों द्वारा अथवा रूखे शब्दों द्वारा बातचीत करती हैं। रात दिन मस्तक में सल पड़े रहते हैं। इसी ताक में बैठी रहती हैं कि कोई छेड़े तो उसकी खबर लें। घर के सामान को तोड़ना-फोड़ना, पटकना, झटकना, उन्हें प्रिय होता है। मुँह चढ़ाये हुए, नागिन की तरह बैठी रहती हैं। स्त्रियों का यह स्वभाव अत्यन्त बुरा है। उन्हें चाहिए कि ऐसा स्वभाव न डालें। इस स्वभाव से स्त्रियों की बड़ी दुर्दशा होती है।

प्रायः स्त्रियाँ झगड़े को बहुत पसन्द करती हैं। किसी ने ज़रा भी उनसे कुछ उल्टी सीधी कही कि वे द्वन्द्व-युद्ध के लिए मैदान में उतर पड़ती हैं। जो उनके मुँह में आया, वही कह डालती हैं। राँड, निपूती, कह अपनी क्रोधाग्नि शान्त करती हैं। क्रूर स्वभाव वाली स्त्रियों को लड़ते वक्त बड़ा ही जोश सा चढ़ जाता है। उस समय रणचण्डी का रूप धारण कर लेती हैं। हया शर्म को तो घोल कर पी जाती हैं। सारा मुहल्ला तमाशा देखने के लिए इकट्ठा हो जाता है। लाख समझाने पर भी यह कुंजड़ों की लड़ाई बन्द नहीं होती। ये काम भले घर की बेटियों के नहीं हैं। ऐसी कुलटा और कलहा, क्रूर दृष्टि वाली स्त्री को कोई भी भला नहीं कहता। इसीलिए वेद ने स्त्रियों को क्रूरता से बचने का

उपदेश दिया है। स्त्रियों को चाहिए कि वे उदार, सरल, शान्त, दयार्द्र एवं नम्र स्वभाव वाली बनें।

(२) "पति का घात न करने वाली बनो।" स्त्रियों का जीवन-धन पति ही है। एक कवि ने कहा है कि—

पतिर्ब्रह्मा पतिर्विष्णुः पतिर्देवो महेश्वरः।
पतिः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीपतये नमः॥

स्त्री के लिये उसका पति ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव है और साक्षात् परब्रह्म है ऐसे पति की रात दिन चरण-सेवा करके स्त्री को अपना जीवन सफल बनाना चाहिए।

भर्त्ता देवो गुरुर्भर्त्ता धर्मतीर्थव्रतानि च।
तस्मात्सर्वं परित्यज्य पतिमेकं भजेत् सती॥

पति ही देव है पति ही गुरु है, धर्म, तीर्थ, व्रत आदि सब कुछ पति ही है, इस लिए स्त्री को उचित है कि वह पतिभक्ति परायणा बने। बहुत सी स्त्रियाँ अपने पति का घात-पात करती हैं। अपने पति को, भौंरा और वीर बहूटी, मोर और घुग्घू पक्षी का मांस, चौप की जीभ, चूहे के कान, बिल्ली की जेर आदि घृणित पदार्थ धोखे से खिला देती हैं। कान खजूरा, सहस्रपा (गिजाई) आदि प्राणियों की भूनी देती हैं!! अपने हाथों जहर देकर मार डालती हैं!!! कई व्यभिचारिणी कुल्टाएँ दूसरे पुरुषों द्वारा अपने पति का वध करा डालती हैं। ऐसी बातों का परिणाम बड़ा ही भयंकर होता है। पतिघातिनी स्त्रियों का जीवन अत्यन्त घृणित, दुःखमय और नारकी बन जाता है। उन्हें बहुत पछताना पड़ता है। वृद्धावस्था, जिसे आनन्दपूर्वक बितानी चाहिए, अत्यन्त कष्टपूर्ण हो जाती है, क्योंकि जवानी का रूप-यौवन समाप्त हो जाने के बाद उसकी कोई बात भी नहीं पूछता—उसके मुँह पर कुत्ते भी

पेशाब नहीं करते। जिन जातियों में नातरा, घरवासा आदि रीतियाँ प्रचलित हैं उनमें ऐसी घटनाएँ प्रायः हुआ करती हैं।

घात कई तरह से हो सकता है। (१) विष द्वारा या किसी शस्त्र आदि दूसरे उपाय से (२) ऐसे कारण पैदा कर देना कि जिनसे पति स्वयं आत्मघात कर डाले (३) ऐसा व्यवहार करना कि पति धीरे-धीरे सूख-सूख कर प्राण त्याग दे। ये सब घात कहे जासकते हैं। इनसे स्त्रियों को बहुत बचना चाहिए। स्त्रियों का यह कर्त्तव्य नहीं, कि जिसका हाथ पकड़ा हो उसके साथ ऐसा धोखा करें। वेश्या की तरह जीवन व्यतीत करना स्त्रियों के लिए कलंक की बात है। वर्त्तमान समय में, समाचार पत्रों में, ऐसी अनेक घटनाएँ पढ़ने में आती हैं, परन्तु उनका जो भयंकर परिणाम होता है, वह रोमांचकारी होता है। इसलिए स्त्रियों को उचित है कि अपने पतिदेव की दासी बन कर रहें। उनको सब तरह का सुख पहुंचावें, उनके हृदय को चोट पहुंचाने वाला काम भूल कर भी न करें। मन से, वाणी से और कर्म से अपने पति का हित करें। अपने दिल में पति के विरुद्ध विचार न आने दो। ऐसे कटु शब्द न कहो, जिनसे पति के हृदय को चोट पहुंचे। पति से कटु शब्द बोलना भी घात है, क्योंकि उस कटु वचन द्वारा उसके हृदय को अत्यन्त वेदना होती है, जिससे उसका रक्त जल कर वह अल्पायु हो जाता है। इसी तरह ऐसे काम भी न करो, जिनसे पति को दुःख पहुंचे और वह चिन्ता में पड़े। उदाहरणार्थ—घर की चीजों को बेफिक्री से काम में लाना। घर में अन्न फैला पड़ा है। पीसते वक्त छटाँक आध पाव आटा ही बिखर गया। घी तेल ढुल गया। दूध को बिल्ली ही पी गई। रोटियाँ को कुत्ते उठा लेगये। ऐसी बातों से भी पति का घात होता है। क्योंकि पुरुष न जाने कितने कष्ट उठा कर कितनों की भली बुरी सह कर जो कुछ कमा कर घर में लाता है, उसे इस तरह बरबाद होते देख कर उसका

खून जल जाता है। रोज रोज की यह दशा देख कर उसका शरीर सूख कर लकड़ी बन जाता है। यह भी एक तरह का घात है। वेद कहता है कि पति का घात करने वाली न बनो। अपने प्रिय आचरणों द्वारा पति के सुखों को बढ़ाओ। क्योंकि उसके सुख में ही तुम्हारा भी सुख है।

(३) सुखदायिनी, कार्यकुशल और सेवायोग्य बनो। तुम्हारा आचरण घर में इस प्रकार का हो कि जिस से सब लोगों को सुख पहुंचे। दुःख पहुंचाना तुम्हारा काम नहीं है। "जो जैसा करता है वह वैसा ही भरता है"। इस नियम के अनुसार यदि तुम सुख पहुंचाओगी, तो खुद भी सुखी रहोगी और यदि तुमने दूसरों को दुःख दिया तो तुम्हारा जीवन भी दुःखमय हो जायगा। इसलिए, घर के मनुष्यों तथा गौ आदि पशुओं के लिए तुम सुख पहुंचाने वाली रहो। किसी भी काम को करने के पहले अच्छी तरह सोच लो कि, इससे किसी की आत्मा को कष्ट तो न होगा? कुछ स्त्रियाँ ऐसी हैं, जो घर के कुछ लोगों की दृष्टि में अच्छी बन जाती हैं और कुछ की दृष्टि से गिर जाती हैं। यह नीति बहुत बुरी है। इससे जीवन अशान्तिमय बन जाता है। घर कलह का अखाड़ा बन जाता है। दो पार्टियाँ हो जाती हैं, इसलिए घर में खूब युद्ध होता है। वेद इस नीति का विरोधी है—वह आज्ञा देता है कि घर ही क्या, बल्कि संसार के लिए सुख पहुंचाओ।

कई घरों में देखा जाता है कि कई चालाक स्त्रियाँ घर के सब सब से द्वेष रखती हैं और केवल पति को सुख रखती हैं। यह चालबाज़ी बड़ी ही भयानक है। ऐसी स्त्रियाँ घर-फोड़ होती हैं। इस प्रकार के व्यवहार में उनकी यह चाल होती है कि अगर मेरे पति से कोई घर का आदमी मेरी शिकायत करेगा तो वे उसे सच नहीं समझेंगे, बल्कि झूठ समझकर मेरा पक्ष लेंगे और उनका विरोध करेंगे। एक दिन ऐसा होगा कि मैं उनके मन पर चढ़ जाऊंगी और वे मुझे छोड़ नहीं सकेंगे तब किसी

दिन मौका पाकर दम्पट्टी चढ़ाकर उल्लू सीधा करलूंगी और हम दोनों स्त्री-पुरुष घर से अलग होकर रहने लगेंगे। इस प्रकार मनचाहा हो सकेगा" इत्यादि, यह नीति अच्छी नहीं है। स्त्री का फर्ज है कि वह घर के प्राणिमात्र को मन, वचन, कर्म से सुख पहुंचावे।

स्त्री का कार्यकुशल होना भी एक आवश्यकीय बात है। जो स्त्री गृहकार्य में चतुर होती है; वह घर के सब लोगों की प्यारी बन जाती है। जो स्त्री घर का काम-धंधा नहीं जानतीं उन्हें सब बुरी समझते हैं। कोई भी उनसे खुश नहीं रहता। जहाँ तहाँ, कड़े वचन सहने पड़ते हैं। दुत्कार फिट्कार सहनी पड़ती हैं। घर का काम-धंधा अपने पिता के घर से सीख कर आना चाहिए। जिनके मा बाप बिना घर-धन्धा सिखाए अपनी लड़की दूसरों को दे देते हैं। उन्हें भी इस गलती के प्रायश्चित्त में खूब गालियाँ सुननी पड़ती हैं। चौका-बरतन, लीपना-पोतना, झाड़ना बुहारना, कूटना-पीसना, माँजना-साफ करना, भोजन बनाना, सीना-पिरोना, चीज वस्तुओं को सँभालना, घर की उत्तम व्यवस्था रखना आदि गृहकार्यों में स्त्री को कुशल होना चाहिए। किसी काम का आना और उसमें कुशल होना, दोनों बातें अलग अलग हैं "कुशल" शब्द दक्षता, चातुर्य, योग्यता, कार्यपटुता, औचित्य आदि का सूचक है। अर्थात् स्त्री को उचित है कि वह कार्यदक्ष हो। मानलो कि भोजन बनाना आता है। परन्तु जो अच्छा भोजन बनावेगी वह अच्छी कही जायगी। और जो रोटी को आड़ी-टेढ़ी बना कच्ची-पक्की सेंककर या खूब जलाकर रखदे, वह स्त्री फूहड़, मूर्खा, कही जायगी। इसलिए स्त्री को चाहिए कि वह घर के प्रत्येक कार्य में दक्ष हो। प्रत्येक खाद्य पदार्थ के गुण अवगुण को समझने वाली हो। घर में होने वाले छोटे-मोटे रोगों की घरेलू दवाइयाँ भी जानती हो। जिस कार्य को हाथ में लिया, उसे ही अच्छा करके दिखाने वाली हो। बल्कि यदि किसी दूसरे के हाथ से कोई काम बिगड़ जाय, तो उसे

सुधार देने वाली हो। इस प्रकार जो कार्य-पटु स्त्रियाँ होती हैं, उनका घर में बड़ा आदर सम्मान होता है। लोग उनकी इज्जत करते हैं, और वे घर की सम्राज्ञी बन जाती हैं।

स्त्रियों का धर्म "सेवा" है। ईश्वर ने जितने भी प्राणी उसे घर में दिये हैं, उनकी सेवा, रात दिन सच्चे मन से करनी चाहिए। आजकल की स्त्रियों ने "सेवा" को बुरा समझ रक्खा है। परन्तु "सेवा" धर्म इतना उत्तम कार्य है कि उसकी जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। स्त्रियों का धर्म पतिसेवा तो है ही; किन्तु साथ ही गृहसेवा, कुटुम्बसेवा, मनुष्य-सेवा, जातिसेवा और देश-सेवा भी उनका प्रथम कर्त्तव्य है। मैं कह सकता हूं कि जितनी सेवा स्त्रियों के द्वारा हो सकती है, उतनी पुरुषों द्वारा नहीं। स्त्रियों को उचित है कि अपनी सेवा द्वारा घर के सब लोगों को अपने अधीन रक्खें। घर-धन्धे से निपटने के बाद अपना समय समाज-सेवा और जाति-सेवा में भी लगाना चाहिए। आजकल की परदा-प्रथा ने स्त्रियों के सेवा कार्य का क्षेत्र संकुचित कर दिया है। घर के लोगों से लुक-छिप कर, कहीं एकान्त में मौका पाकर उन्हें पति से बोलना पड़ता है। इतने में ही अगर कोई मनुष्य आ निकला, तो मानो गज़ब हो गया। यह पर्दा की बड़ी जड़मत् खड़ी रह गई। जेठ से बोल सकती नहीं, ससुर से बोलती नहीं, फिर उनकी सेवा कैसी? रोटी माँगी तो परोस दी और पानी माँगा तो ला दिया, इसे सेवा नहीं कहते! तुम्हारे जेठजी तुम्हारे ससुर के समान हैं और ससुर जी तुम्हें बेटी की तरह मानते हैं, फिर समझ में नहीं आता कि उनसे परदा क्यों किया जाता है। जबतक किसी के चरित्र पर सन्देह न हो, तबतक उनसे अपने शरीर को व्यर्थ ही छुपाना कहाँ की बुद्धिमत्ता है। जिसे तुम धर्म पालना कहती हो, वह तो तुम्हारी मूर्खता है; या यों कहिए कि तुम अपने घर के लोगों का एक प्रकार से अपमान करती हो। मैं पूछता हूं कि जब, पानी वाले में,

रसोई बनाने वाले से, खोमचे वाले से, चूड़ी वाले से, गोटा बेचने वाले से; कोचवान से, गाड़ीवान से, पुजारीजी से, धोबी से, मेहतर से, कुम्हार से, सोनार से, लोहार से सारांश कि इसी प्रकार के दूसरे लोगों से तुम्हें परदा करना आवश्यकीय नहीं मालूम होता, जो कि होना चाहिए तो फिर तुम घर के लोगों से परदे का ढोंग क्यों रचती हो? वेद इस प्रकार के झूठे परदे को पसन्द नहीं करता। उसे हृदय के द्वारा उत्पन्न सच्चे परदे की इच्छा है घूँघट निकालने वाली या एड़ी से चोटी तक सफ़ेद चादर में लिपट कर चलने वाली सभी स्त्रियाँ शर्मदार, सच्चरित्रा, सती साध्वी, होती हों, सो भी नहीं माना जा सकता। या यों कह दिया जाय कि जो स्त्रियाँ मुँह खुला रखकर रहती हैं वे सब बेशर्म, चरित्रहीना और व्यभिचारिणी होती हैं, तो यह भी अनुचित है। तात्पर्य यह है कि चरित्ररक्षा और शर्म परदे पर अवलम्बित नहीं है; बल्कि यह मन पर निर्भर है। इस लिए बहनो! सच्चा परदा करना सीखो कपड़ों के परदे से शर्म नहीं रक्खी जा सकती। प्राचीन समय में स्त्रियाँ परदा नहीं रखती थीं। वे अपने सास-ससुरों से देवर-जेठों से, घर के बड़े बूढ़ों से बोलती चालती थीं और बिना घूँघट उनके आगे जाती थीं। जिन्होंने रामायण पढ़ी है, वे अच्छी तरह जानती हैं कि श्री सीता देवी ने अपने पति के साथ वन जाने के लिए अपने ससुर महाराजा दशरथजी से स्वयं अनुरोध किया था। अपने ससुर के सामने ही श्रीरामचन्द्रजी से सीतादेवी ने उनके वन चलने का आग्रह किया था। राजा दशरथ ने कहा था—

मृगीयोत्फुल्लनयना मृदुशीला मनस्विनी।
अपकारं कमिव ते करोति जनकात्मजा॥

अधमें कैकेयी! हरिणी के समान सुन्दर नेत्र वाली, जानकी ने तेरा क्या बिगाड़ा है? इसे मुनि-वस्त्र क्यों पहनाती है? इत्यादि। इस श्लोक में "हरिणी के समान नेत्र वाली" इस वाक्य से स्पष्ट सिद्ध होता है कि

सीतादेवी अपने ससुर के सामने खुले मुँह जाती थीं—उस समय परदा नहीं था। प्राचीन इतिहासों से ऐसे कई उदाहरण दिये जा सकते हैं। स्थानाभाव से हम उन्हें यहाँ लिखना उचित नहीं समझते। वेद कहता है—

> सुमंगली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शंभूः।
> स्योना श्वश्र्वै प्रगृहान् विशेमान्।
>
> अथर्व० १२। २। २६

"हे स्त्री! उत्तम मंगल करने वाली, घर की वृद्धि करने वाली पति की सेवा करने वाली, ससुर के लिए शांति देने वाली और सास के लिए आनन्द देने वाली, इन घरों में प्रविष्ट हो।"

> स्योना भव श्वशुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः।
> स्योनाऽस्यै सर्वस्यै विशे स्योना पुष्टायैषां भव॥
>
> अथर्व० १४। २। २७॥

"ससुरों के लिए, पति के लिए, घर के मनुष्यों के लिए, इन सभों के लिए सुखदायिनी हो तथा इनकी पुष्टि करने वाली हो।" इन मन्त्रों से परदा की प्रथा होना सिद्ध नहीं होता। स्त्री जिस प्रकार पिता-गृह से आये, उसी आज़ादी से पति के घर आकर रहे। यहाँ जिस प्रकार पिता के आगे मुँह खोले लज्जा पूर्वक रहती थी, उसी तरह ससुर के सामने भी रहना चाहिए। क्योंकि ससुर धर्म-पिता होता है। यह वेद का एक मंत्र और देखिए—

> सुमङ्गलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत।
> सौभाग्यमस्यै दत्वा दौर्भाग्यैर्विपरेतन॥

यह वधू मंगल करने वाली है, मिल कर इसे देखो। इसे सौभाग्य देकर दुर्भाग्य से बचाओ। इस मन्त्र में "मिल कर देखो।" यह वाक्य परदा का विरोधी है। अगर परदा ही क़ायमी होता, तो "मिल कर देखो।"

यह वाक्य न आता। इत्यादि वचनों से सिद्ध होता है कि हमारे देश में परदे की प्रथा प्राचीन नहीं अर्वाचीन है। यह यवनों के राज्य से चली हुई बताई जाती है। विलासी एवं व्यभिचारी यवन बादशाहों से अपनी इज्जत बचाने के लिए भारतवासियों ने परदे को अपनाया था। परन्तु अब इस घातकी प्रथा की आवश्यकता नहीं है। मैं आशा करता हूं कि झूठे परदे का त्याग कर हमारी भारतीय ललनाएँ अपने ससुर, जेठ आदि पूज्य जनों की सेवा सच्चे मन से करेंगी।

(४) "घर के उत्तम नियमों का पालन करने वाली बनो।" स्त्रियों का कर्त्तव्य है कि गृहकार्य सम्बन्धी उत्तम नियमों का पालन करें—बुरों का नहीं। गृहस्थ मनुष्य के पालने योग्य जो अच्छे अच्छे नियम हैं, उनका पालन करना चाहिए। गृहस्थी के कर्मों को मनुजी ने अच्छी तरह समझाया है। जिन्हें विस्तार पूर्वक देखना हो, वे वहाँ देख लें।

> वैवाहिकेऽग्नौ कुर्वीत गृह्यं कर्म यथाविधि।
> पञ्चयज्ञ विधानं च पक्तिं चान्वाहिकीं गृही॥

पंचयज्ञ अर्थात् वेद का पढ़ना पढ़ाना, बड़े बूढ़ों की सेवा, हवन, बलिवैश्वदेव और अतिथि-सत्कार प्रत्येक घर में होने चाहिएं। इनके अतिरिक्त, सत्य भाषण, ईश्वर चिंतन, दया, अहिंसा, क्षमा, धैर्य, इन्द्रिय-संयम, पवित्रता, विद्या आदि गुणों को अपनाना चाहिए। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि शत्रुओं को शरीर से निकाल देना चाहिए, ताकि घर के उत्तम नियमों में ये बाधक न हों। आजकल घरों में उत्तम नियमों का पालन न होने के कारण लोग गृहस्थाश्रम को कीचड़खाना, काठ, माया जाल, गोरख धन्धा आदि नामों से सम्बोधन करने लगे हैं परन्तु हमारे शास्त्रों ने गृहस्थाश्रम की प्रशंसा इन शब्दों में की है—

यथा वायुं समाश्रित्य वर्त्तन्ते सर्वे जन्तवः।
तथा गृहस्थ माश्रित्य वर्त्तन्ते सर्वे आश्रमाः॥
यस्मात् त्रयोऽप्याश्रमिणो ज्ञानेनान्नेनचान्वहम्।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्जेष्ठाश्रमो गृही॥

"जैसे हवा के आश्रित सब प्राणी जीते हैं, वैसे ही सब आश्रम गृहस्थाश्रम के बल पर निर्वाह करते हैं। तीनों आश्रम गृहस्थों के द्वारा विद्या और अन्न से प्रतिपालित होते हैं, इसलिए गृहस्थाश्रम सबसे बड़ा है।" जो लोग गृहस्थाश्रम के विषय में उक्त ऋषि वचनों से कुछ पाठ सीखना चाहिए घर के उत्तम पालन करने योग्य नियमों का पालन करने ही से गृहस्थ आनन्दमय बन सकता है। जो बुरे नियमों का पालन करते हैं उनका आनन्द फीका पड़ जाता है।

घर के उत्तम नियमों में, कुलमर्यादा भी सम्मिलित है। अर्थात् कुल-मर्यादा नष्ट न हो, इस बात का ध्यान ज़रूर रखना चाहिए। अपने द्वारा ऐसा कोई काम नहीं होने देना चाहिए, जिससे कुल को कलंक लगे। जो तथ्यहीन और मूर्खतापूर्ण, हानिकारक तथा वेदविरुद्ध प्रथाएँ घर में चालू हों, उन्हें हटाना चाहिए। कई लोग रीति-रिवाज और प्रथाओं को ही कुलमर्यादा कहते हैं। यदि ऐसी कुल मर्यादाएँ मूर्खतापूर्ण और हानि-कारक हों तो वे अवश्य हटानी चाहिएं, और उनके स्थान में कुल को उन्नत बनाने वाले नियम तय्यार करने चाहिएं। ये सब बातें स्त्रियों के हाथ में होनी चाहिएं। स्त्रियों को चाहिए कि वे घर के उत्तम नियमों का पालन करें। घर में उत्तम नियमों को स्थापित करें। स्वयं अच्छे नियमों का पालन करें और घर के लोगों से करावें।

(५) वीर संतान उत्पन्न करने वाली बनो। वेद आज्ञा देता है कि यदि संतान उत्पन्न करनी हो, तो वीर पैदा करो, अन्यथा मत करो। "वीर" शब्द का अर्थ बल से ही सम्बन्ध नहीं रखता, बल्कि धर्म-

वीर, कर्मवीर, विद्यावीर आदि भी होता है। चूहे, बिल्ली, पैदा करना बहुत ही बुरा है। तेजस्वी, वर्चस्वी, बलवान्, बुद्धिमान्, दीर्घायु और होनहार बच्चों की आवश्यकता है। दुर्बल, कृश, रोगी, अल्पायु, पृथ्वी के भाररूप बच्चों से देश अधोगति को पहुंचता है। दीन, हीन, असहाय, मूर्ख और भिखमंगों की इस समय देश में वृद्धि हो रही है। बहनो! इसका उत्तरदायित्व किस पर है? तुम्हीं पर; ब्रह्मचारी दम्पति से उत्तम सन्तान उत्पन्न होती है पुत्र ही वीर हों; सो नहीं; कन्याएँ भी वीर होनी चाहिएं। पहले समय में स्त्रियाँ भी वीर होती थीं। ताज़ा उदाहरण है कि झांसी की रानी लक्ष्मी बाई ने अंग्रेजों का मुकाबला किया था। किरण देवी ने अकबर का गला दबाकर—"नौरोजा" का मेला बन्द कराया था। मेवाड़ के महाराणा समरसिंह की रानी कर्मा ने दिल्ली के बादशाह कुतुबुद्दीन को युद्ध में मार भगाया था। चित्तौड़ की रानी पद्मिनी ने अलाउद्दीन के दाँत खट्टे कर दिये थे। इन सब उदाहरणों से सिद्ध होता है कि सन्तान वीर होनी चाहिए; वह पुत्र हो या पुत्री! बहनो! गर्भस्थिति के समय में पालने योग्य नियमों को यदि गर्भवती स्त्री पालन करेगी, तो वह अवश्य निस्सन्देह अपनी इच्छानुसार बालक उत्पन्न कर सकेगी।*

(६) "देवरों को प्रसन्न रखने वाली, तथा उत्तम मन-वाली बनो।" स्त्री को चाहिए कि अपने पति के छोटे भाई को अर्थात् अपने देवर को प्रसन्न रक्खे। स्त्री के लिए उसका देवर उसके छोटे भाई के तुल्य होता है। शास्त्रों में देवर भौजाई का कितना अच्छा सम्बन्ध होता था, यह बात नीचे के श्लोक से स्पष्ट हो जाती है—

रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम्।
अयोध्यामटवीं विद्धि गच्छ तात यथासुखम्॥ (वाल्मीकि)

* इस विषय में हमारा लिखी हुई "सन्तान शास्त्र" नामक पुस्तक "चाँद" कार्यालय प्रयाग से मँगा कर देखो। (लेखक)

श्रीरामचन्द्रजी के साथ, अपने पुत्र को वन जाने की आज्ञा देती हुई देवी सुमित्रा ने वीर लक्ष्मण से कहा था "बेटा ! अपने बड़े भाई रामजी को दशरथ के समान समझना और अपनी भौजाई जानकी को माता समझना।" इस उपदेश का फल क्या हुआ ? सो इस श्लोक में स्पष्ट होता है।

> नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले।
> नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात् ॥
> (वाल्मीकि)

सीतादेवी को ढूंढते हुए जब राम लक्ष्मण 'ऋष्यमूक' पर्वत पर पहुँचे और सुग्रीव ने सीताजी के त्यागे हुए ज़ेवर श्री रामचन्द्र जी को दिये; उस वक्त श्री राम ने लक्ष्मण से पूछा कि—"देख, पहचान ! क्या ये आभूषण तेरी भौजाई के हैं" ? उत्तर में लक्ष्मण ने उपर्युक्त वचन कहे। "भाई। मैंने कभी सीतादेवी को ऊँची दृष्टि से नहीं देखा था, इसलिए केयूर, कुण्डल और हार इत्यादि नहीं पहचान सकता। हाँ नूपुर पहचानता हूं; क्योंकि नित्य प्रणाम करते वक्त मैं इन्हें देखा करता था। ये जानकीजी के ही हैं'। बहनो ! देवर-भौजाई के उच्च व्यवहार को ध्यान से पढ़ो। तुम भी अपने देवर की ऐसी ही भौजाई बनो ! वेद की यही आज्ञा है।

स्त्रियों को हमेशा उत्तम मन वाली बनना चाहिए। अपवित्रमना, तथा संकीर्णमना न बनाना चाहिए। उदार हृदय की प्रशंसा होती है और संकीर्ण हृदय की निन्दा। प्राणिमात्र के लिए अपना मन उत्तम बनाओ। शत्रुओं के लिए भी मन में उत्तमता धारण करो। उत्तम और पवित्र मन बलवान् होता है। यदि मन को तुमने उत्तम बना लिया, तो समझलो कि सब इन्द्रियों पर प्रभुत्व स्थापित कर लिया। वेद कहता है।

तन्मे मनः शिव सङ्कल्पमस्तु।

अर्थात्—"हमारा मन उत्तम विचार वाले वाला हो"। उत्तम विचारों से

उन्नति होती है और बुरे विचारों से पतन। मन की शक्ति, एक महान् शक्ति है। यह उत्तम विचारों से बढ़ती है, और अधम विचारों से कम होती है। स्त्रियों को अपना मनोबल खूब बढ़ाना चाहिए। मनोबल युक्त स्त्रियों द्वारा जो प्रजा उत्पन्न होगी, वह साहसी, उद्यमी, उत्साही, धैर्यवान्, वीर, पराक्रमी और बुद्धिमान् होगी। इसलिए वेद कहता है कि स्त्रियों को उत्तम मन वाली बनना चाहिए।

---

(१८) ईश्वरोपासना।

ओ३म् आरोह चर्मोप सीदाग्निमेष देवो हन्ति रक्षांसि सर्वा।
इह प्रजां जनय पत्ये अस्मै सुज्येष्ठ्यो भवत् पुत्रस्त एष॥

अथर्व १४।२।२४॥

(चर्म आरोह) चर्म के आसन पर बैठ (अग्निं उपसीद) अग्नि की उपासना कर (एष देवो) यह देव (सर्वा रक्षांसि) सब दुष्टों को (हन्ति) नाश करता है। (इह प्रजां जनय) यहाँ सन्तान उत्पन्न कर (अस्मै पत्ये) इस पति के लिए (ते एष पुत्र) तेरा यह पुत्र (सुज्येष्ठः भवत्) बड़ा हो।

(१) चर्म के आसन पर बैठकर अग्नि की उपासना कर।
यह वैदिक उपदेश अत्यंत विचारने योग्य है। यहाँ स्त्रियों को चमड़े के आसन पर बैठकर अग्नि की पूजा करने की आज्ञा है। स्त्रियों का कर्त्तव्य है कि प्रातःसायं मृग चर्म पर बैठकर अग्निहोत्र करें, सन्ध्योपासना करें। जिन पुस्तकों में स्त्रियों को शूद्र कह कर उन्हें वेद के पढ़ने का निषेध किया है वे इस आज्ञा से वेदविरुद्ध झूठे कहे जासकते हैं। जिस प्रकार पुरुषों के लिए संध्या अग्निहोत्रादि नित्यकर्म कहे हैं, उसी तरह स्त्रियों के लिये भी अग्निहोत्रादि मुख्य कर्म बताये गये हैं। इसी पुस्तक में हम

कहीं पीछे इस विषय का प्रमाण दे आये हैं कि, स्त्रियाँ संध्योपासना और अग्निहोत्रादि नित्य करती थीं। वेद में कई जगह ऐसे मंत्र आये हैं, जिन में स्त्रियों को नित्य अग्निहोत्रादि कर्म करने की आज्ञा है।

जिस प्रकार पुरुषवर्ग मृग चर्म पर अथवा व्याघ्र चर्म पर बैठकर ईश्वरोपासना करने का अधिकारी है, उसी प्रकार स्त्री के लिए भी आज्ञा है। मृग चर्म पर बैठने से ध्यान की एकाग्रता में सहायता मिलती है, और बवासीर-अर्श-आदि रोग नहीं होने पाते। काले मृग का चमड़ा विशेष अच्छा होता है। धर्मनिष्ठ स्त्रियों को चाहिए कि नित्य नियम पूर्वक मृग चर्म पर बैठकर सन्ध्योपासना, अग्निहोत्रादि यज्ञों को अवश्य किया करें। यदि हमारी बहनें नित्य ईश्वरोपासना में अपना थोड़ा सा भी समय लगा दिया करें तो शीघ्र ही भारत की बिगड़ी हुई प्रजा सुधर जाय। ऐसी धर्मनिष्ठ स्त्रियों की कोख से पैदा हुई सन्तान अवश्य धार्मिक होगी। इस प्रकार एक दिन देश के दुर्गुण दूर हो जायँगे; और उनके स्थान पर सद्गुण बढ़ते जायँगे।

"अग्नि" शब्द का अर्थ "ईश्वर" भी है। अतएव यह अर्थ भी हो सकता है कि मृग छाला पर बैठकर ईश्वर का भजन करना चाहिए। ईश्वर चिंतन से उस सृष्टि-नियन्ता का ज्ञान होता है, मन, आत्मा और बुद्धि पवित्र होकर उन्नत होते हैं। ईश्वरभक्त व्यक्ति के द्वारा पाप नहीं होते। क्षुद्राशय व्यक्ति महाशय बन जाता है। क्षुद्रात्मा मनुष्य महात्मा बन जाता है। इस तरह आत्मिक उन्नति के लिए वेद, स्त्रियों को आज्ञा देता है कि "स्त्रियो! तुम्हें नित्य मृग चर्म पर बैठ कर संध्योपासना, अग्निहोत्रादि आत्मोन्नति के कार्य करने चाहिएं।"

(२) "यह देव सब दुष्ट भावों को नष्ट करता है।"

वेद का यह वाक्य ध्यान में रखने योग्य है। अर्थात् परमात्मा दुष्ट भावों का विनाशक है। जो उसके शरणागत हैं, वे दुष्ट भावों से बचे

रहते हैं। वेद में स्थान स्थान पर दुष्ट भावों से बचने पर बहुत कुछ लिखा गया है। इससे स्पष्ट होता है कि दुष्ट भाव मनुष्य के लिए घातक हैं। गायत्री मंत्र में भी दुष्ट भावों से दूर रहने की आज्ञा है।

"......तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि
धियो यो नः प्रचोदयात्"

इससे तथा

"तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु।"

और:—

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव॥

इत्यादि वेद मंत्रों से सिद्ध होता है कि मनुष्य के मन की पवित्रता अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य को चाहिए कि बुरे विचारों को स्थान न दे परमात्मदेव की उपासना से मन पवित्र होता है। यही बात उक्त मन्त्र में कही गई है।

अग्निहोत्र से दुष्टता का नाश और पवित्रता का विकास होता है। अग्निहोत्र की महिमा से वेद भरा हुआ है। इस विषय पर यदि प्रकाश डाला जाय तो एक पुस्तक अलग बन सकती है। अग्निहोत्र के द्वारा, मन पवित्र होता है। विचारों में पवित्रता आती है। वैदिक ३३ देवताओं की तृप्ति होती है। अच्छी वर्षा होती है। रोगों का नाश होता है। घर में रहने वाले बीमारी के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। घर बाहर सब सुगन्धित रहता है। शरीर स्वस्थ रहता है, इत्यादि। यदि यह कह दिया जाय कि अग्निहोत्र के अभाव से देश आज दुर्भिक्ष, तथा रोगों का अखाड़ा बन रहा है तो अत्युक्ति नहीं होगी। दुर्भिक्ष तथा रोगों की वृद्धि के और भी कई कारण हैं, किन्तु यह एक मुख्य कारण है। जिस

समय देश में अग्निहोत्र के प्रेमी मौजूद थे, उस समय भारत सब सुखों का भण्डार बना हुआ था। जिस युग में पति-पत्नी मिल कर सायं-प्रातः दोनों समय अग्निहोत्र किया करते थे, वह हमारा उन्नत युग था। जब से इस पवित्र क्रिया का हमारे देश से लोप हुआ, तभी से हम इस प्रकार अवनत हुए कि अब हमें अपना उद्धार करना कठिन हो गया है! बहनो! वेद की उपरोक्त आज्ञा को मान कर एक बार फिर लोगों को प्राचीन भारत की झलक दिखादो। जब तुम अग्निहोत्र करोगी तो तुम्हारे पतिदेव भी अवश्य करेंगे ही। इस प्रकार देश उन्नति की ओर बढ़ेगा।

(३) "यहां सन्तान उत्पन्न कर। तेरा पुत्र पति के लिए बड़ा हो।" इस श्रुति वचन में "सन्तान उत्पन्न कर!" यह आज्ञार्थक वाक्य है। स्त्रियों का कर्त्तव्य है कि वे संतान उत्पन्न करें। "प्रजनार्थं स्त्रियः सृष्टाः।" इस से भी यही ध्वनि निकलती है। विवाह संस्कार केवल संतान उत्पन्न करने के लिए है—विषयभोग के लिए नहीं। मूर्ख स्त्री-पुरुषों ने आज इसके पवित्र उद्देश्य को अपवित्र बना रक्खा है। नारकी कीड़ों की तरह अपना जीवन बिताने में ही अपने को धन्य मान लिया है। पितृऋण से उऋण होने के लिए ही स्त्री पुरुषों का जोड़ा नियुक्त किया जाता है। परन्तु दुःख की बात है कि लोगों ने विवाह के मुख्य उद्देश्य को भुला दिया है। स्त्रियों को चाहिए कि विवाह के पश्चात् संतान पैदा करें। संतान वाली स्त्री ही आदरणीय है। बाँझ स्त्रियों का जीवन व्यर्थ है। स्त्रियों का कर्त्तव्य है कि अपने गर्भाशय की अच्छी तरह रक्षा करें। ऐसे कामों से, खान पान तथा आचरणों से, दूर रहें जिनसे गर्भाशय को हानि होने की संभावना हो। स्त्रियों को गर्भाशय-विषयक छोटे मोटे दोषों को मिटाने के उपाय भी सीख लेने चाहिए। इस विषय का साधारण ज्ञान होना आवश्यक है। वेद कहता है:—

यद्वेद राजा वरुणो यद्वा देवी सरस्वती ।
यदिन्द्रो वृत्रहा वेद तद्गर्भकरणं पिब ॥ अथर्व० ।

जिस दवा को वरुण तुल्य पति जानता है, जिसे चतुर पत्नी जानती है, जिसे वैद्यराज जानता है, हे स्त्री ! उस गर्भप्रद औषध का सेवन कर । इससे स्पष्ट हो जाता है कि गर्भजनक औषधों का ज्ञान प्रत्येक स्त्री को अवश्य होना चाहिए। वेद में भी गर्भप्रद औषधियों का वर्णन है । नमूने के लिए एक मंत्र लिखते हैं:—

अराय मसृक्क पावानं यश्च स्फातिं जिहीर्षति ।
गर्भादं कण्वं नाशय पृश्निपर्णी सहस्व च ॥
अथर्व० २ । २५ । ३ ॥

अर्थ—"हे पृश्निपर्णी ! तू न देने वाले खून को पीने वाले, उन्नति को रोकने वाले गर्भ को खाने या ग्रहण करने वाले रोगों को दूर कर और सहन कर ।" वेद मंत्र कहता है कि जो रोग गर्भ के घातक हैं, उन्हें पृश्निपर्णी नष्ट करती है। यदि स्त्रियों को लगातार पृश्निपर्णी सेवन कराने से उसका वन्ध्या दोष हट जाता है। और यदि गर्भ-स्राव या गर्भपात का भय हो तो भी पृष्णपर्णी पानी में पीस कर थोड़ी थोड़ी देर में पिलाते रहिए तथा पानी में पीस कर पेट पर भी लेप कर दीजिए। सारांश यह कि गर्भाशय सम्बन्धी प्रत्येक विकार पर पृष्णपर्णी लाभप्रद है। वेद में गर्भरक्षक कई जड़ी-बूटियों का वर्णन है । विषयान्तर हो जाने से इससे अधिक यहाँ लिखना हम उचित नहीं समझते ।

विवाह-संस्कार केवल सुसन्तान उत्पन्न करने के लिए ही होता है । जिन स्त्रियों को अपने पति की प्यारी बनना हो, वे सदैव उत्तम सन्तान पैदा करें । जिन स्त्रियों के गर्भाशय में किसी प्रकार का दोष हो, उनके पतियों को मनु महाराज निम्न आज्ञा देते हैं:—

वन्ध्याष्टमेऽधिवेद्याब्दे दशमे तु मृतप्रजा।
एकादशे स्त्री जननी सद्यस्त्वप्रियवादिनी॥

स्त्री बाँझ हो तो आठ वर्ष बाद, बच्चे पैदा होकर मर जाते हों तो १० वर्ष बाद, कन्या ही कन्या उत्पन्न होती हों तो ग्यारहवें वर्ष और यदि अप्रियवादिनी हो तो तत्काल ही पुरुष दूसरी स्त्री से विवाह कर ले। यह मनु वचन स्त्रियों को नहीं भुला देना चाहिए। पिता के घर अथवा पति के घर स्त्री को कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए जिससे गर्भाशय में दूषण हो जाय। सन्तान काल में स्त्रियों को कुसंगति से बहुत बचना चाहिए। यदि तुम संतान पैदा करने में अयोग्य सिद्ध हुई, तो तुम्हें तुम्हारा पति मनुस्मृति के उक्त आधार से त्याग सकता है। इस लिए वेद कहता है कि यदि पति के साथ सुखपूर्वक-आनन्दमय जीवन व्यतीत करना है तो "संतान उत्पन्न कर। और संतान भी दीर्घजीवी हो।" पैदा होकर मर जाने वाली संतान से क्या लाभ? इससे तो न होना ही अच्छा, आज भारतवर्ष इस अधोगति को पहुंच गया है कि, छोटे छोटे बच्चे प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में गड्ढों के अन्दर दबा दिये जाते हैं। भारतवर्ष के अतिरिक्त दूसरे देशों में बच्चों की मृत्यु-संख्या इतनी बढ़ी चढ़ी कहीं भी नहीं है।

वर्तमान युग में एक नई बात स्त्रियों में देखी जाती है कि वे संतान पैदा करना अच्छा नहीं समझतीं। यद्यपि इस वेदविरुद्ध प्रथा का भारत में अधिक जोर नहीं है तथापि यह पाश्चात्य हवा यहाँ की कुछ पढ़ी लिखी स्त्रियों को भी लग गई। उनका ऐसा सिद्धान्त है कि सन्तानोत्पत्ति से हमारा सौन्दर्य और आयु घटती है। नहीं कह सकते कि उनका ऐसा सोचना कहाँ तक ठीक है! परन्तु इतना अवश्य कहेंगे कि वेद उस स्त्री को घृणा की दृष्टि से देखता है, जिस के बाल बच्चे पैदा न होते हों। अत्यन्त विषय-भोग से सौन्दर्य, लावण्य, स्वास्थ्य और आयु का नाश

ोता है, न कि सन्तान पैदा करने से। वेद अधिक बच्चे पैदा करने की
ाज्ञा नहीं देता! अधिक से अधिक दस बालक पैदा करने का विधान
। इसके लिए अधिक से अधिक ३० वर्ष काफी होते हैं। सोलह वर्ष
ी कन्या का यदि विवाह किया जाय, तो ४६ वर्ष की अवस्था तक
ासके ३० बाल/बच्चे हो सकेंगे। बस, इससे अधिक काल तक गृहस्थ
ं रह कर जीवन बरबाद करने को वेद "पशु-जीवन" कहता है।
ारांश यह कि स्त्रियों को दीर्घजीवी सन्तान पैदा करनी चाहिए। जो
ोग्य होने पर अपने पिता का सहायक बने और वृद्धावस्था में माता
िता की भली प्रकार सेवा करे।

---

(१९) संतानोत्पादन।

ॐ आरोह तल्पं सुमनस्यमानेह प्रजां जनय पत्ये अस्मै।
न्द्राणीव सुबुधा बुध्यमाना ज्योतिरग्रा उषसः प्रतिजागरासि॥

अथर्व० १४। २। ३१

(सुमनस्यमाना) प्रसन्नता पूर्वक (तल्पं आरोह) पलंग पर चढ़ और
(इह) यहां (अस्मै पत्ये) इस पति के लिए (प्रजां जनय) सन्तान
उत्पन्न कर (इन्द्राणी इव) इन्द्र की पत्नी इन्द्राणी की तरह (सुबुधा
बुध्यमाना) ज्ञान से युक्त होकर (ज्योतिरग्रा उषसः) ज्योति देने वाले
उषःकाल में (प्रतिजागरासि) जागती रह।

इस मंत्र में कहा गया है कि (१) "शय्या पर प्रसन्नता पूर्वक चढ़
और पति के लिए सन्तान उत्पन्न कर"। (२) "ज्ञान से युक्त होकर
सूर्योदय के पूर्व शय्या त्याग दे"। इस मंत्र में शय्या से सम्बन्ध रखने
वाला विषय है। स्त्री को चाहिए कि प्रसन्नता पूर्वक ही शय्या पर चढ़े।
अप्रसन्नता से कभी पति की शय्या पर न जाय। अनिच्छा पूर्वक किये

गये पति समागम से सुसन्तान उत्पन्न नहीं हो सकती। इसीलिए वेद, प्रसन्नता पूर्वक शय्या पर चढ़ने की आज्ञा देता है। बलात्कार की आवश्यकता नहीं है। स्त्रियों को चाहिए कि अनिच्छा रहते पति की शय्या पर न जायँ। अनिच्छा होने पर यदि गर्भ रहा तो, उस गर्भ से उत्तम संतान कदापि नहीं हो सकती। इसलिए प्रसन्न मन होने पर ही पतिगमन करना चाहिए।

स्त्रियों को चाहिए कि वे सूर्योदय से पूर्व उषःकाल में उठा करें। अपने पति के जागने से पूर्व पत्नी को शय्या त्याग देनी चाहिए। स्त्रियों को नींद पुरुषों से अधिक होती है। परन्तु जो स्त्रियाँ सचेत, और सावधान रहती हैं; उनकी नींद गहरी नहीं होती। अभ्यास करने पर आदत पड़ जाती है। जल्दी उठने के लिए जल्दी ही सोना पड़ेगा। एक अंग्रेजी कहावत है कि Early to bed and early rise, makes the man healthy wealthy and wise." जो व्यक्ति जल्दी सोता है और जल्दी उठता है वह बलवान्, बुद्धिमान्, और धनवान् बन जाता है। सूर्योदय के पूर्व का समय, ब्राह्म मुहूर्त, अमृतवेला, देवकाल, उषःकाल आदि नाम से भी पुकारा जाता है। मनुस्मृति में लिखा है कि—

"ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिंतयेत्"

ब्राह्म समय में उठकर मनुष्यों को ईश्वर-स्मरण करना चाहिए। जो स्त्री सूर्योदय से पूर्व उठती है, वह कान्तिमान्, स्वस्थ और दीर्घायु होती है। सूर्योदय के बाद उठने वाले मनुष्य के शरीर में कफ की वृद्धि होकर स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। जो लोग सूर्योदय के बाद शय्या त्यागते हैं, वे आलसी, सुस्त और मन्दबुद्धि हो जाते हैं और जो सूर्य निकलने के पहले जागकर काम धन्धे में लग जाते हैं वे फुर्तीले, तेजस्वी और कुशाग्रबुद्धि बन जाते हैं। अथर्ववेद में एक मंत्र आया है—

यावन्तो मा सपत्नाना मायन्तं प्रतिपश्यथ ।
उद्यन्सूर्य इव सुप्तानां द्विषतां वर्च आददे ॥
७ । १३ । २ ॥

मुझे जितने शत्रु देखते हैं, उनका मैं तेज इस प्रकार हरण करता हूं, जैसे उदय होता हुआ सूर्य सोते हुए लोगों का तेज नाश करता है, इस वेद मन्त्र से स्पष्ट हो जाता है कि सूर्योदय के बाद सोने वाले आलसियों का बल, तेज घट जाता है । बहनो ! सूरज निकलने से पहले उठा करो । क्योंकि तुम्हारे समय पर उठने से, घर के सभी बाल बच्चे समय पर उठेंगे । यदि बाल बच्चे न भी उठेंगे तो तुम प्रातःकाल के ब्राह्ममुहूर्त्त में उन्हें उठा कर उस समय का लाभ पहुंचा सकोगी । हमें आशा है कि जो बहनें सूर्योदय के पूर्व उठना बुरा समझती हैं वे अब उषःकाल में उठने की आदत डालेंगी ।

---

(२०) आनन्दित रहो

ओ३म् स्योनाद्योनेरधि बुध्यमानौ हसामुदौ महसा मोदमानौ ।
सुगू सुपुत्रौ सुगृहौ तराथो जीवा वुषसो विभातीः ॥
(अथर्व० १४ । २ । ४३)

(स्योनात् योने) सुखदायक घर में (अधिबुध्यमानौ) ज्ञान प्राप्त करते हुए (हसामुदौ) हास्य और आनन्द से (महसा मोदमानौ) प्रेम से परस्पर आनन्दित होकर (सुगू) उत्तम चालचलन वाले (सुपुत्रौ) उत्तम पुत्रों से युक्त होकर (सुगृहौ) उत्तम घर बनाकर (जीवौ) जीवन सफल करने योग्य होकर (विभातीः उषसः) तेजस्वी उषःकाल को (तराथः) पार करो ।

(१) आनन्दित और प्रसन्नता पूर्वक पति-पत्नी को प्रेम

से सुखदायक घर में निवास करना चाहिए। अर्थात् स्त्री-पुरुष को एक दूसरे से रुष्ट न रहना चाहिए। स्त्री को चाहिए कि वह सदा सर्वदा आनन्दित रहे। तुम्हारे आनन्दित रहने से घर में आनन्द का स्रोत बहा करेगा जिस घर में स्त्री-पुरुष में अनबन रहती है, वह शीघ्र ही विनाश को प्राप्त होता है। मनु भगवान् कहते हैं—

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धते तद्धि सर्वदा॥

"जहाँ स्त्रियाँ शोकातुर रहती हैं, वह कुल शीघ्र ही नाश हो जाता है, और जहाँ स्त्रियाँ प्रसन्न वदन रहती हैं, वह सदा वृद्धि पाता है।" यही बात उक्त वेद वचन में है। स्त्रियों को सदा हँस-मुख और प्रसन्न रहना चाहिए। मुँह फुला कर बैठना, बात-बात में नखरे दिखाना, अपने को बड़ा समझना, पति को तुच्छ दृष्टि से देखना, ओछा स्वभाव होना, कटुवादी होना इत्यादि बातें स्त्रियों के लिए अत्यन्त घातक हैं। स्त्री को सहनशील बन जाना चाहिए। यदि अकारण भी पति नाराज़ हो जावे तो पत्नी को चाहिये कि उसके नाराज मन को खुश करे। उस बात को हँसी में टाल दे। प्रेम से जिस पर विजय पाई जा सकती हो, उसके साथ कटु व्यवहार करना मूर्खता है। जो स्त्रियाँ अपने पति के साथ अपना बराबर का दावा रखती हैं, वे अपने पति के कटु वचन को सहने में असमर्थ होती हैं। परिणाम स्वरूप गृहस्थाश्रम दुःखमय हो जाता है और वह घर महाभारत की समर-भूमि बन जाता है। स्त्रियों को चाहिए कि वे अपने कार्य कलाप से अपने पति को अपना प्रेमी बनावें। जबरन् उस पर अपना अधिकार जमाने की कुचेष्टा से परिणाम अच्छा नहीं होता! पति तुम्हारा गुलाम नहीं है। वैदिक सभ्यता इसके विरुद्ध है। पाश्चात्य देशों में स्त्रियाँ अपने पति को हेय दृष्टि से देखती हैं और उन्हें वे अपना दास समझने लगी हैं, किन्तु

भारतीय संस्कृति इसको घृणा की दृष्टि से देखती है। यहाँ पतिसेवा ही स्त्री का जीवनोद्देश्य बताया है। कहा है:—

नास्ति स्त्रीणां पृथक् यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषितम्।
पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते॥

स्त्री के लिए पति ही स्वर्गप्रद है। यज्ञ व्रत उपवास उसका उद्धार नहीं कर सकते। अनसूया ने कहा है—

अमित दान भर्ता वैदेही—
अधम सो नारि जो सेवन तेही।
वृद्ध रोगवश, जड़ धनहीना—
अन्ध बधिर क्रोधी अतिदीना।
ऐसेहु पति कर किय अपमाना—
नारि पाव यम पुर दुख नाना।
एकै धर्म एक व्रत नेमा—
काय वचन मन पतिपद प्रेमा।

भारतीय स्त्रियों के लिए पति को अपना देव मान कर उससे व्यवहार करने की आज्ञा है। जो स्त्रियाँ अपने पति को देवता के समान समझती हैं, वे उनकी अत्यन्त प्यारी बन जाती हैं। जो स्त्रियाँ सच्चे मन से अपने पति को अपना सर्वस्व मान कर उनका आदर करती हैं, वे आनन्द से प्रसन्नता पूर्वक, हँसते-खेलते, अपने सुखदायक घर में निवास करती हैं।

(२) उत्तम चालचलन वाले उत्तम पुत्रों से युक्त होकर अच्छा घर बना कर रहो। अपनी संतान को सच्चरित्र अथवा दुश्चरित्र बनाना माता के हाथ है। सच्चरित्र माता पिता की सन्तान भी सच्चरित्र ही देखी जाती हैं। पिता से अधिक माता का प्रभाव बालक पर

होता है। क्योंकि नौ दस महीने बालक माता के उदर में रहता है, वहाँ वह अति सूक्ष्म शरीर से बड़ा शरीर पाता है। माता के भोजन में से भोजन और उसके साँस में से साँस लेकर वृद्धि पाता है। इतना पवित्र सम्बन्ध माता और सन्तान का होने पर भला माता का प्रभाव बच्चे पर क्यों न पड़ेगा? माता का सन्तान पर, चरित्र, गुण, स्वभाव, स्वास्थ्य, विचार आदि का प्रभाव अच्छी तरह पड़ता है। इस विषय पर हमें अधिक लिखने का यहाँ अधिकार नहीं है। केवल इतना ही लिख देना ठीक समझते हैं कि रंग, रूप, सौन्दर्य, वर्ण, स्वास्थ्य, बुद्धि, विचार, सब कुछ संतान को माता ही से प्राप्त होता है। गर्भाशय में जो कुछ भी बालक पर गुप्त रूप से माता का प्रभाव पड़ता है सो तो है ही; किन्तु फिर स्तनपान द्वारा भी उसका स्वभाव माता के अनुकूल ही बनता है। समझदार लोगों का कहना है कि **मानव जाति का सच्चा विश्वविद्यालय माता की गोद है।** यह कथन अक्षरशः सत्य है। उक्त वेद वचनों में अच्छी संतानों को पैदा करने की आज्ञा है। स्त्रियों को सोचना चाहिए कि उनका उत्तरदायित्व पुरुषों से कितना अधिक है? बालक सच्चरित्र—उत्तम चालचलन वाले हों, इसके लिए माता को भी अपना चरित्र अत्यंत पवित्र रखना चाहिए। व्यभिचारिणी स्त्री की सन्तान अवश्य व्यभिचारी होती है। क्रोधी माता का बालक भी क्रोधी ही होता है। चोर मा का बच्चा अवश्य चोरी करेगा। क्षुद्राशय जननी का लाल महाशय नहीं हो सकता। इनके लिए कई उदाहरण हैं; किंतु पुस्तक के कलेवर वृद्धि के भय से यहाँ नहीं लिखे जा सकते। यदि तुम ध्यानपूर्वक हमारे लिखने पर विचार करोगी तो तुम्हें प्रत्यक्ष रूप में कई जीते जागते उदाहरण मिल सकेंगे।

उत्तम संतान के साथ उत्तम घरों में रहो। रहने के मकान बहुत साफ सुथरे और हवादार हों; जिनमें सूर्य का प्रकाश भी आता हो।

स्त्रियों को वेद कहता है कि मकान को उत्तम रखने का काम तुम्हारा है; मर्दों का नहीं। अपने स्थान को लीप-पोत और झाड़-बुहार कर साफ रखो। गन्दा रखने से रोग पैदा होंगे। साफ-सुथरा मकान बनाने तथा सजावट रखने का सारा काम स्त्रियों को अपने हाथ में रखना चाहिए। जो वस्तु जिस जगह, जैसे, शोभा पा सकती हो उसे उसी जगह, उसी तरह रखने का नाम 'सजावट' है। और जो वस्तु जिस जगह नहीं होनी चाहिए, उसका उस स्थान पर होना ही 'गन्दगी' है। यह पवित्रता और अपवित्रता की व्याख्या स्त्रियों को समझ लेनी चाहिए।

स्त्रियों को यह याद रखना चाहिए कि मकान की गन्दगी का प्रभाव उनकी संतान पर पड़ता है। हवादार मकानों में रहना चाहिए। बन्द घरों में रहने वाली स्त्रियों के बालक अल्पायु, निर्बल और मूर्ख होते हैं। इसी प्रकार सूर्य प्रकाश से वंचित रहने वाली स्त्रियों के भी बच्चे अच्छे, स्वस्थ, दीर्घायु, तेजस्वी नहीं होते। अच्छे मकानों में रहने वाले स्त्री-पुरुषों की औलाद भी अच्छी होती है। आशा है हमारी बहनें, इस वैदिक उपदेश से अपनी गलतियाँ दूर कर देंगी।

इस मन्त्र का पिछला उपदेश, उषःकाल में उठने के लिए है। इस विषय पर हम विस्तार पूर्वक पिछले मन्त्र नं० १९ में लिख आये हैं। यहाँ "पिष्टपेषण" करना अनुचित है।

---

(२१) स्त्रियों के विचार।

ॐ अहं केतुरहं मूर्धाहमुग्रा विवाचनी।
ममेदनु क्रतुं पतिः सेहानाया उपाचरेत्॥
(ऋग्वेद १० । १५९ । २)

(अहंकेतुः) मैं ज्ञानवती हूँ (अहं मूर्धा) मैं घर की मुखिया हूँ (अहं उग्रा विवाचनी) मैं धैर्यशालिनी व्याख्यात्री हूँ। अतएव (सेहा-

नायाः) शत्रु का नाश करने वाली हूं (मम) मेरे (अनु) अनुकूल (पतिः) पति (उपाचरेत्) व्यवहार करे।

(१) **"मैं ज्ञानवती हूँ, घर की मुखिया हूँ, धैर्यवती हूँ, व्याख्यात्री हूँ, शत्रु का नाश करने वाली हूँ इसलिए मेरा पति मेरी इच्छानुसार व्यवहार करे।"** ऐसी इच्छा प्रत्येक स्त्री के मन में प्रायः रहा करती है। इच्छा दो प्रकार की होती है। (१) उचित और (२) अनुचित। यदि स्त्री मूर्ख है, गुणहीन है और बुरे स्वभाव की है तो उसकी ऐसी इच्छा होना अनुचित कहा जायगा। जैसे लँगड़ा व्यक्ति तेज दौड़ने की इच्छा करे, अन्धा देखने का स्वप्न देखे उसी तरह की यह इच्छा भी कही जा सकती है।

"मन मोर रंक मनोरथ राऊ"

की कहावत चरितार्थ हो सकती है। इसलिए सबसे पहले स्त्री को चाहिए कि वह उक्त गुणों को अपनावे। मैं ज्ञानी हूँ। ऐसा कहने से कोई ज्ञानी नहीं हो सकता। या अपने मन में ज्ञानी बन जाने से लोग उसे ज्ञानी नहीं कहेंगे। संसार का यह एक नियम है कि "प्रत्येक व्यक्ति अपने को दूसरे से अधिक ज्ञानी समझता है॥" कहावत भी है कि "लोग अपने में आधी अक्ल और आधी में सारा संसार समझते हैं।" परन्तु इस प्रकार अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनने से कुछ काम नहीं चलता। इसलिए सबसे पहले स्त्रियों को ज्ञानोपार्जन करना चाहिए। ज्ञान की प्राप्ति विद्या पढ़ने से होती है। क्योंकि—

"विद्याविहीनः पशुः।"

बिना विद्या के मनुष्य पशु (ज्ञानहीन) होता है। ज्ञानी बनने के लिए स्त्रियों को विद्या पढ़नी चाहिए। वेदशास्त्र तथा ऐतिहासिक ग्रन्थों का स्वाध्याय करना चाहिए। जो स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी नहीं हैं, वे मूर्खा हैं,

अतएव उनका यह दावा कि "पति को मेरी इच्छानुसार चलना चाहिए।" व्यर्थ है।

"घर की मुखिया हूँ।" ऐसा अपने दिल में समझ लेने से काम नहीं चलेगा। बल्कि नेता के, अगुआ के, मुखिया के जो गुण हैं, वे भी होने चाहिएं। नेता वही बन सकती है, जो विदुषी हो, ज्ञानवती हो, समझदार हो। देश, काल और परिस्थिति का जिसे विचार हो। अनुभवशून्य नेता को पाकर उसके अनुगामी हानि उठाते हैं। घर का नेता बनने के लिए स्त्रियों को बहुत कुछ ज्ञान संपादन करना पड़ेगा। गृहपति मुझे हाथ पकड़ कर लाया है, इसलिए मैं गृहस्वामिनी हूँ, ऐसा दावा करना मूर्खता है। घर का कामकाज और व्यवस्था ठीक रखने वाली स्त्री को लोग स्वयं मुखिया समझ लेते हैं। बिना उसकी आज्ञा के घर में कोई पत्ता नहीं हिला सकता। इसलिए, घर की मुखिया बनने के लिए, उन्हें मुखिया के सब गुण अपने में धारण करने चाहिएं।

"धैर्यवान् हूँ।" ऐसा कहने के पहले "धीरज" धारण करने का अभ्यास करना चाहिए। धैर्य कोई साधारण बात नहीं है। सहिष्णु व्यक्ति ही धैर्यवान् हो सकता है। बलवान् व्यक्ति ही धैर्यसम्पन्न होता है। ज्ञानी के लिए धैर्य साधारण बात है। "धैर्य" धर्म के दस अंगों में प्रथम है।

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

जो धैर्यवान् है वह धार्मिक है। स्त्रियों को धैर्यवान् बनना चाहिए। धैर्यहीन स्त्रियाँ अपने पति को यदि अपनी इच्छानुसार चलाना चाहें, तो यह उनका दुस्साहस है।

मैं व्याख्याता हूँ। मैं किसी विषय को अच्छी प्रकार समझा सकती हूँ। यह बात प्रत्येक स्त्री के हृदय में होती है। परन्तु व्याख्या करना

बात कठिन है। एक गहन विषय को कई तरह से कई प्रमाणों से निष्पक्ष भाव से समझा देने का नाम व्याख्या है। व्याख्या में वही व्याख्या उत्तम गिनी जाती है, जो प्रभावोत्पादक हो। इसलिए स्त्रियों को चाहिए कि अपनी व्याख्या शक्ति को प्रभावोत्पादक बनावें जो आदमी सच्चरित्र, ज्ञानी, सत्यवादी, सरल स्वभाव, शान्त, उदार, परोपकारी और ईश्वरभक्त होते हैं, उनके शब्द बड़े ही प्रभावोत्पादक होते हैं। सारांश यह कि स्त्रियों को व्याख्याता बनने के लिए अपना जीवन अत्यन्त सादा और पवित्र बनाना चाहिए। जो स्त्रियाँ अपना जीवन धार्मिक बनालेंगी, उनके पति उनकी इच्छा के विपरीत कोई भी कार्य नहीं कर सकेंगे।

शत्रु का नाश करने वाली हूँ। जो जो बातें व्यक्ति, समाज, अथवा राष्ट्र के लिए घातक हैं, उनका नाश करने वाली स्त्री ही अपने पति को अपने प्रेम पाश में बाँध सकती है। अनेक कुरीतियाँ हम लोगों में वंशपरंपरा से चली आती हैं। स्त्रियों को चाहिए कि उनको अपना शत्रु समझकर नष्ट करदें। रोग भी गृहस्थी का शत्रु है, इसलिए स्त्रियों को चाहिए कि ऐसे कारणों का अथवा रोग पैदा करने वाले कीटाणुओं का नाश करने में सर्वदा तत्पर रहें। मनुष्य शरीर के अन्दर छः शत्रु हमेशा रहते हैं; इन काम, क्रोध, मोह, मद, मात्सर्य आदि शारीरिक शत्रुओं का दमन भी आवश्यक है। राष्ट्र के शत्रुओं का नाश करते रहना चाहिए जिससे हमारी स्वतंत्रता नष्ट न हो सके। इस प्रकार जो स्त्री अज्ञानी, मुखिया, धैर्यवान्, व्याख्याता और शत्रुघातक हो, वह अपने पति को अपनी इच्छानुसार रख सकेगी। इसके विरुद्ध इच्छा करना स्त्रियों के लिए पाप कहा जा सकता है।

(२२) स्त्रियों के विचार।

ॐ मम पुत्राः शत्रुहणोऽथो मे दुहिता विराट्।
उताहमस्मि संजया पत्यौ मे श्लोक उत्तमः॥

(ऋग्वेद १० । १५९ । ३)

(मम पुत्राः) मेरे पुत्र (शत्रुहणः) शत्रु का नाश करने वाले हैं (मे दुहिता) मेरी पुत्री (विराट्) तेजस्विनी है (उत) और (अहम्) मैं (संजया अस्मि) विजयिनी हूँ। (पत्यौ) पति के विषय में (मे श्लोक उत्तमः) मेरी उत्तम प्रशंसा है।

(१) "मेरा पुत्र शत्रुनाशक, मेरी बेटी तेजस्विनी और मैं स्वयं विजयिनी हूं। मेरी ओर से पति के लिए उत्तम प्रशंसा है।" वेद की यह श्रुति स्त्रियों को उपदेश देती है कि, तुम पुत्र पुत्रियों द्वारा तथा अपने शरीर द्वारा कितनी ही सत्ता क्यों न प्राप्त कर लो, परन्तु पति की सत्ता तुम पर सर्वदा है। तुम्हारा पुत्र भले ही त्रिलोक-विजयी ही क्यों न हो? और भले ही तुम्हें उसकी माता कहलाने का गौरव प्राप्त हो, तो भी तुम्हें पति के लिए अपने हृदय में आदर रखना चाहिए। तुम्हारी पुत्री सर्वगुण सम्पन्ना, विदुषी, पति-भक्ति परायणा हो तो तुम्हें उसके कारण पति की अवहेलना नहीं करनी चाहिए। और तुम स्वयं वीर विजयिनी हो तो, इतरा न जाओ, क्योंकि इतना होते हुए भी तुम अपने पति के सामने अत्यन्त दीन हो। हमारे प्राचीन इतिहास में ऐसे कई प्रमाण मिलते हैं, जिनमें वीर पुत्रों की माताएँ अपने पति की क्रीत-दासी सी बनी रहती थीं, और स्वयं वीर होते हुए भी पतिसेवा को अपना मुख्य धर्म समझती थीं। सीता, कुन्ती, गान्धारी, सुभद्रा आदि इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। सारांश

का संग्रह रक्खो। उत्तम जल, उत्तम घृत, शुद्ध दूध, अच्छी छाछ इत्यादि पदार्थों की विपुलता घर में होनी चाहिए। दूध, दही, छाछ, घृत आदि पदार्थ पृथ्वीलोक के अमृत कहे जाते हैं। सारांश यह कि घर में गौएं पालनी चाहिएं, जिनसे अमृत तुल्य पदार्थों की घर में विपुलता रहे। जब से स्त्री-समाज ने गौसेवा से अपना मन हटाया, तभी से गोवंश का संहार आरंभ हो गया। जब कोई गौओं का पालने वाला ही नहीं रहा तो उनका विनाश अनिवार्य ही है। बहनो! अगर तुमने गौसेवा न छोड़ी होती तो भारत में दूध, घी की ऐसी भयंकर महँगी न आती। आज देश में "गोरक्षा" का प्रश्न बड़े महत्व का बन रहा है। तुम्हें चाहिए कि पुरुषों का हाथ बटाओ। जिस देश में घी-दूध की नदियाँ बहती थीं वहीं लोग उसकी एक एक बूँद को तरस रहे हैं। तेतीस करोड़ भारतवासियों के लिए यहाँ केवल ३ करोड़ दुधारू पशु बाकी बचे हैं। इनका भी धीरे-धीरे संहार हो रहा है। हमारे भारत में ११ करोड़ घर हैं। यदि फी घर एक गौ भी रखी जाय, तो आज २२ करोड़ गोवंशों की रक्षा हो जाय। इस प्रकार गोरक्षा हो जाने पर देश में फिर वही दूध घी का जमाना आ जायगा। बहनो! उठो देश की उन्नति में बाधक "गोसंहार" को रोको। गोपालन कोई बड़ी बात नहीं है। एक गौ के रखने से दूध, दही, छाछ, मक्खन, घृत आदि देवदुर्लभ पदार्थों को सहज ही में प्राप्त कर सकोगी। अपने बच्चों को दूध के द्वारा अच्छी तरह पाल सकोगी। इसके अतिरिक्त घर में कण्डे-छाने होंगे, जो जलाने के लिए काम में आयंगे। यह हमारा विषय नहीं है अतएव इस पर अधिक प्रकाश नहीं डाला जाता। केवल इतना ही कह देना पर्याप्त होगा कि "गोपालन" से किसी प्रकार की हानि नहीं हो सक्ती।

"गौर्मे माता ऋषभः पिता मे H" (ऋग्वेद)

अर्थात्—"गौ मेरी माता और बैल मेरा पिता है।" इस वेद

वचन को मानने वाले लोगों को गोसेवा से इस प्रकार मुँह चुराना ठीक नहीं है। पशुपालन घरेलू धन्धा है, जिसे वेद ने स्त्रियों को सौंपा है यह बात हम पीछे कहीं लिख आये हैं। "पशुपालन" स्त्रियों का एक मुख्य कार्य है। इस कथन के प्रमाण में वेद के सैकड़ों मंत्र पेश किये जा सकते हैं। तात्पर्य यह है कि बहनो! यदि तुम "पशु पालन" का कार्य अपने हाथ में ले लो तो भारत के दुधारू पशुओं की रक्षा आज ही हो सकती है। तब तुम उक्त वेद मन्त्र के अनुसार दूध घी के कलश पीने वालों के सन्मुख लाकर रख सकोगी और उन्हें भर पेट अमृत पान करा सकोगी। तुम्हारे इस कार्य से एक पंथ दो काज होंगे। अपना भी भला होगा और राष्ट्र का भी हित होगा।

---

(२५) बाल विवाह-निषेध।

ॐ आ धेनवो धुनयन्तामशिश्वीः सवर्दुघाः शशया अप्रदुग्धाः।
नव्य नव्या युवतयो भवन्तीर्महद्देवानामसुरत्वमेकम् ॥

(ऋग्वेद ३। ५५। १६)

(अप्रदुग्धा) बिना दुही हुई (धेनवः) गौओं की तरह अर्थात् अविवाहित (अशिश्वीः) बाल्यावस्था से रहित, (सवर्दुघाः) उत्तम व्यवहारों को पूर्ण करने वाली (शशया) कुमारावस्था को लाँघ कर (युवतयः) यौवनावस्था को प्राप्त (भवन्तीः) हुई (नव्य नव्याः) नवीन शिक्षा से युक्त (देवानाम् एकं महत् असुरत्वम्) विद्वानों द्वारा दिये गये ज्ञान से युक्त अर्थात् पूर्ण शिक्षित युवतियाँ (आधुनयन्ताम्) गर्भ धारण करें।

(१) "अविवाहित, जो बालिका न हो अर्थात् यौवनावस्था को पहुँची हो, जो कार्यकुशल तथा शिक्षित हो वह

स्त्री गर्भ धारण करे।' यह श्रुति वचन बतलाता है कि छोटी छोटी लड़कियों को गर्भ नहीं धारण करना चाहिए। गर्भधारण बिना पुरुष संयोग के नहीं हो सकता और उसकी जड़ विवाह-संस्कार है। अर्थात् लड़कियों का विवाह छोटी उम्र में कदापि नहीं होना चाहिए। यदि आज हमारी बहनें इस बात पर अटल हो जायं कि हम अपनी पुत्रियों का विवाह छोटी उम्र में नहीं करेंगी, तो आप देखेंगी कि यह "बाल-विवाह' देश में एक दम रुक जायगा। जब कि लड़कियों की शादी ही बड़ी उम्र में होगी, तो लड़कों को उनसे भी बड़ी उम्र में गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना होगा। क्योंकि पति की उम्र पत्नी से सर्वदा अधिक ही होती है।

हमें अपने स्त्री-समाज पर अत्यन्त दुःख होता है कि इस "बाल-विवाह" में स्त्रियों का हाथ विशेष रूप से होता है। पुरुषवर्ग यदि बच्चों का विवाह बड़ी उम्र में करना भी चाहें तो स्त्रियाँ उन्हें शीघ्र ही विवाह करने के लिए विवश करती हैं। न जाने हमारा भारतीय मनुष्य-समाज इतना क्यों गिरा हुआ है कि यह अपने छोटे-छोटे बच्चों को भोग-विलास की शिक्षा, अल्प वयस में ही, देने में खुश है भारत का वायु मण्डल न जाने इतना अपवित्र क्यों हो गया है? देश इतना विलासी क्यों बन गया है? विवाहसंस्कार के अभी कई वर्ष बाकी हैं, बच्चे को किसी बात के समझने की बुद्धि तक नहीं है, इसी अवस्था में माताएँ प्रायः अपनी पुत्रियों से पूछा करती हैं "बेटी! तुझे गोरा बींद चाहिए कि काला?" इत्यादि। लड़की वे समझ होती है, वह काला या गोरा अथवा "बींद" को क्या जाने? चाहे जो मुँह से बोल देती है तब घरके सब लोग हँस पड़ते हैं। उन्हें हँसते देख कर वह अबोध बालिका भी हँसती है। यहाँ को तो खुशी चाहिए ही, वह खुशी की वजह को क्या जाने? इस तरह के जहरीले कुसंस्कार माता पिता, अड़ोसी-पड़ोसी

आदि बच्चों के हृदय पर अंकित करते रहते हैं। बहनो! सँभल जाओ ऐसी बातें अपने बच्चों से खुद भी मत कहो और न दूसरों से कहाओ। इसका बड़ा भयानक परिणाम होता है। बच्चे छोटी उम्र से ही अपना जीवन बरबाद करने लगते हैं। दियासलाई में जिस तरह मसाला लगा रहता है, उसी तरह ये कुत्सित विचार बच्चों के शरीर पर लग जाते हैं। ज़रा भी कुसंगति या विलासिता की रगड़ लगी कि शरीर भस्म हुआ! "बाल-विवाह" कितनी भयंकर प्रथा है? जिसे जल में तैरना न आता हो उसे पानी में फेंक देने के समान है! शोक!

बालविवाह के भयंकर परिणाम से कौन बे ख़बर है? सारा देश इस अग्नि से जल रहा है। भारत का कलेवर जर्जर हो रहा है। नित नये रोगों की वृद्धि हो रही है। हम लोग स्वयं अल्पायु तो हुए ही, किन्तु साथ ही अपनी भावी पीढ़ियों को भी निर्बल बनाने का भयंकर पाप अपने सिर पर ले रहे हैं। बहनो! बालविवाह के भयंकर परिणामों का प्रभाव पुरुषों की अपेक्षा तुम पर अधिक होता है। क्या तुम नहीं देखती कि देश में कितनी बाल विधवाएँ हैं? जितनी विधवाएँ हैं उतने विधुर नहीं हैं! इसका कारण यह है कि पत्नी के मर जाने पर पुरुष अनेक विवाह कर सकते हैं और स्त्रियों को ऐसा करने से रोका जाता है! हाँ, यदि पुरुषों के लिए भी एक पत्नी करने का विधान होता तो, उन्हें भी स्त्रियों के वैधव्य पर दुःख होता। परन्तु जब कि पुरुषवर्ग अपना पुनर्विवाह कर सकते हैं तो उन्हें विधवा स्त्रियों की चिन्ता ही क्या? स्त्रियों को पुरुषों द्वारा अपने उद्धार की आशा करना भूल है। पुरुष तुम्हें समान अधिकार देना नहीं चाहते। वे तुम्हें दबाये रखना चाहते हैं। तुम्हारी उन्नति से पुरुषवर्ग प्रसन्न नहीं होता। अभी वह समय दूर है जब कि पुरुषों का स्त्रियों के साथ समान व्यवहार होगा। ऐसा समय खुद नहीं आवेगा; बल्कि तुम्हें प्रयत्नशील बनकर उसे लाना पड़ेगा। अपनी अधोगति पर

थोड़ा सा ध्यान दो। बालविवाह के इस भयंकर परिणाम पर विचार करो कि देश में बालविधवाओं की संख्या कितनी अधिक है ?

विधवाएँ

एक वर्ष तक की विधवाएँ	१७०१४
एक वर्ष से दो तक ,,	८५६
२ ,, ३ ,, ,,	१८०७
३ ,, ४ ,, ,,	८२७३
४ ,, ५ ,, ,,	१७७०३
५ ,, १० ,, ,,	९४२४१
१० ,, १५ ,, ,,	२२३०४२
योग	३६२९२६

इनके अतिरिक्त लगभग पौने तीन करोड़ विधवाएँ और हैं, जिनकी उम्र १५ वर्ष से अधिक है। विचारने का विषय है कि जिस उम्र में अर्थात् १६ वर्ष की अवस्था में विवाह करने की आज्ञा आयुर्वेद देता है, उस उम्र में पहुंचने के पहले ही लाखों बहनें विधवा बन गईं !!! इससे बढ़ कर दुःख का विषय और क्या हो सकता है ? स्त्री-जाति की इस दुर्दशा पर किसी का भी ध्यान नहीं जाता ! हिन्दू-जाति की छाती पर छुरी चल रही है, किन्तु हम लोग बेखबर हैं। स्त्रियों के वैधव्य से हिन्दू-जाति की कितनी पतित दशा है, उस पर कोई विचार ही नहीं करता ! विधवाओं की दुःखभरी गर्म आहों से भारत की दसों दिशाएँ प्रलयाग्नि की तरह धधक रही हैं। देश में पाप बढ़ रहा है। व्यभिचार बढ़ रहा है—वेश्याएँ बढ़ रही हैं। हिन्दूजाति में अपना उद्धारकर्ता न पाकर हमारी विधवा बहनें विधर्मियों के साथ होकर अपना धर्म खो रही हैं। भ्रूणहत्या

से देश दबा जा रहा है । इत्यादि अनेक पापों का उदय इस "बालविवाह" के कारण हुआ है ।

स्त्रीसमाज की जितनी अधमावस्था भारत में है, उतनी शायद ही किसी अन्य देश में हो । स्त्रियों के साथ अन्याय हमारी अशिक्षा का ही कारण है । क्योंकि जो देश शिक्षित हैं उनमें स्त्रियों का पद उच्च है । देश में बहुत से समझदार लोग अब स्त्रियों के सुधार के लिए चिंतित नजर आते हैं । कई धार्मिक संस्थाओं ने स्त्री-सुधार को अपने हाथ में ले लिया है । विशेषतः आर्यसमाज का ध्यान स्त्री शिक्षा की ओर सब से अधिक है । यदि यह कह दिया जाय कि, "जो कुछ भी स्त्रीसुधार, अथवा स्त्री-शिक्षा का बीज हमारे देश में अंकुरित दिखाई दे रहा है उसका बोने वाला आर्यसमाज है" तो अतिशयोक्ति न होगी । यह सब कुछ हो रहा है किन्तु पुरुषों के भरोसे अपनी उन्नति को नहीं छोड़ देना चाहिए । स्त्रियों को चाहिए कि अपनी उन्नति के लिए स्वयं प्रयत्नशील बनें । मैं विवाहित स्त्रियों से प्रार्थना करता हूं कि वे अपने बच्चों का छोटी उम्र में विवाह न करें । और कन्याओं को यह उपदेश देता हूँ कि "यदि तुम्हारे मूर्ख माता पिता तुम्हारा विवाह छोटी उम्र में करना चाहें तो तुम उन्हें उसके लिए मना कर दो–बालविवाह के प्रति अपनी घृणा प्रकट करो। इतने पर भी यदि निर्लज्ज मा बाप न मानें तो देश से इस प्रथा को समूल नष्ट करने के लिए प्रसन्नता पूर्वक अपना शरीर देश की वेदी पर बलिदान कर दो" । ऐसा करना अच्छा है, किन्तु वेद की आज्ञा के विरुद्ध छोटी उम्र में विवाह हो जाना अत्यंत बुरा है । वेद कहता है कि "युवतियाँ ही गृहस्थ धर्म में प्रविष्ट हों, छोटी-छोटी लड़कियाँ न हों" । इसपर तुम्हें विचार करना चाहिए ।

(२६) गृहस्थाश्रम की नौका

ॐ भगस्य नावमारोह पूर्णामनुपदस्वतीम् ।
तयोपप्रतारय यो वरः प्रतिकाम्यः ॥
(अथर्व० २ । ३६ । ५)

हे कन्या ! तू (भगस्य) ऐश्वर्य की (पूर्णाम् नावम् आरोह) भरी हुई नाव पर चढ़ (अनुपदस्वतीम्) जो कि दूर नहीं है । (तया) उस नाव से (यः प्रतिकाम्यो वरः) जिस वर की तूने कामना की है, उसे (उपप्रतारय) पार लेजा ।

(१) हे कन्या ! ऐसी नाव पर चढ़कर, अपने मनोनीत पुरुष को पार लेजा, जोकि ऐश्वर्य युक्त है और जो तेरे समीप है । यह वेद वचन गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने वाली कन्या को उपदेश दे रहा है कि ऐश्वर्य युक्त नौका पास है अर्थात् अब तू विवाह के योग्य हो गई है । तुझे गृहस्थाश्रम रूपी ऐश्वर्य युक्त नाव पर चढ़ना है । इस नाव में तू अकेली ही न होगी; क्योंकि समुद्र में तूफान आँधी वगैरह उत्पातों का भी डर है; इसलिए तुझे संसार रूपी सागर के दुःखों में सहायता देने के लिए अपने साथ अपनी इच्छा के अनुसार एक पुरुष भी साथ लेना होगा । वह पुरुष तेरे सुख दुःखों का संगी रहेगा । दुःख पड़ने पर तू उसकी और वह तेरी सहायता करेगा । उसे सुखी देखकर तू और तुझे सुखी देखकर वह सुखी होगा । दोनों परस्पर आमरण एक दूसरे के मित्र रहना । इस नौका की अर्थात् गृहस्थाश्रम की, पतवार तेरे हाथ में होगी । नाव को अच्छी तरह चलाना; कहीं ऐसा न हो कि कहीं भँवर में पड़ जाय अथवा किसी चट्टान से टकरा जाय ! कुहर में, तूफान में, आँधी में, जिस प्रकार एक मल्लाह को सावधानी से अपनी नाव चलानी पड़ती है, उसी तरह तुझे भी, दुःख में, आपत्तियों में, विघ्नों में, शोक में

अपनी गृहस्थाश्रम रूपी नाव बड़ी सावधानी से चलानी होगी। नाव में काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि छिद्र न होने पावें। नौका को डुबो देने वाले पाप—कहीं पानी बनकर तुम्हारी नाव में न भर जायँ। पाप रूप पानी को नाव के बाहर उलीचते रहो। वेद कहता है कि "स्त्रियो! इस नौका को चलाने की जिम्मेवारी तुम्हारे ऊपर अधिक है। तुम पुरुषों के भरोसे न रह जाना। इस प्रकार तुम इस गृहस्थाश्रम रूपी नौका की मल्लाह बनकर संसार रूपी महासागर के पार ले जाओ"। अर्थात् अपने गृहस्थाश्रम के कर्त्तव्यों का पालन करके फिर "वानप्रस्थाश्रम" में प्रवेश करो। कहीं ऐसा न करना कि यह तुम्हारी नौका समुद्र में ही चक्कर खाया करे। अर्थात् तुम्हें आमरण गृहस्थाश्रम में ही न पड़े रहना चाहिए। तुम्हें अपने पति को पार लगाना चाहिए। यह उत्तरदायित्व-पूर्ण कार्य वेद तुम्हें सौंपता है। यह नौका का उदाहरण विचार करने योग्य है।

कुछ कवि गृहस्थाश्रम को गाड़ी की उपमा देते हैं। उनका कहना है कि—

जीवन गाड़ी ज्ञान धुरि पहिये दो नर नारि।
सुख मंजिल तय करनहित जोरहु इन्हें सम्हारि।
जोरहु इन्हें संभारि लगेना ऊँचे नीचे।
दोनों सम जब होहिं चलहु फिर आँखें मींचे।
कह गिरधर कविराय यही तुम धारो निज मन।
या विधि हों नरनारि सफल तब निश्चय जीवन।

किसी अंश तक यह गाड़ी की उपमा ठीक है किन्तु जो महत्ता वेद के उक्त मंत्र में नाव की उपमा है वह इसमें नहीं, क्योंकि गाड़ी, बिना बैल आदि प्राणी के चल नहीं सकती। परन्तु नाव का मल्लाह स्त्री को बना देने से यह नाव चल सकती है। मुझे आशा है कि स्त्रियाँ गाड़ी का एक

पहिया बन कर रहने में अपना उतना महत्व न समझेंगी, जितना कि गाव का मल्लाह बनने में।

---

(२७) तन मन धन पति की सेवा में।

ॐ इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयमौक्षो अथो भगः।
पते पतिभ्यस्त्वामदुः प्रतिकामाय वेत्तवे॥
(अथर्व० २ । ३६ । ७)

हे कन्या! (इदं हिरण्यं) यह सुवर्ण अर्थात् धन (गुग्गुलु) धूप (औक्षः) लेप करने का सुगन्धित द्रव्य (अथो भगः) और दूसरा ऐश्वर्य (पते) यह सब (त्वाम्) तुझे (पतिभ्यः अदुः) पति के लिए तुझे दिया जा रहा है। (प्रतिकामाय वेत्तवे) पति की कामना पूर्ण करने और उसे लाभ पहुँचाने के लिए।

(१) "*यह सोना, सुगन्धित द्रव्य और दूसरी वस्तुएँ जो तुझे दे रहे हैं यह तेरे पति की कामना पूर्ण करने तथा लाभ पहुँचाने के लिए हैं।*" वेद का यह वचन कन्याओं को उपदेश दे रहा है कि—तुम्हारे विवाह-समय अथवा दूसरे मौक़ों पर जो कुछ भी तुम्हें तुम्हारे पीहर से दहेज की शक्ल में दिया जाता है, वह तुम्हारे पति का है। तुम यह न समझो कि मेरे माता पिता ने इसे मुझे दिया है। आजकल प्रायः देखने में आया है कि जो स्त्रियाँ अपने पिता के यहाँ से विशेष दहेज लाती हैं, वे उस पर बहुत इतराती हैं। ससुराल में वस दहेज पर अपना घमण्ड दिखाती हैं और उन लोगों को तुच्छ दृष्टि से देखा करती हैं। मौका आने पर वे मुँह से भी कहने लगती हैं कि "मेरे पास तुम्हारा है भी क्या? जो कुछ भी जेवर, गहने, कपड़े लत्ते बर्तन आदि मैं बरतती हूँ, वे तो सब मेरे पीहर के हैं। तुम्हारे घर के तो

सिर्फ़ टुकड़े खाती हूँ, सो तुम्हारा काम बजाती हूँ।" इत्यादि। कहीं-कहीं तो इससे भी अधिक कड़वे शब्द बोलती सुनी गई हैं। जो स्त्रियाँ गंभीर और धार्मिक स्वभाव की होती हैं, उनके मुँह से ऐसे ओछे शब्द नहीं निकलते। परन्तु जो संकीर्ण हृदय वाली ओछी औरतें होती हैं, जिन्हें अपने कर्त्तव्याकर्त्तव्य का ध्यान नहीं होता, वे मनचाहा बोल दिया करती हैं। इस विषय में वेद कहता है कि, स्त्रियों का दहेज पर अथवा पीहर से लाई हुई वस्तु पर उतना अधिकार नहीं है, जितना पति का। जो स्त्रियाँ उन वस्तुओं को अपनी समझती हैं, वे पापिनी हैं।

विवाह अथवा गौने के समय या और किसी मौक़े पर जो कुछ भी तुम्हें तुम्हारे पीहर से प्राप्त होता है, उसे तुम अपना मत समझो। वह अपने पति के हाथ सौंप दो। यदि वह तुम्हें उनके उपयोग के लिए आज्ञा दें, तो उन्हें अपने काम में लाओ। पीहर की चीज़ों के मिलते ही उन्हें अपने सन्दूक में बन्द मत करो। अपने ऐसे सन्दूकों पर ताले डाल कर चाबी अपने हाथ में मत रक्खो। तात्पर्य यह कि पति से छिपा कर किसी वस्तु को अपने पास रखने में घोर पाप समझो। जिस से तुम अपना हृदय छिपाना ठीक नहीं समझतीं, उससे कपड़े, जेवर, बरतन रुपये पैसे आदि छिपाकर रखना कहाँ की बुद्धिमत्ता है? जो स्त्रियाँ अपने पीहर की चीजें अपने पति से छिपा कर रखती हैं; वे पति की दृष्टि में गिर जाती हैं। इसलिए वेद कहता है कि सुवर्ण, जेवर, वस्त्राभूषण, बरतन-भाँडे, रुपये-पैसे, इत्र-फुलेल आदि जो जो उत्तम पदार्थ तुम्हें तुम्हारे पीहर से प्राप्त हों, उनसे पति की सेवा करो। तुम्हारे माता पिता ने जो कुछ भी तुम्हें दिया है, उसके द्वारा पति को सुख पहुँचाओ और उसकी कामना पूर्ण करो।

कुछ स्त्रियों को बस इसी बात का शौक़ होता है कि जेवर और कपड़े बनवा-बनवा कर अपने सन्दूक में रखती जायँ और जब देखो तब मैले

कुचैले वस्त्रों को धारण कर अपने पति के सामने आयें। ऐसे व्यवहार से पति के दिल को दुःख होता है। इसलिए स्त्रियों को उचित है कि जो कुछ भी उन्हें वस्त्राभूषण पीहर से प्राप्त हों, उन्हें पहन-ओढ़ कर अपने पति के हृदय को सुख पहुँचावें। यही बात वेद के उक्त मंत्र में कही गई है।

(२८) चरखा सूत और वस्त्र।

ॐ वितन्वते धियो अस्मा अपांसि वस्त्रा
पुत्राय मातरो वयन्ति ॥ (ऋग्वेद ५। ४७। ६)

(मातरः पुत्राय वस्त्रा वयन्ति) माताएँ अपने पुत्रों के लिए कपड़े बुनती हैं। (अस्मै धियः अपांसि वितन्वते) इस बच्चे के लिए सुविचारों और सत्कर्मों का उपदेश देती हैं।

(१) "माताएँ अपने पुत्रों के लिए कपड़ा बुनती हैं।" ऋग्वेद का यह मंत्र कहता है कि कपड़े बुनना प्रत्येक स्त्री का घरेलू धन्धा है। "कपड़ा बुनने" का तात्पर्य यह है कि जो सबसे कठिन और बुद्धिमानी का कार्य है, वह इस व्यवसाय में कपड़ा बुनना है। कपास को चर्खी में डाल कर रुई और बिनौलों का अलग करना। रुई को धुन कर उसे कातने के योग्य बनाना और उससे सूत तय्यार करना। सूत तय्यार करने के दो साधन हैं। (१) चरखा और (२) तकली। अब यहाँ यह विचार करना है कि वेद में कोई ऐसा मन्त्र मिलता है या नहीं, जिसमें स्त्रियों को सूत कातने की आज्ञा हो? यहाँ यह वेद मंत्र विचारने योग्य है—

तन्तुं तन्वन् रजसो भानुमन्विहि ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धिया कृतान्। अनुल्वणं वयत जोगुवामपो मनुर्भव जनय दैव्यं जनम् ॥ (ऋग्वेद)

(दैव्यं जनं जनय) "दिव्य प्रजा उत्पन्न करो" यह वाक्य बतलाता है कि वेद स्त्रियों को सम्बोधित करके कहता है कि हे स्त्रियो ! (तन्तुं तन्वन्) सूत कात कर (रजसः भानुं अनु इहि) उस पर रंग चढ़ाओ (अन् उल्वणं वयत) बिना गाँठ के सूत से कपड़ा बुनो अर्थात् सूत इतनी सावधानी से कातो कि वह जगह-जगह टूटने न पावे या कपड़े बुनते वक्त न टूटे। सारांश यह है कि चरखा चलाते वक्त इस बात का ध्यान न रक्खो कि सूत बारम्बार न टूटे और उसमें काफ़ी बल दिया जाय। जिस सूत में कम या अधिक बल लगा दिया जाता है, वह कपड़ा बुनते वक्त बड़ी ही तकलीफ़ देता है। वेद कहता है कि इस काम को जुलाहों, कोरियों अथवा बलाइयों का धन्धा मत समझो क्योंकि (जोगुवां अपः) यह काम स्त्रियों का है। कपड़ा बुनना, सूत कातना, इत्यादि कार्य घरेलू धन्धा है। जबसे स्त्रियों ने इसे छोड़ा, तभी से राष्ट्र पर आपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा है। धीरे धीरे हम इतनी अवनत दशा को पहुंच गये कि:—

इतनी आज़ादी भी ग़नीमत है।
साँस लेता हूं बात करता हूं॥ (अकबर)

परतंत्रता की मजबूत जंजीर में सारा देश जकड़ा जा चुका है। बहनो! अगर आज तुमने वैदिक उपदेश को न भुलाया होता, तो देश की यह दुर्दशा न होती। देश की स्वतंत्रता तुम्हारे हाथों में थी और अब भी है। अबला के नाम से पुकारी जाने वाली, महाशक्तियो! तुम में वह बल है कि पुरुषों के बिना ही तुम राष्ट्र का कल्याण कर सकती हो। परतंत्रता के युग में, हमें बन्धन से मुक्त करने के लिए तपस्वी महात्मा गान्धीजी ने भी तुम्हें कर्त्तव्य-विमुख देख कर पुरुषों तक को सूत कात कर घर में ही कपड़ा कातने की सम्मति दी है। उनकी यह पवित्र

ध्वनि भारत ही में नहीं, बल्कि सारे संसार में, गूँज उठी है। गृहस्थियो! अपना कर्त्तव्य पालन करो और चरखा चला कर अपनी उन्नति करो।

वेद के उक्त मंत्र में सूत को रँगने के लिए भी संकेत है। अर्थात् स्त्रियों को रंगसाजी भी आनी चाहिए। अपनी इच्छानुसार कपड़े को रंग चढ़ाने में प्रवीण होना चाहिए यही भाव इस वेद वचन में है। कपड़ा बनाते वक्त उसमें डिजाइन (Design) करने के लिए रँगे हुए सूत की आवश्यकता होती है। धोती की किनारें बनाने के लिए चौखाना तैयार करने के लिए रँगे सूत की पहले जरूरत है। इसलिए सूत रँगना भी आना चाहिए। तात्पर्य्य यह है कि मनुष्य को परमुखापेक्षी न रह कर स्वावलम्बी बन जाना चाहिए।

अब इस मंत्र पर विचार करना चाहिए—

ऋतायिनी मायिनी संदधाते मित्वा। शिशुं जज्ञतुर्वर्धयन्ती।
विश्वस्य नाभिं चरतो ध्रुवस्य कवेश्चित् तन्तुं मनसा वियन्तः॥
(ऋग्वेद)

"सरल स्वभाव से युक्त दो स्त्रियाँ, जिन्होंने संतान को उत्पन्न किया है अपनी अपनी संतानों का पालन करती हुई कवि की तरह मनःशक्ति के साथ कपड़ा बुनती हैं और प्रमाण सहित जोड़ती भी हैं।" इससे यह सिद्ध होता है कि केवल चरखा कात कर सूत निकाल देना ही, स्त्रियों का कार्य नहीं है, बल्कि उन्हें कपड़ा बुनना चाहिए। ठाली-बैठी स्त्रियाँ ही नहीं, बल्कि बाल बच्चे वाली स्त्रियाँ भी कपड़ा बुनें। एक प्रकार से वेद ने इस को स्त्रियों के लिए अनिवार्य सा कह दिया है। वेद का अभिप्राय है कि भले ही स्त्रियाँ बच्चे वाली हों, परन्तु वस्त्र अवश्य बुना करें। स्त्रियों के लिए वस्त्र बुनना एक जरूरी काम है। यहाँ प्रश्न यह होता है कि "जब हमें सहज ही बिना श्रम के सस्ते दामों में कपड़ा मिल जाता है तो फिर चरखा चला कर सिर दर्द मोल भी क्यों लिया

जाय ?" इसका उत्तर यदि विस्तार पूर्वक लिखने बैठें तो, विषयान्तर हो जाने का भय है। हम यहाँ केवल यही कह देना काफ़ी समझते हैं कि, "हमारा कल्याण वेद की आज्ञा मानने में ही है और विरुद्धाचरण में नाश।" * इस विषय में वर्त्तमान समय प्रमाण रूप है।

पहले समय में पत्नी का फ़र्ज़ था कि वह अपने पति के लिए आवश्यकीय कपड़ा बुन कर तय्यार करे। यह मंत्र देखिए—

ये अन्तायावतीः सिचो य ओतवो ये च तन्तवः।
वासो यत्पत्नीभिरुतन्नयेनमुपस्पृशात्॥

(अथर्व)

अर्थात्—"ये जो कपड़े के अन्तिम भाग में किनारियाँ हैं, जिनका ताना बाना पत्नियों के द्वारा पूरा गया था, वह वस्त्र हमें (पुरुषों को) सुखदायक हों।" माता भी अपनी संतान के लिए कपड़ा बुने—

वितन्वते धियो अस्मा अपांसि वस्त्रापुत्राय मातरो वयन्ति॥

(ऋग्वेद)

अर्थात्—"माताएँ अपने पुत्रों के लिए कपड़ा बुनती हैं।" इत्यादि वैदिक प्रमाणों से सिद्ध होता है कि, स्त्रियों का यह काम है कि वे गृह-कार्य से फ़ुरसत पाने पर रुई निकालें, उसे धुनें, कातें और फिर उससे ताना पूर कर अपने घरखर्च के लायक कपड़ा तय्यार करें। अपने घर में तय्यार किया हुआ कपड़ा, सस्ता, मज़बूत, सुन्दर, इच्छानुसार, पवित्र होता है। बहनो! वेद की आज्ञा का पालन करो। कपड़ा बुनने में यदि कष्ट या असुविधाएँ आगे आती हों तो कम से कम घरख़र्च के

* इस विषय में विस्तार पूर्वक देखना हो तो हमारी लिखी हुई "खादी का इतिहास" नामक पुस्तक "हिन्दी-साहित्य-मन्दिर" अजमेर से मँगा कर पढ़ो।

(लेखक)

ध्वनि भारत ही में नहीं, बल्कि सारे संसार में, गूँज उठी है। गृहस्थियो! अपना कर्त्तव्य पालन करो और चरखा चला कर अपनी उन्नति करो।

वेद के उक्त मंत्र में सूत को रँगने के लिए भी संकेत है। अर्थात् स्त्रियों को रंगसाज़ी भी आनी चाहिए। अपनी इच्छानुसार कपड़े को रंग चढ़ाने में प्रवीण होना चाहिए यही भाव इस वेद वचन में है। कपड़ा बनाते वक्त उसमें डिज़ाइन (Design) करने के लिए रँगे हुए सूत की आवश्यकता होती है। धोती की किनारें बनाने के लिए चौखाना तैयार करने के लिए रँगे सूत की पहले जरूरत है। इसलिए सूत रँगना भी आना चाहिए। तात्पर्य यह है कि मनुष्य को परमुखापेक्षी न रह कर स्वावलम्बी बन जाना चाहिए।

अब इस मंत्र पर विचार करना चाहिए—

ऋतायिनी मायिनी संदधाते मित्वा। शिशुं जज्ञतुर्वर्धयन्ती।
विश्वस्य नाभिं चरतो ध्रुवस्य कवेश्चित् तन्तुं मनसा वियन्तः॥
(ऋग्वेद)

"सरल स्वभाव से युक्त दो स्त्रियाँ, जिन्होंने संतान को उत्पन्न किया है अपनी अपनी संतानों का पालन करती हुई कवि की तरह मनःशक्ति के साथ कपड़ा बुनती हैं और प्रमाण सहित जोड़ती भी हैं।" इससे यह सिद्ध होता है कि केवल चरखा कात कर सूत निकाल देना ही, स्त्रियों का कार्य नहीं है, बल्कि उन्हें कपड़ा बुनना चाहिए। ठाली-बैठी स्त्रियाँ ही नहीं, बल्कि बाल बच्चे वाली स्त्रियाँ भी कपड़ा बुनें। एक प्रकार से वेद ने इस को स्त्रियों के लिए अनिवार्य सा कह दिया है। वेद का अभिप्राय है कि भले ही स्त्रियाँ बच्चे वाली हों, परन्तु वस्त्र अवश्य बुना करें। स्त्रियों के लिए वस्त्र बुनना एक जरूरी काम है। यहाँ प्रश्न यह होता है कि "जब हमें सहज ही बिना श्रम के सस्ते दामों में कपड़ा मिल जाता है तो फिर चरखा चला कर सिर दर्द मोल ही क्यों लिया

जाय ?" इसका उत्तर यदि विस्तार पूर्वक लिखने बैठें तो, विषयान्तर हो जाने का भय है। हम यहाँ केवल यही कह देना काफ़ी समझते हैं कि, "हमारा कल्याण वेद की आज्ञा मानने में ही है और विरुद्धाचरण में नाश।" * इस विषय में वर्त्तमान समय प्रमाण रूप है।

पहले समय में पत्नी का फ़र्ज़ था कि वह अपने पति के लिए आवश्यकीय कपड़ा बुन कर तय्यार करे। यह मंत्र देखिए—

ये अन्तायावतीः सिचो य ओतवो ये च तन्तवः।
वासो यत्पत्नीभिरुतन्नयोनसुपस्पृशात् ॥

(अथर्व)

अर्थात्—"ये जो कपड़े के अन्तिम भाग में किनारियाँ हैं, जिनका ताना वाना पत्नियों के द्वारा पूरा गया था, वह वस्त्र हमें (पुरुषों को) सुखदायक हों।" माता भी अपनी संतान के लिए कपड़ा बुने—

वितन्वते धियो अस्मा अपांसि वस्त्रापुत्राय मातरो वयन्ति ॥

(ऋग्वेद)

अर्थात्—"माताएँ अपने पुत्रों के लिए कपड़ा बुनती हैं।" इत्यादि वैदिक प्रमाणों से सिद्ध होता है कि, स्त्रियों का यह काम है कि वे गृह-कार्य से फ़ुरसत पाने पर रुई निकालें, उसे धुनें, कातें और फिर उससे ताना पूर कर अपने घरखर्च के लायक कपड़ा तय्यार करें। अपने घर में तय्यार किया हुआ कपड़ा, सस्ता, मज़बूत, सुन्दर, इच्छानुसार, पवित्र होता है। बहनो! वेद की आज्ञा का पालन करो। कपड़ा बुनने में यदि कष्ट या असुविधाएँ आगे आती हों तो कम से कम घरखर्च के

* इस विषय में विस्तार पूर्वक देखना हो तो हमारी लिखी हुई "खादी का इतिहास" नामक पुस्तक "हिन्दी-साहित्य-मन्दिर" अजमेर से मंगा कर पढ़ो। (लेखक)

लायक सूत तो अपने घर में ही कात लिया करो। उस सूत को किसी कपड़े बुनने वाले को देकर वस्त्र तय्यार करा लिया करो। इस तरह करके भी तुम किसी अंश में वेद की आज्ञा पालन करने वाली कही जा सकती हो। राष्ट्र की परिस्थिति तुम्हें इस कार्य के लिए प्रेरित कर रही है और इधर तुम्हें वेद उपदेश दे रहा है कि, "बाल बच्चों से फ़ुरसत निकाल कर कपड़े बुनने का धन्धा जरूर ही करो। पुरुषों से भी इसमें सहायता लो। क्योंकि वेद में पुरुषों को भी कपड़े बुनने की आज्ञा है।" देखिए—

"इमे वयन्ति पितरः।" (ऋग्वेद)

अर्थात्—"ये पिता कपड़ा बुनते हैं।" स्त्री पुरुषों को मिल कर कपड़े बुनने के कार्य को अच्छी तरह करना चाहिए। मुझे आशा है कि बहनें अब चर्खा कातने से दिल को न चुराया करेंगी।

---

(२६) पुरुषों से श्रेष्ठ

"ॐ उतत्वा स्त्री शशीयसी पुंसो भवति वस्यसी।
अदेवत्रादराधसः॥" (ऋग्वेद ५।६१।६)

(उत) और (त्वा) बहुत सी स्त्रियाँ (पुंसः) उस पुरुष से (भवति वस्यसी) प्रशंसनीय हैं, जो पुरुष (अदेवत्रात्) देवार्चन आदि शुभ कर्मों से रहित तथा (अराधसः) ईश्वर की आराधना, पूजापाठ, संध्योपासना प्रभृति क्रिया से हीन है।

(१) उस पुरुष से, जो धर्म कर्महीन है, वे स्त्रियाँ श्रेष्ठ हैं जो पतिभक्ति परायणा होती हैं। इस मंत्र में पातिव्रत धर्म की महत्ता दिखाई गई है। इस विषय पर हम इसी पुस्तक में पीछे बहुत

कुछ लिख आये हैं। पत्नी का अपने पति के प्रति क्या कर्त्तव्य है, यह हम यहाँ जनकनन्दिनी महारानी सीतादेवी के वचनों में बतला देना चाहते हैं—

न पिता नात्मजो चात्मा न माता न सखीजनः।
इह प्रेत्य च नारीणां पतिरेको गतिः सदा॥
यदि त्वं प्रस्थितो दुर्गं वनमद्यैव राघव।
अग्रतस्ते गमिष्यामि मृद्नन्ती कुशकण्टकान्॥
प्रासादाग्रे विमानैर्वा वैहायसगतेन वा।
सर्वावस्थागता भर्त्तुः पादच्छाया विशिष्यते॥
अनुशिष्टास्मि मात्रा च पित्रा च विविधाश्रयम्।
नास्मि संप्रति वक्तव्या वर्तितव्यं यथा मया॥
(वाल्मीकि)

श्री रामचन्द्रजी को वन जाने के लिए तय्यार देखकर श्रीसीतादेवी उनके चरणों में पड़ कर कहती हैं—"नाथ! स्त्री के लिए संसार में सिवाय पति के दूसरे लोग जैसे, माता पिता, पुत्र, सखी आदि गति नहीं हैं। यदि आप दुर्गम वन के लिए जाते हैं, तो मैं आपके आगे-आगे कुशाओं और काँटों को हटाती हुई चलूँगी। महलों की चोटी पर या आकाश मार्ग में विमान द्वारा ऊपर चढ़कर भी स्त्री को अपने पति की पाद छाया ही उत्तम होती है। मुझे मेरे माता पिता ने इस विषय में खूब शिक्षा दी है—जैसा मुझे आपके साथ व्यवहार करना चाहिए, वह मुझे कहने की जरूरत नहीं बल्कि कर दिखाने की है।

सुखं वने निवत्स्यामि यथैव भवने पितुः।
अचिंतयन्ती त्रींल्लोकांश्चिंतयन्ती पतिव्रतम्॥
× × × ×
अग्रतस्ते गमिष्यामि भोक्ष्ये भुक्तवति त्वयि।
× × × ×

स्वर्गेऽपि च विना वासो भविता यदि राघव।
त्वया विना नरव्याघ्र नाहं तदपि रोचये॥

प्राणनाथ! मैं वन में इस प्रकार सुखी रहूँगी जैसे कन्याएँ पिता के घर सुखी रहती हैं। मुझे पातिव्रत धर्म के आगे तीनों लोकों की भी परवाह नहीं मैं आपके आगे आगे चलूँगी और आपको खिलाने के बाद खाऊँगी। हे राघव! यदि आपके बिना मुझे स्वर्ग भी मिलता हो तो मैं उसे नहीं चाहती।

अपने पति के प्रति कहे हुए सीताजी के वचनों पर विचार करने से पातिव्रत धर्म सहज ही समझ में आ सकता है। "पतिव्रत" शब्द की सीधी सादी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है—"जो स्त्री अपने पति के सिवाय दूसरे पुरुष से अलग रहती हो, जो अपने पति को ही अपना जीवन-सर्वस्व तथा देवाधिदेव मानती हो, जो पति की आज्ञानुवर्त्तिनी बनकर रात दिन सेवा में रहती हो; जो पति से कभी कटु वचन न बोलती हो, और पति के सुख में सुखी और उसके दुख में दुखी रहती हो वह स्त्री पतिव्रता है" वेद कहता है कि पतिव्रता स्त्रियाँ श्रेष्ठ, पूज्य एवं आदरणीय होती हैं। पतिव्रता स्त्रियाँ धर्म कर्महीन पुरुषों से करोड़ गुणा अच्छी हैं। स्त्रियों को उचित है कि वे पतिव्रत रूपी आभूषण को धारण कर कीर्त्ति और यश प्राप्त करें।

यहीं पर इस मंत्र का भी विचार करलेना ठीक है।

विया जानाति जसुरिं वितृष्यन्तम् विकामिनम्।
देवत्रा कृणुते मनः॥   (ऋग्वेद ५।६१।७)

"जो पतिव्रता स्त्रियाँ दरिद्रता से व्यथित को अच्छे प्रकार जानती हैं, जो प्यासे को पहचानती हैं। धन के इच्छुक को जान लेती हैं और जो माता पिता गुरु आचार्य तथा अन्यान्य पूज्यजनों में मन लगाती हैं, वे स्त्रियाँ पुरुषों से श्रेष्ठ हैं"।

जो व्यक्ति दरिद्रता के पंजे में बुरी तरह फँसा हो और जिसे अपना जीवन भार बन गया हो, ऐसे मनुष्य को पहचान कर उसे यथाशक्ति सहायता पहुँचानी चाहिए। यह बड़े ही पुण्य का कार्य है। श्री कृष्णजी ने श्रीमुख से कहा थाः—

"दरिद्रान् भर कौन्तेय !"

अर्थात्-"हे अर्जुन! दरिद्रों के दारिद्रय को मिटाओ"। दरिद्रावस्था को पहचान कर जो स्त्री यथाशक्ति उसे मदद देती है, वह पुरुषों से श्रेष्ठ है। आजकल लाखों मनुष्य अपने को दरिद्री और असमर्थ बताकर भीख से पेट भरते हैं। हमारे भाई बहन उन्हें दयार्द्र होकर "दान" देते हैं। हमारी इस नासमझी से देश में भिक्षुकों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ रही है-सारा देश भिक्षुकों से पूर्ण हो गया। दूसरे देशों में जहाँ एक भी भिक्षुक नहीं दिखाई देता वहाँ भारत में ६० लाख हैं। मैं कह सकता हूँ कि इस संख्या की वृद्धि का दोष हमारे सिर पर है। हम पात्रापात्र का कुछ भी ध्यान न रखकर दान करते हैं। कुपात्र को दिया हुआ दान "कुदान" हो जाता है, और दाता को नरक जाना पड़ता है। जिन्हें वेद ने दरिद्र कह कर दान देना बताया है, वे भिक्षुक न होंगे। भिक्षुक तो आजकल खूब धन सम्पन्न हैं। यदि दरिद्रों को ढूँढ़कर उन्हें कुछ देना हो तो, तुम्हारे गाँव में ही, क्या, तुम्हारे मुहल्ले में ही, कई दरिद्र मिल जायँगे, जो चुपचाप बैठे फ़ाक़ाकशी कररहे होंगे। बहनो! उन्हें दो। अपनी मुट्ठी उनके लिए खोलो। चुपचाप उनकी मदद करो। उनकी इज़्ज़त बचाओ। यह बात तुम्हें वेद बताता है।

जो प्यासे को पानी पिलाना अपना कर्त्तव्य समझती हैं। जो भूखे को भोजन देना अपना धर्म समझती हैं वे स्त्रियाँ पुरुषों से भी उच्च मानी गई हैं। स्त्रियों का हृदय दयापूर्ण होना चाहिए। दुखियों की सहायता के लिए यथासंभव प्रयत्न करना चाहिए। प्यास से पीड़ित प्राणी को जल

पिला देना चाहिए। भूख से छट पटाते हुए को कुछ खाने को देना चाहिए। हिन्दूशास्त्रों में लिखा है:—

वेदपूर्णमुखं विप्रं सुभुक्तमपि भोजयेत्।
न च मूर्खं निराहारं षड्रात्रमुपवासिनम्॥

इस श्लोक में यह दिखाया गया है कि अन्न जल दान करते वक्त पात्र और कुपात्र का ध्यान अवश्य रक्खो। यदि कुपात्रों को दान मिलने लग जायगा, तो देश में दुष्ट पुरुषों की संख्या बढ़ जायगी। मूर्ख लोग गुलछर्रे उड़ावेंगे और विद्वान् भूखे मर जायँगे। इस तरह अपूज्यों की पूजा होने लगेगी और पूज्य लोग जहाँ तहाँ ठुकराये जायँगे। शास्त्र कहते हैं-

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूजार्हा च व्यतिक्रमम्।
त्रीणि तत्र हि जायन्ते दुर्भिक्षं मरणं भयम्॥

जिस देश में अपूज्यों का आदर और पूज्यों का अनादर होता है, वहाँ दुर्भिक्ष, मरी और भय ये तीन बातें उत्पन्न हो जाती हैं। जब से भारत में मूर्खों को दान-भिक्षा और आदर मिलने लगा, तभी से दुर्भिक्ष, हैजा, प्लेग इन्फ्लुएंजा आदि रोग और अनेक प्रकार के भय प्रबल हो गये हैं। बहनो! विचार कर दान करो। भूखों प्यासों को पहले खूब पहचान लो बाद में दान करो। उनके रोने झींकने पर जल्दी ही दयार्द्र न हो जाओ। मँगतों ने रो-पीटकर तथा करुण स्वर से माँगने का ढंग सीख लिया है, वास्तव में वे इतने दुखी नहीं होते हैं। मूर्ख लोग यदि भूख से मर भी जायँ तो परवा न करो, क्योंकि उनके मर जाने से देश को कुछ भी नुकसान न होगा, बल्कि लाभ होगा पृथ्वी का भार कुछ कम होगा। आशा है अब बहनें दान करते वक्त अन्न जल भूखे प्यासों को देने के पूर्व अच्छी तरह सोच विचार लिया करेंगी।

स्त्रियों को उचित है कि अपने माता पिता भाई-बहन, सास-ससुर,

जेठ-जेठानी, आदि पूज्य पुरुषों का हमेशा सम्मान करें। स्वप्न में भी उनका अनादर तुम्हारी ओर से न होने पाये। सच्चे साधुओं की सेवा में सर्वदा दत्तचित्त रहा करो। आजकल जो साधु वेशधारी धूर्त लोग मारे मारे फिरते हैं और लोगों को कुछ विचित्र चमत्कार दिखा दिखाकर उल्टा सीधा करते हैं—स्त्रियों को उनसे बचते रहना चाहिए। सच्चे महात्माओं को पहचानना सीखना चाहिए। आजकल साधु वेश में भले और बुरे सभी तरह के मनुष्य मौजूद हैं। जिन महापुरुषों का तुम नाम सुना करती हो, उन्हें ही साधु समझो और उन पर विश्वास करो। घूमते-फिरते अन-जान मनुष्यों को साधु समझ कर उनका आदर करने में खतरा है। "सीतादेवी को कपटी साधु रावण ने हरण कर महाकष्ट दिया था" इसको भूल मत जाओ।

देवता रूप जो मनुष्य हैं, जिन्होंने परमार्थ में अपना जीवन लगा दिया है; जो विद्वान् हैं, जिन्होंने इन्द्रियों पर अपना अधिकार जमा लिया है, उन्हें आदर की दृष्टि से देखो। परमात्मा की उपासना करो। नित्य संध्योपासना, अग्निहोत्र आदि यज्ञों को यथाविधि करो। स्त्रियों को संध्या हवन करने का अधिकार है। कुछ स्वार्थी लोगों ने तुम्हें इस पवित्र कार्य से वञ्चित रखने के लिए, मनमाने श्लोकों की रचना करके शास्त्रों में सम्मि-लित कर दिया है, उन पर ध्यान मत दो। हम आगे चलकर बतावेंगे कि स्त्रियों को यज्ञ आदि करने की आज्ञा वेद में है।

जो स्त्रियाँ अपने कर्त्तव्य का पालन करती हुई जीवदया, परोपकार, सेवा आदि पवित्र कार्यों में अपना जीवन व्यतीत करती हैं, वे पुरुषों से श्रेष्ठ हैं। आशा है इस श्रेष्ठता को आप अवश्य प्राप्त करने का प्रयत्न करेंगी।

(३०) यज्ञ करने की आज्ञा।

(१) ॐ या दम्पति समनसा सुनुत आ च धावतः।
देवासो नित्ययाऽऽशिरा ॥ (ऋग्वेद ८।३१।५)

(देवासः) हे विद्वान् पुरुषो ! (या दम्पति) जो पति-पत्नी, (समनसा सुनुतः) एक मन होकर यज्ञ करते हैं और (च आ धावतः) ईश्वर के पास पहुँचते हैं (नित्यया आशिरा) नित्य ईश्वर के आश्रय से सब काम करते हैं। वे सदा सुखी रहते हैं।

(२) ॐ प्रति प्राशव्यां इतः सम्यञ्चा बर्हिराशाते।
न ता वाजेषु वायतः ॥ (ऋग्वेद ८।३१।६)

(प्राशव्यान् प्रति इतः) वे दोनों नाना प्रकार के भोगों को पाते हैं जो (सम्यञ्चा बर्हिः आशाते) सदा सम्मिलित होकर यज्ञ करते हैं (तावाजेषु न वायतः) वे दोनों अन्न के लिए इधर-उधर नहीं भटकते।

जहाँ पर दोनों स्त्री-पुरुष मिल कर यज्ञ करते हैं, उस घर में अष्ट सिद्धियाँ और नौ निधियाँ हाथ जोड़े खड़ी रहती हैं। वे घर आनन्द और सुख से सदा पूर्ण रहते हैं। अन्न के भण्डार भरे रहते हैं—दानों के मुहताज़ नहीं होते। ऐश्वर्य की सुख सामग्रियाँ इच्छानुकूल प्राप्त होती रहती हैं।

जिमि सरिता सागर पहँ जाहीं—
यद्यपि ताहि कामना नाहीं॥
तिमि सुख-सम्पति बिनहिं बुलाये—
धर्मशील पै जाहिं पराये॥
(तुलसीदास)

इसी प्रकार जो दम्पति यज्ञशील होते हैं उनके घर में बिना ही बुलाये सुख और सम्पति पहुंच जाती है।

(३) ॐ न देवानामपि ह्नुतः सुमतिं न जुगुक्षतः ।
श्रवो बृहद् विवासतः ॥ (ऋग्वेद ८ । ३१ । ७)

(देवानां अपि ह्नुतः) जो स्त्री पुरुष विद्वानों के उपदेशों को तथा देव भागों को नहीं छिपाते (सुमतिं न जुगुक्षतः) जो अच्छी मति को गुप्त रखना नहीं चाहते (बृहत् श्रवः विवासतः) जो शुभ कर्मों द्वारा अपने यश को फैलाते हैं ।

(४) ॐ पुत्रिणा ता कुमारिणा विश्वमायुर्व्यश्नुत ।
उभा हिरण्यपेशसा । (ऋग्वेद ८ । ३१ । ८)

(ता) वे दोनों यज्ञकर्त्ता स्त्री-पुरुष (पुत्रिणा) संतान युक्त होते हैं (कुमारिणा) कुमार कुमारियों से युक्त रहते हैं (विश्वं आयुः व्यश्नुतः) पूर्णायु को भोगते हैं और (उभा हिरण्यपेशसा) और दोनों जगत् में निष्कलंक रह कर सदा सच्चरित्र रूपी सुवर्णालंकारों से शोभित रहते हैं ।

यज्ञ करने वाले स्त्री-पुरुषों के उत्तम संतानें उत्पन्न होती हैं । घर बाल-बच्चों से भरा रहता है । उस घर में रोग, शोक, भय, चिन्ता, क्लेश, कलह, उत्पात आदि दुष्ट बातें नहीं प्रवेश कर सकतीं । घर के लोग पूर्णायु को प्राप्त होते हैं । दोनों स्त्री-पुरुष पवित्र जीवन निर्वाह कर निष्कलंक रहते हैं । वे चाँदी सोने के जेवरों को पहन कर उतनी शोभा नहीं पाते हैं, जितनी सच्चरित्रता-रूपी अलंकारों द्वारा ।

(५) ॐ वीतिहोत्रा कृतद्वसू दशस्यन्ताऽमृताय कम् ।
समूधो रोमशं हतो देवेषु कृणुतो दुवः ॥
(ऋग्वेद ८ । ३१ । ९)

(वीतिहोत्रा) जिन दोनों को अग्निहोत्र कर्म प्रिय है (कृतद्वसू) जो धर्म रूप धनों से सम्पन्न हों (दशस्यन्ता) जो परम उदार दानी हों, ऐसे स्त्री-पुरुष (अमृताय कम्) अन्त में मोक्ष के योग्य होते हैं

विधवाओं की इस भयानक दुर्दशा को देख कर कौन ऐसा वज्र-हृदय होगा, जिसका हृदय करुणा से न पसीजेगा ? जब कि पुरुष विधुर होने पर मरते-मरते तक दूसरा विवाह कर सकता है तो क्या कारण है कि, विधवा कन्याओं का पुनर्विवाह न किया जाय ? जिन स्त्रियों ने यौवन काल में क़दम तक नहीं रक्खा था, उन्हें विधवा बना कर रोक रखना किस धर्मशास्त्र के अनुकूल है ? जिन नारकी माता पिता ने अपनी दुधमुँही बच्चियों को विधवा बना कर बैठा दिया है, वे क्या कह कर विधवा-विवाह का विरोध कर सकते हैं ? समाज के इस अन्याय से गुप्त व्यभिचार बढ़ गया है—भ्रूणहत्या के असह्य पाप से पृथ्वी डग मगा रही है। क्या इसी का नाम धर्म है ? क्या इस अन्यायपूर्ण कार्य को करके भी हिन्दू जाति अपनी पवित्रता कायम रख सकेगी ?

बहुतेरी स्त्रियाँ विधवा होने पर पति के साथ चिता में जल कर भस्म हो जाती थीं। बहुतेरी दुबारा विवाह करना बुरा समझती हैं। यह केवल व्यक्तिगत प्रेम का कारण कहा जासकता है। इसे सामाजिक या धार्मिक आज्ञा नहीं कही जा सकती। न्याय तो यह है कि पत्नी के मरने पर जिस प्रकार पुरुष दूसरा विवाह करने में स्वतंत्र माना जाता है, वही स्वतंत्रता स्त्रियों के लिए भी होनी चाहिए। पुरुष तो बालों पर खिज़ाब लगा कर और मुख में नकली दाँत बैठा कर भी कन्याओं का पाणिग्रहण कर लें और विधवा बच्चियाँ शादी करें तो धर्म की दुहाई के ढोल पीटे जायँ ? यह कहाँ का न्याय है ! पुरुषों ने क्या समझ रक्खा है कि, स्त्रियों को ईश्वर ने मूर्ख बनाया है, उन्हें भला बुरा और न्याय अन्याय का कुछ भी ज्ञान नहीं है ? क्या वे नहीं देख रही हैं कि पुरुष अनेक विवाह कर सकते हैं, और हमें कहा जाता है कि तुम ब्रह्मचारिणी रहो, संयम से रहो ? क्या कारण था कि प्राचीन काल में हमारे भारतीय बड़े बड़े तपस्वी, साधु, ऋषि लोग भी गृहस्थी बन कर रहते थे ? क्या वे

आजन्म संयम नहीं कर सकते थे ? गई गुज़री बातों को जाने दीजिए स्त्रियाँ पूछ सकती हैं कि, आजकल के पुरुष ही संयम से क्यों नहीं रहते ? एक स्त्री के मरते ही दूसरी को अपनी पत्नी बनाने का ढंग क्यों रचा जाता है ? स्त्रियों को पुरुषों से आठ गुणा अधिक काम होता है। वे ठाली बैठी रहती हैं। न उन्हें उच्च शिक्षा ही दी गई है, और न उनके सामने कोई उच्च आदर्श ही है, फिर भला वे कैसे संमय से रह सकती हैं ?

भारत में स्त्रियों की संख्या १५ करोड़ ४९ लाख है। स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों की संख्या ९० लाख अधिक है। १४ करोड़ के लगभग मनुष्य विवाहित हैं। इनमें आधे पुरुष अर्थात् ७ करोड़ पुरुष और ७ करोड़ स्त्रियाँ हैं। एक करोड़ से अधिक पुरुष रँडुए हैं और लगभग ३करोड़ विधवाएँ हैं। पुरुष कम रँडुए हैं और स्त्रियाँ अधिक राँड़ें हैं। इनमें से १५ हजार तो पाँच वर्ष से भी कम उम्र की बालिकाएँ विधवा हैं। एक लाख से अधिक लड़कियाँ ऐसी विधवाएँ हैं, जो ५ से १० वर्ष की उम्र में हैं !! चार लाख विधवाएँ अभी १५ वर्ष की उम्र से भी कम की हैं !!! इन सब संख्याओं से हमें अपनी दुर्दशा का बहुत कुछ ज्ञान हो जाता है। जरा हृदय को थाम कर इसे भी पढ़ लीजिए कि तीन करोड़ विधवाएँ लगभग ५० लाख बच्चे या तो अधूरा गर्भ गिरा कर या होते ही गला घोटकर गुप्त व्यभिचार के कारण मार डाले जाते हैं ! कैसा हृदय विदारक दृश्य है ? हिन्दुओं ने धर्म के नाम पर, यह पाप का वृक्ष अपने घर में ही लगा रक्खा है। लानतें सहते हैं इज़्ज़त किरकिरी कराते हैं, नाक कटवाते हैं, पाप पल्ले बाँधते हैं परन्तु विधवाओं के साथ दयालुता और उदारता का व्यवहार स्वप्न में भी नहीं करना चाहते। वेद कहता है कि विधवा का विवाह किया जा सकता है। यदि वेद की आज्ञानुसार विधवाओं का विवाह कर दिया जाय तो, हिन्दुओं ने जिन स्त्रियों को बट्टे खाते की रकम की तरह बैठा दिया है, उन ३ करोड़ विधवाओं का

कष्ट मिट सकता है। साथ ही स्त्री-हीन पुरुष जो व्यभिचार में गुप्त रूप से अपना जीवन बरबाद कर रहे हैं, गृहस्थी बनकर अपने जीवन को पवित्र कर सकते हैं।

जो स्त्रियाँ विधवा होकर भी ब्रह्मचर्य्य से रहना चाहें, वे धन्य हैं—उन्हें विवाह करने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु जो ब्रह्मचर्य पालन नहीं कर सकतीं, उन्हें अवश्य दूसरा विवाह कर लेना चाहिए। गुप्त व्यभिचार भयानक पाप है—इससे तो किसी के साथ विवाह करलेना ही अच्छा है। ऋग्वेद मं० १० सू० १८ मं० में लिखा है:—

उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं गतासुमेत मुप शेष एहि।
हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभि सं बभूथ॥

अर्थात्—"हे स्त्री! इस मृत पति की आशा छोड़। जीवित पुरुषों में से दूसरा प्राप्त कर। और समझले कि इस पुनः पाणिग्रहण करने वाले पति द्वारा जो पुत्र होगा, वह तेरा और इस पुरुष का कहलायेगा"। इस मंत्र से यह सिद्ध होता है कि जिस स्त्री के संतान न हो सकी हो, और उसका पति मर गया हो, उसे पुनर्विवाह करने की आज्ञा है। अर्थात् पुनर्विवाह संतान के लिए करना चाहिए, व्यभिचार के लिए नहीं। व्यभिचारार्थ पुनर्विवाह निंद्य कार्य है। यदि १६ वर्ष की उम्र स्त्री के विवाह की समझी जाय, तो उसके २० । २२ वर्ष की उम्र में संतान हो जानी चाहिए और इसी बीच में यदि वह विधवा हो गई हो तो अपत्योत्पादनार्थ दूसरा विवाह कर सकती है। तात्पर्य यह है कि २५ वर्ष तक की उम्र में विधवा होने वाली स्त्री, जिसके संतान पैदा न हुई हो,—दूसरा विवाह कर सकती है, ऐसा वेद कहता है।

यहाँ यह देखना कि विवाह के लिए स्मृतिकारों के क्या विचार हैं? याज्ञवल्क्य कहते हैं:—

अक्षताश्च क्षताश्चैव पुनर्भूः संस्कृता पुनः।
स्वैरिणी या पतिं हित्वा सवर्णंकामतः श्रयेत् ॥

अर्थात्—अक्षत योनि विधवा का पुनर्विवाह करना चाहिए जो विधवा बिना संस्कार के दूसरे को अपना पति बनाती है, वह स्वैरिणी है। व्याघ्रपाद के वचन देखिए—

पत्निनाशे यथा पुंसो भर्तृनाशे तथा स्त्रियः।
पुनर्विवाहः कर्त्तव्यः कलावपि युगे तथा ॥

अर्थात्—कलियुग में स्त्री के मरजाने के बाद जैसे पुरुष पुनर्विवाह कर लेते हैं; उसी प्रकार पुरुष के मरने पर स्त्री को भी पुनर्विवाह करलेना चाहिए। वैशंपायन ने कहा है:—

पुरुषाणामिव स्त्रीणां विवाहा बहवो मताः।
भर्तृनाशे पुनः स्त्रीणां पुंसां पत्नीलये यथा ॥

अर्थात्—पुरुषों के मरने पर स्त्रियों के अनेक विवाह हो सकते हैं। जैसे स्त्री के मरजाने पर पुरुष दूसरा विवाह कर सकता है, वैसे ही स्त्री भी पुरुष के मरने पर पुनर्विवाह कर सकती है। जाबालि की सम्मति है कि:—

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्राः स्वकुलयोषिताम्।
पुनर्विवाहं कुर्वीरन्नन्यथा पाप संभवः ॥

अर्थ—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की विधवा स्त्रियों का पुनर्विवाह कर देना चाहिए, नहीं तो पाप होने की संभावना है। महर्षि आपस्यजी आज्ञा देते हैं:—

भर्त्रभावे वयःस्त्रीणां पुनः परिणयो मतः ।
न तत्र पापं नारीणामन्यथा तद्गतिर्नहि ॥

अर्थ—पति के मर जाने पर युवती स्त्रियों का विवाह दूसरे पुरुष के साथ करदेना चाहिए । इसमें कोई पाप नहीं है । स्त्रियों के लिए सिवाय इसके कोई उपाय ही नहीं है । पाराशर ने कहा है कि:—

नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीवे च पतिते पतौ ।
पंचस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते ॥

अर्थात्—पति के लापता हो जाने पर, मर जाने पर, संन्यासी हो जाने पर, नपुंसक मालूम होने पर, और मुसलमान या ईसाई बन जाने पर, स्त्रियों को दूसरा विवाह कर लेना चाहिए ।

ये केवल प्रमाण ही प्रमाण नहीं है; बल्कि हिन्दू-इतिहास में सैकड़ों उदाहरण भी हैं । महाभारत और रामायण के पाठकों को ऐसे अनेक उदाहरण मिले होंगे जिनमें शास्त्रों के उपरोक्त वचनों का पालन किया गया हो । तात्पर्य यह है कि "विवाह संस्कार संतान पैदा करने के लिए किया जाता है । यदि इस उद्देश्य में किसी प्रकार की बाधा हो तो उसे हटाना चाहिए । संतान अवश्य पैदा करनी चाहिए । यदि संतान पैदा होने के पूर्व ही स्त्री या पुरुष दोनों में से कोई एक मर जाय, तो फिर वह संतान पैदा करने के लिए पुनर्विवाह करले तो कोई हानि नहीं" । यही इच्छा हमारे शास्त्रों की है । अब विधवा-विवाह विषयक अथर्ववेद के इन मंत्रों पर भी विचार कीजिये

या पूर्वं पतिं वित्त्वाथान्यं विन्दते परम् ।
पञ्चौदनं च तावजं ददातो न वियोषतः ॥
॥ ९ । ५ । २७ ॥

समानलोको भवति पुनर्भुवापरः पतिः।
योऽजं पञ्चौदनं-दक्षिणाज्योतिषं ददाति ॥

९।५।२८ ॥

अर्थ— जो स्त्री पहले पति को पाकर उसके बाद दूसरे को प्राप्त होती है। वे दोनों निश्चय ही ईश्वर को समर्पण करें। वे दोनों अलग न हों। दूसरा पति दूसरी वार विवाहित स्त्री के साथ एक स्थान वाला होता है। जो परमात्मा को समर्पण करता है।

इसी प्रकार के मंत्र वेद में अनेक स्थान पर आये हैं हमने यहाँ पर उन्हीं मंत्रों को लिखा है, जो सहज ही समझ में आजाने वाले हैं। अथर्ववेद काण्ड १८ सूक्त ३ के मंत्र १, २, ३, और ४ इसी सम्बन्ध में अधिक विचारणीय हैं। ऋग्वेद मण्डल दसवाँ सूक्त १८ और मंत्र ८ और १८, तथा मं० १० सूक्त ४० मंत्र दो भी हमारे विषय के पोषक हैं। तैत्तिरीय आरण्यक ६—१—१४ में भी विधवाविवाह के पक्ष में लिखा हुआ है। स्त्रियों को उचित है कि वे स्वयं अपने कर्त्तव्य का निर्णय करें। यह विषय एक ऐसा महत्त्वपूर्ण तथा जटिल है कि जिस पर हम अपनी ओर से बहनों को कुछ कहना ठीक नहीं समझते। हमने वेद के मंत्रों को तुम्हारे विचार के लिए उपस्थित कर दिया है, इन पर विचार करो और अपनी उन्नति करो।

अन्त में मैं अपनी बहनों से यही प्रार्थना करता हूं कि वेदानुकूल आचरण कर अपने जीवन को पवित्र एवं उच्च बनाओ। वेदों को पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना चाहिए। इसी में तुम्हारा कल्याण है। वेद में स्त्री-पुरुष के लिए कहीं भी पक्षपात नहीं है—समता का अधिकार है। इसलिए वेदों का स्वाध्याय करना चाहिए और जो कुछ भी उनमें उपदेश हैं, तद-

नुकूल आचरण कर अपना नारी जीवन सार्थक करना चाहिए। वेदा-नुकूल वचनों को ही सत्य मानना चाहिए और वेदविरुद्ध विधानों पर विश्वास नहीं लाना चाहिए। इसी में तुम्हारा भला है। मङ्गलमय परमात्मा तुम्हें सुबुद्धि दें और सुमार्ग दिखलायें।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

* समाप्त *